दूरस्थ एवं ऑनलाइन शिक्षा केन्द्र

CENTRE FOR DISTANCE & ONLINE EDUCATION

जम्मू विश्वविद्यालय

UNIVERSITY OF JAMMU

जम्मू

JAMMU

स्व-शिक्षण सामग्री

SELF LEARNING MATERIAL

एम. ए. हिन्दी

M. A. HINDI

SESSION – 2025 ONWARDS

सत्र- दूसरा	**पाश्चात्य काव्यशास्त्र**	**कोर्स कोड- HIN-201**
Semester- II		**COURSE CODE- HIN-201**
इकाई- 1 से 4 तक	**CREDITS- 6**	**आलेख संख्या- 1 से 20 तक**
UNIT- I-IV		**LESSON NO.- 1-20**

PROF. ANJU SHARMA
Course Co-Ordinator

DR. POOJA SHARMA
Teacher Incharge

इस पाठ्य सामग्री का रचना स्वत्व/प्रकाशनाधिकार दूरस्थ एवं ऑनलाइन शिक्षा केन्द्र, जम्मू विश्वविद्यालय, जम्मू-180006 के पास सुरक्षित है।

http:/www.distanceeducation.in

Printed and published on behalf of the Centre for Distance & Online Education, University of Jammu, Jammu by the Director, CDOE, University of Jammu, Jammu

M.A. HINDI	CREDITS: 6	C.No. HIN-201

COURSE CONTRIBUTORS

1	**Prof. O. P. Gupta** Retd. Professor Dept. of Hindi University of Jammu.	**Lesson No. 1, 2, 3, 4, 7, 8, 12, 13, 15**
2	**Prof. Raj Kumar** Retd Professor Dept. of Hindi University of Jammu.	**Lesson No. 17**
3	**Dr. Sunita Sharma** Sr. Asstt. Professor Dept. of Hindi Guru Nanak Dev University Amritsar	**Lesson No. 5, 16, 18, 19**
4	**Dr. Sunil Kumar** Asstt. Professor Dept. of Hindi Guru Nanak Dev University Amritsar	**Lesson No. 14**
5	**Dr. Usha Lal** Associate Professor Dept. of Hindi D.V.V. Women College Karnal	**Lesson No. 6, 9, 10, 11**
6	**Prof Anju Sharma** Professor of Hindi,CDOE	**Lesson No. 20**

Course Co-ordinator — **Teacher Incharge**

Prof. Anju Sharma, CDOE — **Dr. Pooja Sharma, CDOE**

REVIEW, EDITING AND PROOF READING

Prof Anju Sharma

Coordinator, PG Hindi

CDOE, University of Jammu

* All rights reserve. No Part of this work may be reproduced in any form, by mimeograph or any other means, without permission in writing from the CDOE, University of Jammu.
* The Script writer shall be responsible for the lesson / script submitted to the CDOE and any plagiarism shall be his/her entire responsbility.

संदेश

दूसरे सत्र में आपका स्वागत है !

एम.ए हिंदी के दूसरे सत्र में आपका स्वागत करते हुए मुझे हार्दिक प्रसन्नता हो रही है। जब आपने एम.ए हिंदी कोर्स के लिए नामांकन कराया था, तब हमने साथ मिलकर अपनी यात्रा शुरू की । एम.ए हिंदी में अच्छे अंक लाने के लिए कड़ी मेहनत करें और आंतरिक मूल्यांकन अर्थात असाइनमेंट तैयार करने के लिए थोड़ा अतिरिक्त प्रयास करें। असाइनमेंट बनाते हुए यह ध्यान में रखे कि यह अंक आपके हाथ में हैं। जितनी मेहनत बाहरी परीक्षा के लिए करनी है उतनी ही मेहनत आंतरिक मूल्यांकन अर्थात असाइनमेंट बनाने में करें।

आपको सलाह दी जाती है कि आप नियमित रूप से दूरस्थ एवं ऑनलाइन शिक्षा केंद्र के पुस्तकालय में जाएँ और नोट्स बनाने के लिए उपलब्ध पुस्तकों का अधिक से अधिक अध्ययन करें। आप अपनी NET/JRF/SET/SLET या हिंदी से संबधित किसी भी प्रति योगी परीक्षा के लिए भी एक साथ तैयारी कर सकते हैं और कोर्स कोड: HIN-201 की अध्ययन सामग्री आपके पाठ्यक्रम और NET/SET की तैयारी को ध्यान में रखते हुए तैयार की गई है। कड़ी मेहनत करें।

शुभकामना सहित

प्रोफेसर अंजू शर्मा

पाठ्यक्रम समन्वयक

विषय सूची

आलेख संख्या	शीर्षक	पृष्ठ संख्या
	इकाई-एक	
1.	प्लेटो का अनुकरण सिद्धान्त	01-13
2.	अरस्तू का अनुकरण सिद्धान्त	14-23
3.	अरस्तू का विरेचन सिद्धांत	24-29
4.	लोंजाइनस: उदात्त सिद्धान्त	30-35
	इकाई-दो	
5.	ड्राइडन-त्रासदी की अवधारणा	36-51
6.	मैथ्यू अर्नाल्ड: कविता-जीवन की आलोचना	52-61
7.	वर्ड्सवर्थ: काव्य-भाषा	62-75
8.	सैमुअल टेलर कॉलेरिज : कल्पना की अवधारणा	76-88
	इकाई-तीन	
9.	टी. एस. इलियट: परम्परा और निर्वैयक्तिकता, वस्तुनिष्ठ संबध	89-103
10.	टी.एस. इलियट- काव्य प्रयोजन और काव्य नैतिकता	104-112
11.	आई.एस. रिचर्डस-सम्प्रेषण का सिद्धान्त	113-124
12.	आई.एस. रिचर्डस- संवेगों का सतुलन	125-136
13.	क्रोचे का अभिव्यंजनावाद	137-143
	इकाई-चार	
14.	अस्तित्ववाद	144-151
15.	मनोविश्लेषणवाद	152-159
16.	यथार्थवाद	160-169
17.	उत्तर आधुनिकता	170-177

18. संरचनावाद 178-187

19. संरचनावाद: सॉस्यूर एवं रोलॉ बार्थ की प्रमुख स्थापनाएँ 188-201

नोट-पाठ्यक्रम पर आधारित अतिरिक्त प्रश्न

20. पाश्चात्य काव्यशास्त्र के सम्पूर्ण पाठ्यक्रम पर आधारित प्रश्न 202-212

प्लेटो का अनुकरण सिद्धान्त

रूपरेखा

1.1 उद्देश्य एवं अपेक्षित परिणाम
1.2 प्रस्तावना
1.3 प्लेटो का अनुकरण सिद्धान्त
स्व-मूल्यांकन (क)
1.4 प्लेटो: काव्य सत्य
स्व-मूल्यांकन (ख)
1.5 प्लेटा: प्रेरणा का सिद्धान्त
स्व-मूल्यांकन (ग)
1.6 सारांश
1.7 कठिन शब्द
1.8 अश्यासार्थ प्रश्न
1.9 उत्तर कुंजी
1.10 पठनीय पुस्तकें

1.1 उद्देश्य एवं अपेक्षित परिणाम

प्रिय विद्यार्थियो! प्रस्तुत आलेख का उद्देश्य आपको

- प्लेटो के अनुकरण सिद्धान्त के विषय में जानकारी देना।
- प्लेटो के काव्य-सत्य संबंधी विचारों से अवगत करवाना।
- प्लेटो के प्रेरणा सिद्धान्त की जानकारी देना।

इस पाठ का विस्तृत अध्ययन करने के पश्चात् आप प्लेटो के अनुकरण सिद्धान्त को समझ सकेंगे इसके साथ ही प्लेटो के काव्य-सत्य तथा प्रेरणा सिद्धान्त को पूर्ण रूप से समझने में सक्षम होंगे।

1.2 प्रस्तावना:

प्लेटो के मत से मूल सत्य 'प्रत्यय' है। उस सत्य प्रत्यय का अनुकरण प्रकृति है और उस प्रकृति का अनुकरण कलाकृति अथवा कविता में प्रकट होता है। जो अंतर सत्य

और असत्य के बीच है, ज्ञान और धारणा के बीच है वही अस्तित्व और आभास के बीच है। कला का स्वभाव अनुकरणात्मक है अर्थात् असत्यमूलक है। अनुकरण का अनुकरण होने के कारण कविता सत्य से तीन गुना दूर हो जाती है।

1.3 प्लेटो का अनुकरण सिद्धान्त:

प्लेटो के काव्य और कला-सम्बन्धी सिद्धान्त को समझने के लिए उसका पलंग (BED) का उदाहरण हमारी काफी सहायता करता है। हम जब एक पलंग बनवाना चाहें, तो एक 'आदर्श' चित्र हमारे विचार (Idea), ख्याल या कल्पना में होता है। फिर एक चित्र वह बनता है जिसे चित्रकार उकेरता है और जिसके आधार पर बढ़ई पलंग तैयार करता है। सत्य या आदर्श तो व्यक्ति के विचार या आइडिया में है। इसलिए जिस वस्तु की रचना बढ़ई ने की है, वह विचार में अवस्थित कृति से तीन सोपान दूर है। प्लेटो यह मान कर चला कि ईश्वरीय या प्राकृतिक सत्य का चित्र नई रचनात्मक कृति नहीं है, यह तो सत्य की अनुकृति है। चित्रकार या कवि द्वारा प्रस्तुत गुलाब का चित्र प्राकृतिक पुष्प की अनुकृति है यह वास्तव में पर-कृति या दूसरे की कृति है जो सत्य नहीं है।

All art imitates nature.... and
Is thrice removed from reality

प्लेटो के अनुसार आदर्श तो विचार या प्रत्यय (Idea) में स्थित है। इस प्रकार कलाकार उस आदर्श की अनुकृति प्रस्तुत करता है जो विचार (Idea) में अवस्थित होता है। कलाकार सत्य का ही अनुकरण नहीं करता, वह तो अनुकरण का भी अनुकरण प्रस्तुत करता है। इसीलिए कलाकार और कवि सत्य से तीन, सोपान दूर होते हैं। अंग्रेजी शब्द 'आइडिया' से बने 'आइडियल' से बात अधिक स्पष्ट हो जाती है। आइडियल या आदर्श विचार का विषय है।

ईश्वर और सत्य एक ही तत्त्व के दो नाम थे इन दार्शनिकों की मुख्य स्थापना यही थी कि ईश्वर या सत्य एक है, उसके अनेक रूप नहीं हो सकते।

तत्कालीन काव्यों और नाटकों में ऐसी कथाओं की भरमार थी जिनमें विविध देवता परस्पर ईर्ष्या, द्वेष जैसी दुर्भावनाओं से ग्रस्त रहते तथा मनुष्यों से भी छद्म पूर्ण व्यवहार करते थे। सत्य पर अडिग विश्वास रखने वाले इन दार्शनिकों ने बहुदेववाद पर शंकाएं उठाई तथा इस प्रकार के साहित्य की भर्त्सना की। ऐथन्स-निवासी प्लेटो ने दार्शनिक चिन्तन को प्रधानता देने वाले अपने नगर की स्पार्टा के बलशाली एवं युद्ध कुशल नागरिकों के हाथों पराजय का अनुभव किया था इसलिए वह यह सोचने को बाध्य

हो गया कि 'ऐथन्स के समाज में मूलभूत निर्बलता का कारण क्या है।'' प्लेटो की आठ प्रसिद्ध कृतियों में 'रिपब्लिक' की चर्चा सर्वाधिक होती है।

प्लेटो कला और कविता के आलोचक की अपेक्षा एक राजनीतिज्ञ था।

वास्तव में प्लेटो का मुख्य उद्देश्य एक आदर्श राज्य की स्थापना करना था, जिसे चित्रकार रंगों द्वारा निर्मित करता है, कवि शब्दों द्वारा। यह चित्र कलाकार या कवि द्वारा अनुभूत एक फूल की अनुभूति है जब कि सर्वश्रेष्ठ या आदर्श फूल तो कहीं विचार या आइडिया में रहा करता है।

कलाकार और कवि प्रकृति की अनुकृति या नकल किया करते हैं इसलिए उनकी रचना को 'सत्य' नहीं माना जा सकता । वास्तविक सत्य तो ईश्वरीय है। कलाकार और कवि अपनी कल्पना द्वारा ऐसा निर्माण करते हैं जो मूल सत्य से बहुत दूर होता है।

इस प्रकार प्लेटो कविकल्पना को कवि की विशिष्ट प्रतिभा भा ना मानकर ऐसी कुवृत्ति के रूप में देखता है जो कवि को असत्य चित्रण के लिए प्रेरित करती है तथा मनुष्यों में कुकर्म को प्रोत्साहित करती है। इसी कल्पना के सहारे कवि ऐसी कृति की रचना करते हैं जो असत्य होती है, अशुभ भी। दूसरे शब्दों में वह कविता को 'सत्य' नहीं मानता। वह कलाकृति को सृजनात्मक कृति न मान कर कवि को मात्र अनुकरण कर्ता या नकलची करार देता है। जब प्लेटो से पूछा जाता कि होमर जैसे कवियों का दोष क्या है, तो प्लेटो अपने विषयों से कहता है ''हमारा'' (सुकरात और उसके विषयों या सहधर्मियों का) उद्देश्य एक आदर्श राज्य का निर्माण करना है। साहित्य की आलोचना या उसकी रचना से हमें कुछ लेना-देना नहीं है। होमर एक महानतम कवि हो सकता है किन्तु हम उसे अपनी रिपब्लिक में कोई स्थान नहीं देंगे।''

''आखिर इन लेखकों का दोष क्या है? प्लेटो प्रखर स्वर में उत्तार देता है-वे झूठ कहते हैं और यही नहीं; वे एक बुरा झूठ कहते हैं। झूठ तो इस कारण कि वे जो कुछ कहते हैं, वह वास्तविक नहीं होता । वह काल्पनिक होता है, सत्य की अनुकृति होता है। 'बुरा' इसलिए कि उनके लेखन का बच्चों और युवाओं के चरित्र पर बुरा प्रभाव पड़ता है।

प्लेटो को अपने राज्य या रिपब्लिक के लिए जिस प्रकार के साहित्य की आवश्यकता है, उसी को वह शुभ स्वीकार करता है। क्या इन सभी लेखकों का सारा साहित्य बहिष्कृत माना जाएगा? प्लेटो इस प्रश्न का उत्तार न भी देता हुआ अपनी बात स्पष्ट करता है। वह साहित्य की परख के लिए उपयुक्त जाँच कर्ताओं की नियुक्ति करना चाहता है। इनकी रचनाओं के ऐसे अंश जिनमें सत्य अर्थात् ईश्वर की प्रार्थनाएँ हो, या फिर ऐसे अंश जो बच्चों के चरित्र पर शुभ प्रभाव डाले, वही 'रिपब्लिक' के लिए स्वागत-योग्य हैं।

उपर्युक्त चर्चा से निम्नलिखित बातें स्पष्ट होती हैं।

प्लेटो कला और कविता को अनुकरण या नकल मानता है।

प्लेटो कवि की कल्पना-शक्ति को बुराई की जड़ मानता है क्योंकि कल्पना के सहारे ही कलाकार और कवि मनगढ़न्त कलाकृतियां या कविताएँ गढ़ा करते हैं।

1.3 प्लेटो का अनुकरण सिद्धान्त

स्व मूल्यांकन (क)

प्रिय विद्यार्थियो! इस पाठ में अभी तक प्राप्त ज्ञान के मूल्यांकन हेतु आप निम्नलिखित रिक्त स्थान भरकर करें।

1. प्लेटो के काव्य और कला-सम्बन्धी सिद्धान्त को समझने के लिए उसका ------ का उदाहरण हमारी काफी सहायता करता है।
2. हम जब एक पलंग बनवाना चाहें, तो एक ------ चित्र हमारे विचार (आइडिया), ख्याल, कल्पना में होता है।
3. सत्य या आदर्श तो व्यक्ति के विचार या ------ में है।
4. कलाकार सत्य का ही अनुकरण नहीं करता, वह अनुकरण का भी ------ प्रस्तुत करता है।
5. प्लेटो की आठ प्रसिद्ध कृतियों में ------ की चर्चा सर्वाधिक होती है।
6. प्लेटो कला और कविता के आलोचक की अपेक्षा एक ------ था।
7. वास्तव में प्लेटो का मुख्य उद्देश्य एक आदर्श ------ राज्य की स्थापना करना था।
8. कलाकार और कवि प्रकृति की अनुकृति या ------ किया करते हैं।
9. प्लेटो ------ को कवि की विशिष्ट प्रतिभा ना मानकर ऐसी कुवृति के रूप में देखता है।
10. प्लेटो कला और कविता को अनुकरण या ------ मानता है।

1.4 प्लेटो: काव्य-सत्य

प्लेटो यह मान कर चला कि ईश्वर या सत्य का चित्र प्रस्तुत नहीं किया जा सकता। कलाकार या कवि जिस चित्र की प्रस्तुति करते हैं वह एक अनुकृति या नकल के सिवा कुछ नहीं है। कला के क्षेत्र से उदाहरण देते हुए प्लेटो ने स्पष्ट किया कि एक पलंग तो वह है जिसे बढ़ई ने बनाया है। किन्तु बढ़ई के सामने किसी चित्रकार द्वारा रेखांकित पलंग का प्रारूप विद्यमान रहा है। किन्तु क्या चित्रकार द्वारा प्रस्तुत पलंग

आदर्श है? स्पष्ट है, नहीं। चित्रकार पलंग के अनेक चित्र प्रस्तुत कर सकता है। तो आदर्श पलंग की अवस्थिति कहाँ है जिसे इन सब का आधार या आदर्श माना जा सकता है ?

कवि या कलाकार द्वारा रचित कृति सत्य नहीं हो सकती। वह तो प्रकृति की अनुकृति है। प्रकृति की जो वस्तु कविता या कला का आधार बनती है, वह भी एक विचारात्मक सत्य का प्रारूप है। Idea और Idealision आपसी संबंध के स्पष्टिकरण से यह बात स्पष्ट हो जाती है।

प्लेटो कवि को एक पागल मनुष्य मानता था जो एक आतंरिक प्रेरणा के वशीभूत होकर रचना कर देता था। कविता का युवाओं के चरित्र पर भी अच्छा प्रभाव नहीं होता वह अपने 'रिपब्लिक' में उन्ही कृतियों के प्रवेश की अनुमति देना चाहता था जिनका चरित्र पर शुभ प्रभाव हो।

प्लेटो के पश्चात अरस्तू ने काव्य कृति और कलाकृति को एक नई रचना मानकर प्लेटो द्वारा प्रस्तुत शंकाओं का निवारण करने का यत्न किया। यह तो सही है कि ज्ञानेन्द्रियों यथा नाक, आँख द्वारा गृहीत संवेदन पूर्ण सत्य के संकेतक नहीं होते। सत्रहवीं-अठारहवीं शताब्दी में स्वच्छन्दतावादी कवियों ने भी धरती की सुन्दरता को स्वर्गिक सुन्दरता की छाया मात्र माना। वास्तव में प्लेटो के आदर्शवादी सिद्धान्तों को ही विचारवादी सिद्धान्त भी कहा जा सकता है। स्पष्टतः प्लेटो सत्य का अन्वेषक था और ईश्वर को ही पूर्ण सत्य मानता था। प्लेटो की 'रिपब्लिक' नामक पुस्तक में प्रश्न और फिर उनके उत्तर दिए गए हैं। सुकरात और ग्लूकान आपस में बातें कर रहे थे, तो ग्लूकान ने पूछा बच्चों को शिक्षा किस प्रकार की देनी चाहिए। उत्तर था प्रारंभ में दो विषय पढ़ाने चाहिए।

(1) संगीत (2) जिमनास्टिकस।

वस्तुतः उन दिनों नागरिकों के लिए दो चीजों की ओर बहुत ध्यान दिया जाता था

(1) सच्चरित्रता (2) शारीरिक बल क्योंकि युवकों को सिपाही बनाना एक मुख्य उद्देश्य था। संगीत में ही आगे चल कर कहा गया की साहित्य को भी स्थान देना चाहिए।

साहित्य के उसने दो भाग किए-सच्चा और झूठा और सीधा प्रश्न किया- कि क्या आप चाहते हैं कि बच्चों को ऐसी कहानियाँ पढ़ाई जाएं जिन्हें कुछ लोगों ने गढ़ लिया है और जो बच्चों के मन में ऐसे विचार भर देती हैं जो बिलकुल अवांछित हैं ?

अब 'ऐडिमैंटास' नामक जिज्ञासु पूछता है कि आखिर उनमें नुक्स क्या है, तो उत्तर मिलता है त्रुटि बहुत गंभीर है, यह झूठ कहते हैं और बुरा झूठ कहते हैं। बुरा इसलिए कि इससे बुराई फैलती है।

फिर ऐडिमैंटास प्रश्न करता है कि आखिर होमर महाकवि है इस पर वह उत्तर देता है यह याद रखो कि हम कवि नहीं बल्कि राज्य के निर्माता हैं।

प्लेटो को होमर के महान् कवि होने में सन्देह नहीं था। उसे चिन्ता यह थी कि बच्चों पर और सर्व साधारण पर उस साहित्य का अच्छा प्रभाव नहीं पड़ता।

उसने एक जगह कहा "We are ready to acknowledge that Homer is the greatest of poets and first of tragedy writers, but we must remain firm in our convictions that Hymns to the gods and praises of famous men are the only poetry which ought to be admitted into our state.

सुकरात और प्लेटो के सिद्धान्तों के आरंभ के साथ ही यथार्थवाद और आदर्शवाद की बहस शुरू हो जाती है।

प्लेटो ईश्वर को ही नरम सत्य मानता था। कविता और कला को वह अनुकृति या 'नकल' समझता था। नकल से प्लेटो का अभिप्राय सत्य से दूरी था।

प्लेटो के सामने ऐसी राजनीतिक व्यवस्था थी जो सुकरात जैसे चिन्तकों को मृत्यु दण्ड देती थी। बहुत-से कवि सुकरात के विरोधी थे। इसलिए प्लेटो उन्हें क्षमा नहीं कर सकता था। प्लेटो सत्य के विषय में सुकरात की ही भांति प्रश्न करता था और यह बात उस समय के शासक वर्ग को रास नहीं आ सकती थी।

होमर के वीरकाव्य तथा अन्य त्रासदी-प्रदायक नाटक देवताओं के ऐसे कृत्यों से भरे से रहते थे जिनमें झूठ और चालाकी आवश्यक थी। प्लेटो इन रचनाओं को सत्य का दावेदार नहीं मान सकता था।

प्लेटो का सीधा सम्बन्ध साहित्य या कला की आलोचना से नहीं था। उसने कविता को राज्य-निर्माण के उपकरण के रूप में देखा। किन्तु उसकी स्थापनाओं ने अरस्तू, होरेस तथा अन्य भावी आचार्यों के चिन्तन को प्रभावित किया। क्या कविता मात्र अनुकृति है या फिर प्राकृतिक सौंदर्य की पुर्नप्रस्तुति अथवा कलाकृति या साहित्यिक रचना स्वयं में स्वतंत्र रचना है, इन्हीं प्रश्नों पर विचार करते प्लेटो के परवर्ती आलोचक आगे बढ़े हैं। इसमें संदेह नहीं कि प्लेटो की दृष्टि राजनीति की परिधि तक सीमित रहने के कारण कला और काव्य के साथ पूरा न्याय नहीं कर पायी। किन्तु आलोचना के क्षेत्र में प्लेटो का उल्लेख किए बिना आलोचना के साथ भी न्याय नहीं किया जा सकता। प्लेटो के मन मस्तिष्क पर सुकरात का दर्शन और जीवन इस सीमा तक हावी था कि वह प्रश्नों के उत्तर सुकरात ही की ओर से देता चलता है। जैसे-जैसे समय आगे बढ़ा, प्लेटो के सिद्धान्तों की आलोचना होने लगी। उन सिद्धान्तों के विकास की कहानी पाश्चात्य काव्य शास्त्र का इतिहास बनती चली गई।

प्लेटो यह मानता है कि ईश्वर पूर्ण मस्तिष्क है, उसमें कोई कमी नहीं है इसीलिए मनुष्य द्वारा ईश्वर और उसकी रचना के विषय में जो कुछ कहा जा सका वह अधूरा और नकली होगा।

यह संसार नश्वर और परिवर्तनशील है। ईश्वर ने इसकी रचना की है। दार्शनिक इस नश्वर संसार से मनुष्य को अनश्वर ईश्वर की ओर ले जाता है तब भी कवि इसी असत्य संसार के चित्र बनाने में ही व्यस्त रहता है। उदाहरण के लिए संसार में लाल वस्तुएं तो बहुत सी होती हैं किन्तु लालिमा तो एक ही है। इसी प्रकार सुन्दर वस्तुएँ तो बहुत सी हैं किन्तु परिवर्तनशील सत्य तो एक ही है। इस शाश्वत सत्य की छाया उन सांसारिक अनित्य तत्वों में होती है तथा कवि या चित्रकार उन अनित्य तत्वों का चित्रण करता है इसलिए चित्रकार एवं कवि हमें सत्य से तीन दर्जे दूर ले जाता है क्योंकि वह एक सत्य के बाद, दूसरे सत्य से होता हुआ तीसरे की रचना करता है। इसीलिए कवि का सत्य वास्तविक सत्य नहीं हो सकता।

- **स्व-मूल्यांकन (ख)**

प्रिय विद्यार्थियो! इस पाठ से आपको प्लेटो के काव्य सत्य का जो ज्ञान प्राप्त हुआ है उसका स्व-मूल्यांकन आप निम्नलिखित बहुविकल्पीय प्रश्नों द्वारा करें।

- **बहुविकल्पीय प्रश्न**

प्र.1) यह किसकी मान्यता है कि ईश्वर या सत्य का चित्र प्रस्तुत नहीं किया जा सकता?

क) प्लेटो　　ख) अरस्तु

ग) लोंजाइन्स　　घ) उपर्युक्त सभी

प्र.2) कौन कवि को पागल मनुष्य मानता था जो आंतरिक प्रेरणा के वशीभूत होकर रचना कर देता था। ?

क) अरस्तु　　ख) प्लेटो

ग) लोंजाइन्स　　घ) ड्राइडन

प्र.3) प्लेटो के पश्चात किसने काव्य कृति और कलाकृति को एक नई रचना मानकर प्लेटो द्वारा प्रस्तुत शंकाओं का निवारण करने का यत्न किया।

क) अरस्तु　　ख) प्लेटो

ग) लोंजाइन्स　　घ) जॉन ड्राइडन

प्र.4) प्लेटो ने साहित्य के कितने भाग किए हैं?

क) दो ख) तीन

ग) चार घ) पांच

प्र.5) प्लेटो किसको नरम सत्य मानता था?

क) ईश्वर ख) अनुकृति

ग) नकल घ) तीनों में से कोई नहीं

1.5 प्लेटो: प्रेरणा का सिद्धान्त

सभी आलोचक तथा कवि मानते हैं कि कवि का व्यक्तित्व सामान्य मनुष्यों से अलग प्रकार का होता है। कवि अधिक संवेदनशील होता है। उसकी अनुभूति गहन होती है तथा भाव, विचार और कल्पना की दृष्टि से वह विशिष्ट प्राणी होता है। आत्माभिव्यक्ति, सामाजिक सरोकारों के प्रति सजगता आदि कारण काव्य-रचना का मूल माने जाते हैं। मानवीय भावों और संवेदनाओं का परिष्कार भी कला और कविता का लक्ष्य माने जाते हैं।

प्लेटो भी यह स्वीकार करता है कि कवि सामान्य जनों से अलग व्यक्तित्व का स्वामी होता है। किन्तु प्लेटो इस विशिष्टता को कवि का अच्छा गुण न मान कर, इसे ऐसी विशेषता मानता है जो कवि को असामान्य मनुष्य बना देती है। प्लेटो इस सीमा तक चला जाता है कवि के असामान्य व्यवहार को वह पागलपन के समकक्ष मान लेता है।

पश्चिमी काव्य-सिद्धान्तों के अध्ययन के लिए यूनानी दार्शनिक प्लेटो (समय: 427-347 ई0 पू0) को प्रथम बिन्दू स्वीकार किया जाता है। उसके समय साहित्य में होमर के महाकाव्य ईलियड तथा ओडिसी लोकप्रसिद्ध थे, विद्वानों द्वारा समादृत थे। इन महाकाव्यों के अतिरिक्त अनेक लेखक दुखांत नाटक लिख रहे थे जिन्हें ट्रैजिडी (या त्रासदी) का नाम दिया जाता है। इनमें से कुछ लेखकों ने प्लटो के गुरू सुकरात को मृत्यु-दण्ड देने में प्रमुख भूमिका निभाई थी। स्वभावतः प्लेटो इन लेखकों का प्रशंसक नहीं बन सकता था।

प्लेटो की मान्यता थी कि रचना के क्षणों के समय कवि एक आंतरिक प्रेरणा के वशीभूत होता है। उस समय उसका चिन्तन एक सामान्य विवेकशील मनुष्य जैसा नहीं होता। रचना के क्षणों में कवि की दशा एक पागल मनुष्य जैसी होती है। ऐसे असामान्य, पगलाए मनुष्य की रचना समाज के लिए लाभप्रद नहीं हो सकती। जब एडिमैंटास नामक शिष्य पूछता है कि होमर जैसे महाकवियों का अपराध क्या है, जब विश्व होमर को महान

कवि मानता है तो हमीं उसी के प्रति दुराग्रह क्यों रखें, तो उसे सहज उत्तर मिलता है कि राज्य की स्थापना और काव्य-रचना दो अलग विषय हैं।

प्लेटो के पश्चात अरस्तू ने भी इस प्रश्न पर विचार किया किन्तु कवि की जिस कल्पना शक्ति की प्लेटो ने भर्त्सना की थी, अरस्तू ने उसे कविता का अनिवार्य कारण मान लिया। कल्पना और आन्तरिक प्रेरणा दैवी वरदान हो सकते हैं किन्तु इन्हें मात्र इसलिए हेय नहीं माना जा सकता कि इन के बल पर कवि अपनी रचनाओं की सृष्टि करता है।

अरस्तू ने माना कि कला के अस्तित्व की सार्थकता इसी बात में है कि वह कवि की कल्पनाशक्ति को आकार प्रदान करे।

प्लेटो कविता को अंतःप्रेरणा का परिणाम मानता है और इस प्रेरणा की स्थिति को वह विक्षिप्तावस्था या पागलपन की दशा मानता हुआ ऐसे व्यक्ति की अभिव्यक्ति को वह विवेकशील मनुष्यों के समाज के लिए हानिकारक घोषित करता है। वास्तव में यूनानी काव्य परंपरा में कवि तथा कविता के प्रस्तोता या गायक अलग-अलग हुआ करते थे। यदि होमर अपने आपको ईश्वरीय प्रेरणा से युक्त मानता था तो यही अवधारणा उन व्यक्तियों के साथ भी जुड़ी थी जो कविता को गाकर सुनाते थे। ये 'रैजोड़' काव्य- संप्रेषण के मुख्य माध्यम थे। होमर स्वयं घुमन्तू कवि-गायक था। यह तो सर्वस्वीकृत है कि कवि विशेष क्षणों में ही उत्कृष्ट कविता की रचना करता है। उसे कवि की विशेष क्षमता कहा जा सकता है, मानसिक शक्ति माना जा सकता है या फिर दैवी प्रेरणा। प्लेटो इसे अंतः प्रेरणा मानता है।

यह भी विचित्र तथ्य है कि प्लेटो देवी-देवताओं के अस्तित्व को स्वीकार नहीं करता। कम-से-कम वह देवी-देवताओं से जुडे आख्यांश को सामाजिक स्वीकृत देने के पक्ष में नहीं है किन्तु वह एक काव्य देवी की संकल्पना करता है जिसके प्रभाव से कवि काव्य-रचना में समर्थ होता है।

यह मानना ही होगा कि कवि की प्रतिभा विशिष्ट होती है। उत्कृष्ट काव्य-रचना की क्षमता जन्मजात होती है। पढ़ाई-लिखाई से इस का कोई सरोकार नहीं होता। यह तथ्य होमर, सूरदास और कबीर जैसे कवियों पर एक जैसा लागू होता है। याद रखना होगा कि काव्य देवी का प्रभाव, कल्पना, प्रति भा, अंतःप्रेरणा में स्पष्ट अंतर है किन्तु यह मानना पड़ता है कि कविता की रचना की मनोभूमि एक असाधारण या असामान्य अवस्था है। इसे विशिष्ट अवस्था भी कहा जा सकता है जिसका अनुभव कवि ही कर सकता है। काव्य देवी के प्रभाव से उत्पन्न आवेग या उन्माद कवि और काव्य वाचक से

होता हुआ श्रोता तक पहुंचता है। प्लेटो के अंतःप्रेरणा संबंधी विवेचन से विदित होता है कि काव्य देवी के प्रभाव से कवि विक्षिप्तता या उन्माद या आदेश की स्थिति में पहुंच जाता है। यही क्षण काव्य-रचना के क्षण होते हैं। इनका प्रभाव समाज पर शुभ या अशुभ होता है। इस का सीधा संबंध रचनाकार से नहीं होता। तो भी प्लेटो कुछ नीतिपरक, चरित्र-निर्मापक उलटे ईश्वरीय प्रार्थनाओं को छोड़कर शेष काव्य को अपनी कल्पना के राज्य में स्थान देने का पक्षधर नहीं है।

होमर जैसे कवियों के काव्यों में देवी-देवताओं का चरित्र क्षुद्र और पतित है। उनमें हिंसा है, वे झूठ बोलते हैं, धोखा देते हैं, मानव के दुःख और विपत्ति पर हर्षित होते हैं तथा परस्पर द्वेष और प्रति हिंसा से भरे हुए हैं। यह स्पष्टतः प्लेटो के युग में देवी या देवता का स्वरूप नैतिक दृष्टि से आदर्श नहीं था।

- **स्व-मूल्यांकन (ग)**

प्रिय विद्यार्थियो! निम्नलिखित प्रश्नों के उत्तर सही या गलत चिन्ह द्वारा देकर आप अभी तक प्राप्त ज्ञान का स्व-मूल्यांकन करें।

1. सभी आलोचक तथा कवि मानते हैं कि कवि का व्यक्तित्व सामान्य मनुष्यों से अलग प्रकार का होता है। ( )
2. प्लेटो भी यह स्वीकार करता है कि कवि सामान्य जनों से अलग व्यक्तित्व का स्वामी होता है। ( )
3. पश्चिमी काव्य-सिद्धान्तों के अध्ययन के लिए यूनानी दार्शनिक प्लेटो (समय: 427-347 ई.) को प्रथम बिन्दू स्वीकार नहीं किया जाता है।( )
4. प्लेटो की मान्यता थी कि रचना के क्षणों के समय कवि एक आंतरिक प्रेरणा के वशीभूत होता है। ( )
5. अरस्तू ने माना कि कला के अस्तित्व की सार्थकता इसी बात में है कि वह कवि की कल्पनाशक्ति को आकार प्रदान करे।( )
6. होमर जैसे कवियों के काव्यों में देवी-देवताओं का चरित्र क्षुद्र और पतित है। ( )

1.6 सारांश

निष्कर्ष यह है कि प्लेटो कवि को एक असामान्य प्राणी मानता है। उसकी प्रतिभा को वह कोई महत्त्व नहीं देता। प्लेटो की दृष्टि कविता के सामाजिक सरोकारों से जुड़ी है। कवि को एक विचित्र प्रेरणा के वशीभूत हुआ प्राणी मानकर, प्लेटो काव्य रचना को सत्य की अशुभकारी अनुकृति मानता है।

1.7. कठिन शब्द

1. अवस्थित = उपस्थित, विद्‌यमान
2. सोपान = सीढ़ी, ऊपर चढ़ने का रास्ता।
3. दुर्भावनाओं = बुरी भावना
4. प्रारुप = प्राथमिक रूप
5. अन्तेषक = शोधकर्ता
6. परिधि = बाहरी सीमा
7. अनित्य = नश्वर, अस्थिर
8. शाश्वत = सदा सहने वाला
9. विक्षिप्तता = पागलपन, अव्यवस्था
10. समादृत = सम्मानित

1.8 अभ्यासार्थ प्रश्न:

1. प्लेटो के अनुकरण सिद्‌धांत पर प्रकाश डालिए।

2. प्लेटो के काव्य-सत्य संबंधी विचारों पर प्रकाश डालिए।

3. प्लेटो के प्रेरणा सिद्धांत की महत्वपूर्ण बातें लिखिए।

1.9 उत्तर कुंजी

स्व-मूल्यांकन (क)

1.	पलंग	2.	आदर्श
3.	आइडिया	4.	अनुकरण
5.	रिपब्लिक	6.	राजनीतिज्ञ
7.	आदर्श	8.	नकल
9.	कविकल्पना	10.	नकल

स्व-मूल्यांकन (ख)

1.	प्लेटो	2.	प्लेटो
3.	अरस्तू	4.	दो
5.	ईश्वर		

स्व-मूल्यांकन (ग)

1.	सही	2.	सही
3.	गलत	4.	सही
5.	सही	6.	सही

1.10 पठनीय पुस्तकें

1. पाश्चात्य काव्य शास्त्र- देवेन्द्रनाथ शर्मा, नेशनल पेपरबैक्स, 2023
2. पाश्चात्य साहित्य चिंतन, प्रो. निर्मला जैन, राधाकृष्ण प्रकाशन, 2017
3. उदात्त के विषय में, प्रो. निर्मला जैन, वाणी प्रकाशन, दिल्ली, 2004
4. पाश्चात्य काव्य शास्त्र की परम्परा, सं. डॉ. नगेन्द्र और सावित्री सिन्हा
5. काव्य में उदात्त तत्व, डॉ. नगेन्द्र और नैमिचन्द्र जैन, राजपाल एवं संस, दिल्ली

अरस्तू का अनुकरण सिद्धान्त

रूपरेखा

2.1 उद्देश्य एवं अपेक्षित परिणाम

2.2 प्रस्तावना

2.3 अरस्तू का अनुकरण सिद्धान्त

स्व-मूल्यांकन (क)

2.4 अरस्तू - (क) काव्य सत्य (ख) काव्य प्रयोजन

स्व-मूल्यांकन (ख)

स्व-मूल्यांकन (ग)

2.5 सारांश

2.6 कठिन शब्द

2.7 अभ्यासार्थ प्रश्न

2.8 उत्तर कुंजी

2.9 पठनीय पुस्तकें

2.1 उद्देश्य एवं अपेक्षित परिणाम

प्रिय विद्यार्थियो! प्रस्तुत आलेख का उद्देश्य आपको

- अरस्तू के अनुकरण सिद्धान्त की जानकारी देना।
- अरस्तू के काव्य सत्य एवं काव्य प्रयोजन से संबंधित विचारों से अवगत करवाना।
- त्रासदी संबंधी विचारों की जानकारी देना। इस पाठ का विस्तृत अध्ययन के पश्चात् आप अरस्तू के अनुकरण सिद्धांत को समझ सकेंगे इसके साथ ही अरस्तू के काव्य-सत्य तथा काव्य प्रयोजन को पूर्ण रूप से समझने में सक्षम होंगे।

2.2 प्रस्तावना:

प्लेटो ने काव्य को राजनीति तथा नीतिशास्त्र के एक उपकरण के रूप में देखा था जब कि अरस्तू ने काव्य को काव्य ही के परिप्रेक्ष्य में मूल्यांकित किया। अरस्तू ने

कविता को कविता, महाकाव्य को महाकाव्य और नाटक को नाटक समझ कर उनका विवेचन किया इसलिए उसका विवेचन प्लेटो के विवेचन से अधिक स्पष्ट तथा वस्तुनिष्ठ है।

2.3 अरस्तू का अनुकरण सिद्धान्त:

अरस्तू ने कवि को अनुकरण कर्ता ही नहीं, सर्जक स्वीकार किया। मेमेसिज (Mimesis) या अनुकरण से प्लेटो का अभिप्राय ऐसी प्रक्रिया से था जो कवि को सत्य से दूर ले जाती है किन्तु अरस्तू ने काव्य-सत्य को प्रकृति के सत्य से श्रेयस्कर तथा सुन्दर मान लिया। अरस्तू की मान्यता थी कि कवि अपनी कल्पना-शक्ति द्वारा प्रकृति की त्रुटियों को दूर करके एक निर्दोष कृति की रचना करता है।

इस प्रकार अरस्तू पहला आलोचक था जिसने काव्य-रचना के लिए कल्पना तथा अनुकरण के महत्त्व को स्वीकार किया। नाटक को कार्य की अनुकृति मानते हुए अरस्तू ने उसके दो भेद किए। कॉमेडी (Comedy) और ट्रैजिडी (Tragedy)। ट्रैजिडी को उसने साहित्य की सर्वश्रेष्ठ विधा माना। इसकी परिभाषा अरस्तू ने इस प्रकार की:

ट्रैजिडी एक ऐसे कार्य की अनुकृति है जो गंभीर तथा पूर्ण होता है...। यह (दर्शक के हृदय में) करुणा तथा भय के भावों का उद्रेक करके (कुत्सित) मनोवेगों का विरेचन करती है।

विरेचन (मूल कथारसिस, अंग्रेजी Purgation) आयुर्विज्ञान का शब्द है। इस धारणा के अनुसार शरीर पर किसी औषधि का प्रभाव तब तक नहीं हो सकता जब तक हानिकारक तत्वों का विरेचन नहीं किया जाता।

ट्रैजिडी दर्शक (या सामाजिक) के हृदय का शोधन करके उसे एक स्वस्थ स्थिति प्रदान करती है।

अरस्तू के अनुसार मनुष्यों को यथार्थ से श्रेष्ठ निकृष्ट या यथार्थ रूप में प्रस्तुत किया जा सकता है। पहला विकल्प ही ट्रैजिडी लेखक का होता है।

ट्रैजिडी की सफलता के लिए आवश्यक है कि नायक आश्चर्यजनक ढंग से न्याय तथा अच्छाई का पक्षधर होना चाहिए। जब इस प्रकार के नायक की हानि होती है तो इस का कारण नायक का अपना दुर्गुण नहीं होता अनायास गलती हो जाने से नायक का पतन होता है और इसी पतन को 'दुखांत' संज्ञा दी जाती है। यदि नायक में कोई दुर्गुण होगा तो उसका पतन दुखांत नहीं बन पाएगा।

ट्रैजिडी के विपरीत कॉमेडी में दोषपूर्ण चरित्रों की नकल की जाती है। ये चरित्र अपने दुर्गुणों के कारण हास्यास्पद स्थितियों को जन्म देते हैं।

गंभीर (ट्रैजिडी) लेखक चरित्रों का आदर्शीकरण करता है जब कि कॉमेडी का लेखक मानव-प्रकृति के दोषों को पूरी नग्नता के साथ और प्रायः बढ़ा-चढ़ा कर प्रस्तुत करता है।

ध्यान रखना होगा कि ट्रैजिडी की परिभाषा में ही अरस्तू का प्रसिद्ध विरेचन सिद्धान्त प्रतिपादित हुआ है।

विरेचन या शोधन का अर्थ है मनुष्य के अंतःकरण का शोधन! मानव-मन में अनेक कुत्सित भाव या विकार विद्यमान रहते हैं। ट्रैजिडी में न्यायप्रिय, सत्यनिष्ठ नायक का पतन देख कर दर्शक के हृदय में करुणा तथा भय की उत्पत्ति होती है और फलस्वरूप अन्तःकरण का शोधन हो जाता है। प्रश्न हो सकता है क्या ट्रैजिडी दर्शक के मन में नए भावों का उद्रेक करती है? उत्तार है कि ट्रैजिडी का काम नए भावों का उद्रेक करना नहीं है। ट्रैजिडी अन्तःकरण की शुद्धि करके एक स्वस्थ स्थिति प्रदान करती है।

ध्यान रखना होगा कि ट्रैजिडी का उद्देश्य आनन्द प्रदान करना नहीं है। यह दर्शक के मन में वेदना या पीड़ा उत्पन्न करके अवांछित भावों या मनोविकारों का विरेचन करती है। ट्रैजिडी का नायक मस्तिष्क, श्रेष्ठ गुणों से सम्पन्न होता है। किसी प्राकृतिक आपदा अथवा नायक की भूल द्वारा उस (नायक) का पतन दिखा कर ट्रैजिडी दर्शक के मन में सहानुभूति उत्पन्न करती है। यदि नायक श्रेष्ठ गुणों से युक्त नहीं होगा तो रचना ट्रैजिडी नहीं बनेगी। इसी प्रकार यदि नायक का पतन चरित्र अथवा व्यवहारगत त्रुटि के कारण होगा, तो भी रचना दुखांत नहीं बनेगी। ऐसी स्थितियों में दर्शक के अन्तःकरण में करुणा तथा भय के भाव उत्पन्न नहीं होंगे, फलस्वरूप विरेचन की सिद्धि नहीं होगी।

- **स्व-मूल्यांकन (क)**

प्रिय विद्यार्थियो! इस पाठ में अभी तक प्राप्त ज्ञान का मूल्यांकन आप निम्नलिखित रिक्त स्थान भरकर करें।

1. अरस्तू ने कवि को अनुकरणकर्ता ही नहीं ------ स्वीकार किया।
2. अरस्तू की मान्यता थी कि कवि अपनी ------ द्वारा प्रकृति की त्रुटियों को दूर करके एक निर्दोष कृति की रचना करता है।
3. अरस्तू पहला आलोचक था जिसने काव्य-रचना के लिए कल्पना तथा ------ के महत्व को स्वीकार किया।
4. ------ को अरस्तू ने साहित्य की सर्वश्रेष्ठ विधा माना।
5. विरेचन (मूल कथारसिस, अंग्रेजी पोरगेशन) ----- का शब्द है।
6. ट्रैजिडी दर्शक (या सामाजिक) के ------ का शोधन करके उसे एक स्वस्थ स्थिति प्रदान करती है।
7. ट्रैजिडी के विपरीत ----- में दोषपूर्ण चरित्रों की नकल की जाती है।
8. विरेचन या शोधन का अर्थ है मनुष्य के -----का शोधन।

9. ट्रैजिडी ----- के मन में नए भावों को उद्रेक करती है।

10. ट्रैजिडी का नायक आदर्श ------ से सम्पन्न होता है।

2.4 अरस्तू: (क) काव्य सत्य और (ख) काव्य प्रयोजन

प्लेटो के लिए काव्य-सत्य ईश्वरीय सत्य था। धरती पर इस सत्य का प्रारूप संभव ही नहीं था। इसीलिए उसने कवि और कलाकार को मिथ्याचार अनुकरण कर्ता घोषित करते हुए कहा कि कला सत्य का अनुकरण करती है और सत्य से तीन सोपान दूर होती है।

काव्य के प्रयोजन के संदर्भ में भी प्लेटो कवियों को क्षमा करने के पक्ष में नहीं था। कवि देवी-देवताओं के मिथ्या भ्रमपूर्ण चित्र प्रस्तुत करके युवकों के चरित्रों पर कुलषित प्रभाव डालते थे। अन्तः प्रेरणा के वशीभूत होकर कवि ऐसी कृतियों की रचना करते थे जो सत्य तथा यथार्थ दोनों से दूर होती थीं।

अरस्तू ने कवि को धार्मिक उपदेशक या राजनीति के साधन के रूप में नहीं देखा उसने ट्रैजिडी को साहित्य का श्रेष्ठ रूप मान कर मानव हृदय का विरेचन करना उसका मुख्य उद्देश्य मान लिया।

Tragedy, then, is an imitation of an action that is serious... through pity and fear affecting the proper porgation of these emotions.

करुणा और भय अरस्तू की विरेचन प्रक्रिया के मुख्य साधन थे। इन भावों को दर्शक के हृदय में उद्रेक करके, वह कुलषित भावों का निष्कासन करने में विश्वास करता था।

Katharsis provides a safe outlet for distrusting passions, which siphons off (bad emotions) and thus it produces a better state of mind.

अरस्तू के अनुसार कविता हमें उससे कुछ अधिक देती है जो कुछ हमें प्रकृति दे सकती है। इस प्रकार कविता का सत्य प्रकृति के सत्य से अधिक प्रामाणिक और सुन्दर होता है।

वास्तव में काव्य सत्य को लेकर पाश्चात्य आलोचकों में प्लेटो से ही पर्याप्त विचार विनिमय होता रहा है। प्लेटो ने सर्वप्रथम यह सिद्ध करने का सफल प्रयास किया कि काव्य मूल सत्य से तिगुना दूर होता है। प्लेटो के अनुसार प्रकृति स्वयं में सत्य की अनुकृति है और कवि इस प्रकृति का अनुकरण करता है। इस प्रकार कवि मूल सत्य से बहुत दूर हो जाता है। अरस्तू ने काव्य सत्य की चर्चा करने से पहले यह बताने का प्रयास किया है कि काव्य सत्य और वस्तु सत्य (वैज्ञानिक सत्य) दो अलग-अलग अवधारणाएँ हैं। प्लेटो ने इस प्रकार का कोई भेद-निरूपण नहीं किया था।

अरस्तू ने काव्य सत्य को लेकर गम्भीर विश्लेषण का परिचय दिया है। काव्य सत्य का विवेचन करते हुए अरस्तू सर्वप्रथम काव्य सत्य और ऐतिहासिक सत्य के मध्य के भेद का वर्णन करते हैं। उनके अनुसार- "कवि का कर्त्तव्य-कर्म जो कुछ हो चुका है उसका वर्णन करना नहीं है वरन् जो हो सकता है, जो सम्भाव्यता या आवश्यकता के नियम के अधीन सम्भव है, उसका वर्णन करना है।" इतिहासकार घटित हुई घटनाओं का ब्यौरेवार वर्णन करता है जबकि कवि उन घटनाओं का वर्णन करता है जो घट सकती हैं।

असंभावनाओं को कविता में तीन कारणों से स्थान दिया जा सकता है।

क) कलागत आवश्यकता

ख) भव्यतर सत्य की प्रतिष्ठा

ग) परंपरागत धारणा या विश्वास

लेकिन अपने गंभीर विवेचन का परिचय देते हुए अरस्तू कहता है

1. जो कुछ विवेक सम्मत न हो, उसे कहने से बचना चाहिए।
2. असंभाव्य को इस रूप में प्रस्तुत किया जाये कि वह दर्शक को बिलकुल व्यर्थ न लगे।

   संभाव्य असंभाव्य की अपेक्षा असामान्य को वरीयता नहीं दी जा सकती। अर्थात् कवि ऐसे तत्वों को स्थान दे सकता है जो असंभव हो किन्तु दर्शक-पाठक उन्हें संभाव्य समझ सके।

अरस्तू का प्रयोजन कॉमेडी और ट्रेजिडी के भेद से भी स्पष्ट होता है। कॉमेडी हास्य उत्पन्न करके रह जाती है जब कि ट्रेजिडी मानव-मन का परिष्कार करती है।

ध्यान रखना होगा कि जहाँ अरस्तू वस्तुजगत में असम्भव को काव्य में प्रवेश की अनुमति देते हैं वे ऐसी घटनाओं का निषेध करते हैं जोकि विवेक संगत न हों। सच्चाई यह है कि जो कुछ विवेक संगत नहीं है, उसे मनुष्य स्वीकार नहीं करता और उसका कोई स्थायी प्रभाव नहीं रह पाता।

त्रासदी की परिभाषा देते हुए अरस्तू कहता है कि "त्रासदी किसी गम्भीर, स्वतः पूर्ण तथा निश्चित आयाम से युक्त कार्य की अनुकृति का नाम है जिसका माध्यम नाटक के भिन्न-भिन्न भागों में भिन्न-भिन्न रूप से प्रक्रियायुक्त सभी प्रकार के आभरणों से अलंकृत भाषा होती है जो संभाख्यान रूप में न होकर-कार्य-व्यापार रूप में होती है और जिसमें करुणा तथा त्रास के उद्रेक द्वारा इन मनोविकारों का उचित विवेचन किया जाता है।"

इस प्रकार अनुकरण का अर्थ जीवन के निरूपण से है जो अंग्रेजी के 'रिप्रेजेंटेशन'

शब्द के सर्वाधिक निकट है। त्रासदीकार के लिए जीवन के भौतिक अथवा वस्तु सत्य को ज्यों का त्यों उतारना अभीष्ट नहीं है।

- **स्व-मूल्यांकन (ख)**

प्रिय विद्यार्थियो! इस पाठ से आपको अरस्तु काव्य सत्य का जो ज्ञान प्राप्त हुआ है, उसका स्व-मूल्यांकन आप निम्नलिखित बहुविकल्पीय प्रश्नों द्वारा करें।

1. किस पाश्चात्य आलोक के लिए काव्य-सत्य ईश्वरीय सत्य था?
   क) प्लेटो ख) अरस्तू
   ग) लोंजाइनस घ) ड्राइडन
2. किस पाश्चात्य आलोचक ने कवि को धार्मिक उपदेशक या राजनीति के साधन के रूप में नहीं देखा?
   क) अरस्तू ख) प्लेटो
   ग) वड्स्वर्थ घ) कॉलरिज
3. करुणा और भय किस पाश्चात्य आलोचक की प्रक्रिया के मुख्य साधन थे?
   क) अरस्तू ख) कॉलरिज
   ग) ऑई. ए.रिचर्ड घ) ड्राइडन
4. किस पाश्चात्य आलोचक के अनुसार कविता हमें उससे कुछ अधिक देती है जो कुछ हमें प्रकृति दे सकती है?
   क) प्लेटो ख) अरस्तू
   ग) लोजाइनस घ) वड्स्वर्थ
5. किस पाश्चात्य आलोचक ने यह सिद्ध करने का सफल प्रयास किया कि काव्य मूल सत्य से तिगुना दूर होता है?
   क) टी.एस. इलियट ख) वर्ड्स्वर्थ
   ग) ड्राइडन घ) प्लेटो
6. किस पाश्चात्य आलोचक के अनुसार प्रकृति स्वयं में सत्य की अनुकृति है और कवि इस प्रकृति का अनुकरण करता है?
   क) अरस्तू ख) प्लेटो
   ग) ड्राइडन घ) वड्स्वर्थ
7. ''कवि का कर्तव्य-कर्म जो कुछ हो चुका है उसका वर्णन करना नहीं है वरन जो हो सकता है, जो सम्भाव्यता या आवश्यकता के नियम के अधीन सम्भव है उसका वर्णन करना हैं'' प्रस्तुत पंक्तियाँ किस पाश्चात्य आलोचक की हैं?

क)	अरस्तू	ख)	प्लेटो
ग)	वर्डस्वर्थ	घ)	ड्राइडन

- **स्व-मूल्यांकन (ग)**

प्रिय विद्यार्थियो! निम्नलिखित प्रश्नों के उत्तर सही या गलत चिन्ह द्वारा देकर आप अभी तक प्राप्त ज्ञान का स्व-मूल्यांकन करें।

1. अरस्तू ने काव्य सत्य को लेकर गम्भीर विश्लेषण का परिचय दिया है। ( )
2. काव्य सत्य का विवेचन करते हुए अरस्तू सर्वप्रथम काव्य सत्य और ऐतिहासिक सत्य के मध्य के भेद का वर्णन करते हैं। ( )
3. अरस्तू का प्रयोजन कॉमेडी और ट्रेजिडी के भेद से स्पष्ट नहीं होता है। ( )
4. कॉमेडी हास्य उत्पन्न करके रह जाती है जब कि ट्रेजिडी मानव-मन का परिष्कार करती है। ( )
5. अरस्तू के अनुसार जो कुछ विवेक सम्मत न हो, उसे कहने से बचना चाहिए। ( )
6. असंभाव्य को इस रूप में प्रस्तुत किया जाये कि वह दर्शक को बिल्कुल व्यर्थ न लगे। ( )
7. संभाव्य असंभाव्य की अपेक्षा असामान्य को वरीयता दी जा सकती है। ( )
8. अनुकरण का अर्थ जीवन के निरुपण से है जो अंग्रेजी के 'रिप्रेजेंटेश' शब्द के सर्वाधिक निकट है। ( )

2.5 सारांश :

उपर्युक्त विवेचन से स्पष्ट है कि अरस्तू साहित्य का प्रयोजन मानव-मन के भावों को परिशोधन करके एक श्रेष्ठ समाज की रचना करना है। वह साहित्य और कवि को प्लेटो की भांति राज्य से बहिष्कृत नहीं करना चाहता।

अरस्तू कवि की कल्पना शक्ति की अभिव्यक्ति को भी साहित्य का प्रयोजन मानता है।

काव्य सत्य के संदर्भ में अरस्तू कवि की कृति को 'सत्य' की प्रतिष्ठा प्रदान करता है। इस प्रकार अरस्तू आगामी आलोचकों के लिए एक ऐसा पथ प्रशस्त करता है जहाँ कवि कलाकार को धर्म या राजनीति की कसौटी पर न कसकर वृहत्तर मानवीय सरोकारों के संदर्भ में मूल्यांकित किया जाए। वह मनुष्य के भावों के परिष्कार को महत्त्व देता है।

2.6 कठिन शब्द

1. अनुकृति = देखा देखी कार्य, नकल
2. विरेचन = शुद्ध या परिष्कृत करना
3. प्रारूप = रूपरेखा या मसौदा तैयार करना
4. उद्रेक = अधिकता,प्रचुरता
5. कलुषित = अपवित्र, निंदित
6. निष्कासन = बहिष्कार, बाहर करना
7. निरुपण = विवेचना करना, अच्छी तरह समझाना
8. परिशोधन = पूर्णतः शुद्ध करने की क्रिया

9 वृहत्तर = विशाल या विस्तृत

10. प्रयोजन = उद्देश्य, अभिप्राय

2.7 अभ्यासार्थ प्रश्न:-

1. अरस्तू के अनुकरण सिद्धान्त पर प्रकाश डालिए ।

2. अरस्तू पर संक्षिप्त नोट लिखें ।

3. अरस्तू के काव्य सत्य को लेकर किए गए विश्लेषण पर प्रकाश डालिए।

2.8. उत्तर कुंजी

स्व-मूल्यांकन (क)

1.	सर्जक	2.	कल्पना-शक्ति
3.	अनुकरण	4.	ट्रेजिडी
5.	आयुर्विज्ञान	6.	हृदय
7.	कॉमेडी	8.	अंतःकरण
9.	दर्शक	10.	श्रेष्ठ गुणों

स्व-मूल्यांकन (ख)

1.	प्लेटो	2.	अरस्तू
3.	अरस्तू	4.	अरस्तू
5.	प्लेटो	6.	प्लेटो
7.	अरस्तू		

स्व-मूल्यांकन (ग)

1.	सही	2.	सही
3.	गलत	4.	सही

5. सही   6. सही

7. गलत   8. सही

2.9 पठनीय पुस्तकें

1. पाश्चात्य काव्य शास्त्र- देवेन्द्रनाथ शर्मा, नेशनल पेपरबैक्स, 2023
2. पाश्चात्य साहित्य चिंतन- प्रो. निर्मला जैन, राधाकृष्ण प्रकाशन, 2017
3. उदात्त के विषय में-प्रो. निर्मला जैन, वाणी प्रकाशन, दिल्ली, 2004
4. पाश्चात्य काव्य शास्त्र की परम्परा- सं. डॉ. नगेन्द्र और सावित्री सिन्हा
5. काव्य में उदात्त तत्व- डॉ. नगेन्द्र और नेमिचन्द्र जैन, राजपाल एवं संस, दिल्ली

अरस्तू का विरेचन सिद्धांत

रूपरेखा

3.1 उद्देश्य एवं अपेक्षित परिणाम

3.2 प्रस्तावना

3.3 अरस्तू का विरेचन सिद्धांत

स्व-मूल्यांकन (क)

स्व-मूल्यांकन (ख)

स्व-मूल्यांकन (ग)

3.4 सारांश

3.5 कठिन शब्द

3.6 अभ्यासार्थ प्रश्न

3.7 उत्तर कुंजी

3.8 पठनीय पुस्तकें

3.1 उद्देश्य एवं अपेक्षित परिणाम

प्रिय विद्यार्थियो! प्रस्तुत आलेख का उद्देश्य आपको

- अरस्तू के विरेचन सिद्धान्त की जानकारी देना।
- त्रासदी की अवधारणा से अवगत करवाना।

इस पाठ का विस्तृत अध्ययन करने के उपरान्त आप अरस्तू के विरेचन सिद्धान्त को पूर्ण रूप से समझने में सक्षम होंगे।

3.2 प्रस्तावना:

अरस्तू प्लेटो का शिष्य था किन्तु प्रायः वह अपने दार्शनिक गुरु के सिद्धान्तों के प्रति शंकालु हो उठता था। ये शंकाएँ प्लेटो के 'रिपब्लिक' में ही आरंभ हो गई थीं किन्तु अपनी कृति 'पोयटिक्स' में अरस्तू प्लेटो के अनेक सिद्धान्तों का विरोध करने लगता है।

प्लेटो ने काव्य को राजनीति तथा नीतिशास्त्र के एक उपकरण के रूप में देखा था जब कि अरस्तू ने काव्य को काव्य ही के परिप्रेक्ष्य में मूल्यांकित किया। अरस्तू ने कविता को कविता, महाकाव्य को महाकाव्य और नाटक समझ कर उनका विवेचन किया इसलिए उसका विवेचन प्लेटो के विवेचन से अधिक स्पष्ट तथा वस्तुनिष्ठ है।

ट्रैजिडी को उसने साहित्य की सर्वश्रेष्ठ विधा माना है। इसकी परिभाषा अरस्तू ने इस प्रकार की:

ट्रैजिडी एक ऐसे कार्य की अनुकृति है जो गंभीर तथा पूर्ण होता है....। यह (दर्शक के हृदय में) करुणा तथा भय के भावों का उद्रेक करके (कुत्सित) मनोवेगों का विरेचन करती है।

3.3 अरस्तू का विरेचन सिद्धांत:

विरेचन (मूल कथारसिस, अंग्रेजी Purgation) आयुर्विज्ञान का शब्द है। इस धारणा के अनुसार शरीर पर किसी औषधि का प्रभाव तब तक नहीं हो सकता जब तक हानिकारक तत्वों का विरेचन नहीं किया जाता। ट्रैजिडी दर्शक (या सामाजिक) के हृदय का शोधन करके उसे एक स्वस्थ स्थिति प्रदान करती है।

अरस्तू के अनुसार मनुष्यों को यथार्थ से श्रेष्ठ या निकृष्ट (अथवा जस का तस) प्रस्तुत किया जा सकता है। पहला विकल्प ट्रैजिडी लेखक का होता है, दूसरा कामेडी लेखक का। ट्रैजिडी की सफलता के लिए आवश्यक है कि नायक आश्चर्यजनक ढंग से न्याय तथा अच्छाई का पक्षधर होना चाहिए। जब इस प्रकार के नायक की हानि होती है तो इस का कारण नायक का अपना दुर्गुण नहीं होता। अनायास गलती हो जाने से नायक का पतन होता है और इसी पतन को 'दुखांत' संज्ञा दी जाती है। यदि नायक से कोई गलती न होगी तो उसका पतन दुखांत नहीं बन पाएगा।

ध्यान रखना होगा कि ट्रैजिडी की परिभाषा में ही अरस्तू का प्रसिद्ध विरेचन सिद्धान्त प्रतिपादित हुआ है।

विरेचन या शोधन का अर्थ है मनुष्य के अंतःकरण का शोधन। मानव-मन में अनेक कुत्सित भाव या विकार विद्यमान रहते हैं। ट्रैजिडी में न्यायप्रिय, सत्यनिष्ठ नायक का पतन देख कर दर्शक के हृदय में करुणा तथा भय की उत्पत्ति होती है और फलस्वरूप अन्तःकरण का शोधन हो जाता है। प्रश्न हो सकता है कि क्या ट्रैजिडी दर्शक के मन में नए भावों का उद्रेक करती है ? उत्तर है कि ट्रैजिडी का काम नए भावों का उद्रेक करना नहीं है। ट्रैजिडी अन्तःकरण की शुद्धि करके एक स्वस्थ स्थिति प्रदान करती है।

ट्रैजिडी का उद्देश्य आनन्द प्रदान करना नहीं है। यह दर्शक के मन में वेदना या पीड़ा उत्पन्न करके अवांछित भावों या मनोविकारों का विरेचन करती है। ट्रैजिडी का नायक आदर्श,श्रेष्ठ गुणों से सम्पन्न होता है। किसी प्राकृतिक आपदा अथवा नायक की भूल द्वारा उस (नायक) का पतन दिखा कर ट्रैजिडी दर्शक के मन में सहानुभूति उत्पन्न करती है। यदि नायक श्रेष्ठ गुणों से युक्त नहीं होगा तो रचना ट्रैजिडी नहीं बनेगी। इसी

प्रकार यदि नायक का पतन चरित्र अथवा व्यवहारगत त्रुटि के कारण होगा, तो रचना दुखांत नहीं बनेगी। ऐसी स्थितियों में दर्शक के अन्तःकरण में करुणा तथा भय के भाव उत्पन्न नहीं होंगे, फलस्वरूप विरेचन की सिद्धि नहीं होगी।

- **स्व-मूल्यांकन (क)**

प्रिय विद्यार्थियो! अभी तक प्राप्त ज्ञान का मूल्यांकन आप निम्नलिखित रिक्त स्थान भरकर करें।

1. विरेचन ------- का शब्द है।
2. विरेचन सिद्धांत के अनुसार शरीर पर किसी औषधि का प्रभाव तब तक नहीं हो सकता जब तक हानिकारक तत्वों का ------- नहीं किया जाता।
3. ------- दर्शक के हृदय का शोधन करके उसे एक स्वस्थ स्थिति प्रदान करती है।
4. ------- के अनुसार मनुष्य को यथार्थ से श्रेष्ठ या निकृष्ट प्रस्तुत किया जा सकता है।
5. पहला विकल्प ------- लेखक का होता है, दूसरा कॉमेडी लेखक का

- **स्व-मूल्यांकन (ख)**

सही या गलत

प्रिय विद्यार्थियो! निम्नलिखित प्रश्नों के उत्तर सही या गलत चिन्ह द्वारा देकर आप भी तक प्राप्त ज्ञान का स्व-मूल्यांकन करें।

1. ट्रैजिडी की सफलता के लिए आवश्यक है कि नायक आश्चर्यजनक ढंग से न्याय तथा अच्छाई का पक्षधर होना चाहिए। ( )
2. नायक की हानि का कारण नायक का अपना दुर्गुण होता है। ( )
3. अनायास गलती हो जाने से नायक का पतन होता है और इसी पतन की 'दुखांत' संज्ञा दी जाती है।( )
4. यदि नायक से कोई गलती न होगी तो उसका पतन दुखांत नहीं बन पाएगा। ( )
5. ट्रैजिडी की परिभाषा में अरस्तू का प्रसिद्ध विरेचन सिद्धान्त प्रतिपादित नहीं हुआ है। ( )

- **स्व-मूल्यांकन (ग)**

बहुविकल्पीय प्रश्न

प्रिय विद्यार्थियो! इस पाठ से आपको अरस्तू के विरेचन सिद्धांत का जो ज्ञान प्राप्त हुआ है उसका स्व-मूल्यांकन आप निम्नलिखित बहुविकल्पीय प्रश्नों द्वारा करें।

1. किसका अर्थ है मनुष्य के अंतः करण का शोधन।

   क) विरेचन ख) शोधन

   ग) दोनों घ) दोंनों मे से कोई नहीं।

2. ट्रैजिडी में न्यायप्रिय, सत्यनिष्ठ नायक का पतन देखकर किसके हृदय में करुणा के भाव की उत्पति होती है?

   क) दर्शक ख) श्रोता

   ग) संचालक घ) तीनों में से कोई नहीं

3. ट्रैजिडी दर्शक के मन में क्या उत्पन्न करके अवांछित भावों या मनोविकारों का विरेचन करती है?

   क) वेदना ख) पीड़ा

   ग) दोनों घ) दोनों में से कोई नहीं

4. ट्रैजिडी का नायक किन गुणों से सम्पन्न होता हे?

   क) आदर्श ख) श्रेष्ठ

   ग) दोनों घ) दोनों में से कोई नहीं

5. दर्शक के मन में किसकी उत्पति से विरेचन की सिद्धि होती है?

   क) करुणा ख) भय

   ग) दोनों घ) दोनों में से कोई नहीं

3.4 सारांश : कला और साहित्य के द्वारा हमारे दूषित मनोविकारों का उचित रूप से विरेचन हो जाता है। सफल त्रासदी विरेचन द्वारा करूणा और त्रास के भावों को उदबुद् करती है, उनका सामंजन करती है और इस प्रकार आनंद की भूमिका प्रस्तुत करती है।

3.5 कठिन शब्द:-

1. परिप्रेक्ष्य = देखने अथवा सोचने की दृष्टि विशेष
2. मनोवेग = मन का आवेग, मन का विकार
3. शोधन = शुद्ध या साफ करना
4. कुत्सित = निंदित, घिनौना
5. उद्रेक = प्रचुरता, अधिकता
6. मनोविकार = मन का आवेग

3.6 अभ्यासार्थ प्रश्न:

1. अरस्तू के विरेचन सिद्धान्त पर प्रकाश डालिए ।

2. त्रासदी की अवधारणा पर प्रकाश डालिए।

3.7 उत्तर कुंजी

स्व-मूल्यांकन (क)

1. आयुर्विज्ञान
2. विरेचन
3. ट्रैजिडी
4. अरस्तू
5. ट्रैजिडी

स्व-मूल्यांकन (ख)

1. सही
2. गलत

3. सही 4. सही

5. गलत

स्व-मूल्यांकन (ग)

1. दोनों 2. दर्शक

3. दोनों 4. दोनों

5. दोनों

3.8 पठनीय पुस्तकें

1. पाश्चात्य काव्य शास्त्र- देवेन्द्रनाथ शर्मा, नेशनल पेपरबैक्स, 2023
2. पाश्चात्य साहित्य चिंतन- प्रो. निर्मला जैन, राधाकृष्ण प्रकाशन, 2017
3. उदात्त के विषय में-प्रो. निर्मला जैन, वाणी प्रकाशन, दिल्ली, 2004
4. पाश्चात्य काव्य शास्त्र की परम्परा- सं. डॉ. नगेन्द्र और सावित्री सिन्हा
5. काव्य में उदात्त तत्व- डॉ. नगेन्द्र और नेमिचन्द्र जैन, राजपाल एवं संस, दिल्ली

लोंजाइनस: उदात्त सिद्धान्त

रूपरेखा

4.1 उद्देश्य एवं अपेक्षित परिणाम
4.2 प्रस्तावना
4.3 लोंजाइनस: उदात्त सिद्धान्त
स्व-मूल्यांकन (क)
4.3.1 उदात्त के स्त्रोत या साधक तत्व
स्व-मूल्यांकन (ख)
स्व-मूल्यांकन (ग)
4.4 सारांश
4.5 कठिन शब्द
4.6 अभ्यासार्थ प्रश्न
4.7 उत्तर कुंजी
4.8 पठनीय पुस्तकें

4.1 उद्देश्य एवं अपेक्षित परिणाम

प्रिय विद्यार्थियो प्रस्तुत आलेख का उद्देश्य आपको

- लोंजाइनस के उदात्त सिद्धान्त की जानकारी देना।
- उदात्त के स्त्रोत या साधक तत्वों से अवगत करवाना।

इस पाठ का विस्तृत अध्ययन करने के उपरान्त आप लोजांइनस के उदात्त सिद्धान्त को समझ सकेंगे इसके साथ ही उदात्त सिद्धान्त के स्त्रोत या साधक तत्वों को पूर्ण रूप से समझने में सक्षम होंगे।

4.2 प्रस्तावना:

काव्य पाठक को किस प्रकार प्रभावित करता है, यह प्रश्न सभी चिन्तकों और आलोचकों को चुनौती देता आया है।

यूनानी दार्शनिक प्लेटो ने काव्य का मुख्य कारण कवि की आंतरिक प्रेरणा (Inspiration) माना और नैतिक मूल्यों की स्थापना कवि का मुख्य उद्देश्य निर्धारित किया। प्लेटो ने कवि की कल्पना-शक्ति को ऐसे उपकरण के रूप में देखा जो काव्य को

सत्य से दूर ले जाती है। अरस्तू ने कल्पना को साहित्य-सृजन के लिए अनिवार्य घोषित करके त्रासदी को साहित्य की सर्वश्रेष्ठ विधा स्वीकार किया और वेदना प्रदान करके विरेचन की सिद्धि करना इसका एकमात्र लक्ष्य निर्दिष्ट किया। उसके अनुसार कुलषित भावों का विरेचन करके ही साहित्य अपने लक्ष्य को सिद्ध करता है। इस प्रक्रिया में पाठक वेदना की प्रक्रिया से गुजरता है। लोंजाइनस ने पूर्व परम्परा को नया मोड़ देते हुए तर्क दिया कि काव्य वेदना नहीं, आनन्द प्रदान करता है। साथ ही उसने यह भी माना कि अन्तः प्रेरणा कवि की विलक्षण प्रतिभा है जो श्रेष्ठ कविता के सृजन का कारण बनती है।

4.3 लोंजाइनस: उदात्त सिद्धांत

"उदात्त" अंग्रेजी शब्द "सब्लाइम" का हिन्दी अनुवाद है। साधारण भाषा में इसके लिए अंग्रेजी के Height, Elevation जैसे शब्दों का प्रयोग किया जाता है। हिन्दी में ऊंचाई, उत्थान महानता इसके समानार्थी शब्द हैं।

इस प्रकार 'उदात्त' का अभिप्राय कवि की उस क्षमता से है जो पाठक के पूर्व व्यक्तित्व में एक प्रकार का विस्फोट करके, निम्न स्थिति से कहीं ऊंची स्थिति पर ले जाती है। कविता पढ़ते ही पाठक के व्यक्तित्व में आमूल परिवर्तन होता है। उदात्तीकरण की प्रक्रिया में कविता पाठक के मनोमस्तिष्क पर कुछ ऐसा प्रभाव डालती है जैसे विद्युत अथवा वज्रपात thunder bolt के फलस्वरूप उसका व्यक्तित्व नष्ट हो जाता है तथा प्राणी को वज्राघात सहना पड़ता है, उसे असहाय वेदना भोगनी होती है। काव्यास्वादन की सामान्यतः ग्रहीत व्याख्या के अनुसार यह प्रक्रिया वेदना या त्रासदायक न होकर आनन्द प्रदायक होती है इस प्रक्रिया में अध्यात्मवादियों के अनुभव के अनुरूप पुराने व्यक्तित्व का विस्फोट होता है और पाठक को अतीव आनन्द की अनुभूति प्रदान करता हुआ काव्य उसे एक उदात्त भावभूमि पर प्रतिष्ठित करता है।

लोंजाइनस का मानना है कि कवि किसी प्रकार की तार्किक शक्ति का सहारा नहीं लेता। कविता पाठक को सम्मोहित सा करके उसका व्यक्तित्वांतरण करती है। कविता का प्रभाव किसी एक प्रदेश अथवा वर्ग के पाठकों तक सीमित नहीं रहता । किसी भी व्यवसाय से संबद्ध पाठक एक अच्छी कविता से समान रूपेण प्रभावित होता है। कविता एक बार आनन्द प्रदान करके अपना प्रभाव खो नहीं देती। प्रत्येक आस्वादन में उदात्त की प्रक्रिया घटित होती है और पाठक आनन्द विभोर होता है। इस प्रकार लोंजाइनस मानता है कि कविता का आस्वादक कोई विशेष व्यक्ति नहीं होता।

- **स्व-मूल्यांकन (क)**

प्रिय विद्यार्थियो! इस पाठ में अभी तक प्राप्त ज्ञान का मूल्यांकन आप निम्नलिखित रिक्त स्थान भरकर करें।

1. 'उदात्त' अंग्रेजी शब्द -------- का हिन्दी अनुवाद है।
2. साधारण शब्दों में हिंदी में ऊँचाई, -------- इसके समानार्थी शब्द है।
3. कविता पढ़ते ही पाठक के -------- में आमूल परिवर्तन होता है।
4. लोंजाइनस के अनुसार कविता पाठक को सम्मोहित सा करके उसका -------- करती है।
5. लोंजाइनस मानता है कि कविता का -------- कोई विशेष व्यक्ति नहीं होता।

4.3.1 उदात्त के स्रोत या साधक तत्त्व

लोंजाइनस उदात्त के पांच स्रोत स्वीकार करता है:

1. विचार-वैभव
2. उद्दाम आवेग
3. भावाई उपकरणों का समुचित प्रयोग
4. भव्य शैली
5. गरिमापूर्ण रचना

लोंजाइनस के अनुसार उदात्तता आत्मा की महानता की प्रतिध्वनि है। महान कविता उन्हीं मनुष्यों द्वारा रची जा सकती है जिनकी आत्मा महान् हो। महान् आत्मा ही महान् विचारों की उत्प्रेरक होती है। जिस कविता में विचारों की महानता नहीं होगी, वह उदात्त की सिद्धि नहीं करवा सकेगी।

आवश्यक है कि आवेग या भाव सच्चे हों तथा स्थान पर व्यक्त किए जाएँ। यह भी याद रखना होगा कि महान् भावनाएँ महान् हृदयों में ही निवास करती हैं। भाव सच्चे होने चाहिए तथा आवश्यक है कि वे जीवन के सत्यों का उद्घाटन करें।

भाषाई प्रविधियों के प्रयोग पर कवि का पूर्ण अधिकार होना आवश्यक है। यद्यपि कविता एक लिखित रचना है तथापि इसकी रचना एक वाचन योग्य कृति के रूप में होनी चाहिए, वाचन द्वारा प्रभाव उत्पन्न करने की क्षमता से कविता उदात्त की सिद्धि करवाती है

कवि को सतर्क रहना चाहिए कि उसकी अभिव्यक्ति अस्पष्ट न हो जाए। इसके लिए वह अपने कथन को विस्तार दे सकता है किन्तु अतिरंजना से उदात्त को हानि पहुँचती है।

शब्दों और उपमाओं के प्रयोग की ओर कवि को विशेष ध्यान देना होता है। विषय के अनुसार ही शब्द तथा अन्य अलंकरण प्रक्रियायुक्त किए जाते हैं। महान विषय के लिए निकृष्ट शब्दों का प्रयोग नहीं किया जाता। ऐसा करने से उदात्त की साधना में बाधा पहुँच सकती है।

गरिमापूर्ण रचना का अर्थ यह है कि शब्दों का क्रम विषयानुकूल होना चाहिए। शब्दों तथा पदों के उपयुक्त प्रयोग द्वारा कविता को एक लयात्मक पूर्ण इकाई के रूप में संरचित करना होगा। यदि कविता एक 'पूर्ण' के रूप में नहीं होगी तो इसका पठन या वाचन वह प्रभाव नहीं उत्पन्न कर पाएगा जो काव्य का एकमात्र उद्देश्य है और जिसे 'उदात्त' की संज्ञा से मंडित किया जाता है।

- **स्व-मूल्यांकन (ख)**

सही या गलत

प्रिय विद्यार्थियो! निम्नलिखित प्रश्नों के उत्तर सही या गलत चिन्ह द्वारा देकर आप अभी तक प्राप्त ज्ञान का स्व-मूल्यांकन करें।

1. लोंजाइनस उदात्त के पांच स्त्रोत स्वीकार करते हैं। ( )
2. लोंजाइनस के अनुसार उदात्तता आत्मा की महानता की प्रति ध्वनि है। ( )
3. लोंजाइनस के स्त्रोत को साधक तत्व भी कहा जाता है।( )
4. महान कविता उन्हीं मनुष्यों द्वारा रची जा सकती है, जिनकी आत्मा महान हो। ( )
5. महान आत्मा महान विचारों की उत्प्रेरक नहीं होती है।( )
6. जिस कविता में विचारों की महानता नहीं होती, वह उदात्त की सिद्धि नहीं करवा सकेगी।( )

- **स्व-मूल्यांकन (ग)**

बहुविकल्पीय प्रश्न:-

प्रिय विद्यार्थियो! इस पाठ से आपको लोंजाइनस के उदात्त सिद्धांत का जो ज्ञान प्राप्त हुआ है उसका स्व-मूल्यांकन आप निम्नलिखित **बहुविकल्पीय** प्रश्नों द्वारा करें।

1. लोंजाइनस के तत्वों में है।

क) विचार-वैभव

ख) उद्धाम आवेग

ग) भावाई उपकरणों का समुचित प्रयोग

घ) उपर्युक्त सभी

2. किसी प्रविधि के प्रयोग पर कवि का पूर्ण अधिकार होना आवश्यक है।

क) भाषा ख) शैली

ग) प्रतीक घ) बिम्ब

3. किसके प्रयोग की ओर कवि को विशेष ध्यान देना होता है?

क) शब्दों ख) उपमाओं

ग) दोनों घ) दोनों में से कोई नहीं

4. किसके उपयुक्त प्रयोग द्वारा कविता को एक लयात्मक पूर्ण इकाई के रूप में संरचित किया जाएगा।

क) शब्दों ख) पदों

ग) दोनों घ) दोनों में कोई नहीं

4.4 निष्कर्ष :

लोंजाइनस ने उदात्त के प्रभाव को सार्वभौम माना है। उदात्त का लक्ष्य है मनुष्य का नैतिक उन्नयन। उदात्तता आत्मा की महानता की प्रति ध्वनि है ।

4.5 कठिन शब्द

1. निर्दिष्ट = जिसका निर्देश हुआ हो, कहा हुआ
2. अतिरंजना = अत्युक्ति, अतिशयोक्ति
3. विलक्षण = अलौकिक, अद्‌भुत
4. संरचित = विकसित, सृजित
5. ग्रहीत = प्राप्त, स्वीकृत
6. प्रति ध्वनि = अपनी उत्पति के स्थान पर फिर से सुनाई पड़ने वाला शब्द
7. प्रविधि = विधि, तकनीक

4.6. अभ्यासार्थ प्रश्न:

1. लोंजाइनस के उदात्त सिद्‌धान्त का वर्णन कीजिए ।

2. उदात्त के स्रोतों पर प्रकाश डालिए ।

4.7 उत्तर कुंजी

4.3.1 स्व-मूल्यांकन (क)

1. सब्लाइम
2. उत्थान, महानता
3. व्यक्तित्व
4. व्यक्तित्वांतरण
5. आस्वादक

स्व-मूल्यांकन (ख)

1. सही
2. सही
3. सही
4. सही
5. गलत
6. सही

स्व-मूल्यांकन(ग)

1. उपर्युक्त सभी
2. भाषा
3. दोनों
4. दोनों

4.8 पठनीय पुस्तकें

1. पाश्चात्य काव्य शास्त्र- देवेन्द्रनाथ शर्मा, नेशनल पेपरबैक्स, 2023
2. पाश्चात्य साहित्य चिंतन- प्रो. निर्मला जैन, राधाकृष्ण प्रकाशन, 2017
3. उदात्त के विषय में-प्रो. निर्मला जैन, वाणी प्रकाशन, दिल्ली, 2004
4. पाश्चात्य काव्य शास्त्र की परम्परा- सं. डॉ. नगेन्द्र और सावित्री सिन्हा
5. काव्य में उदात्त तत्व, डॉ. नगेन्द्र और नेमिचन्द्र जैन, राजपाल एवं संस, दिल्ली

ड्राइडन-त्रासदी की अवधारणा

रूपरेखा

5.1 उद्देश्य एवं अपेक्षित परिणाम

5.2 प्रस्तावना

5.3 प्लेटो की त्रासदी संबंधी अवधारणा

स्व-मूल्यांकन (क)

5.4 त्रासदी- अर्थ एवं परिभाषा

स्व-मूल्यांकन (ख)

5.5 त्रासदी के अंग

स्व-मूल्यांकन (ग)

5.6 त्रासदी के संगठन सम्बन्धी अंग

स्व-मूल्यांकन (घ)

5.7 जॉन ड्राइडन: त्रासदी की अवधारणा

5.7.1 परिचय एवं रचनाएं

स्व-मूल्यांकन (ङ)

5.7.2 त्रासदी विषयक विचारधारा

स्व-मूल्यांकन (च)

5.8 ड्राइडन और अरस्तू की त्रासदी संबंधी परिभाषा में साम्य

स्व-मूल्यांकन (छ)

5.9 सारांश

5.10 कठिन शब्द

5.11 अभ्यासार्थ प्रश्न

5.12 उत्तर कुंजी

5.13 पठनीय पुस्तकें

5.1 उद्देश्य एवं अपेक्षित परिणाम

प्रिय विद्यार्थियो! प्रस्तुत आलेख का उद्देश्य आपको

- प्लेटो के त्रासदी संबंधी अवधारणा से अवगत करवाना।
- त्रासदी के अर्थ एवं परिभाषा के साथ उसके अंगों की विस्तृत जानकारी देना।
- जॉन ड्राइडन की त्रासदी संबंधी अवधारणा से अवगत करवाना।
- ड्राइडन की त्रासदी की परिभाषा अरस्तू से पूर्णतः साम्य रखती है इसकी जानकारी देना।

  इस पाठ का विस्तृत अध्ययन करने के पश्चात आप जॉन ड्राइडन की त्रासदी संबंधी अवधारणा से परिचित होंगे ।

5.2 प्रस्तावना

पाश्चात्य काव्य शास्त्र में अरस्तू की प्रेरणा के फलस्वरूप त्रासदी विवेचन की परम्परा प्रारम्भ हुई। पर अरस्तू से पूर्व उनके गुरु प्लेटो ने भी त्रासदी संबंधी अपने विचार दिए हैं।

5.3 प्लेटो की त्रासदी संबंधी अवधारणा

प्लेटो यह मानते हैं कि त्रासदी त्रास और करुणा के भाव जागृत करती है। उसने अत्यन्त विवादास्पद प्रश्न त्रासदी से प्रेक्षक को आनन्द क्यों प्राप्त होता है पर अपना विचार प्रकट किया है। यद्यपि उनका मत असंतोषजनक है। उसका विचार है कि क्रोध, भय, द्वेष आदि भाव मूलतः त्रासदायक है, पर उसमें भी सुख देने की क्षमता होती है। उसने उदाहरण के लिए होमर का उद्धरण दिया है जहाँ वह क्रोध में सुख पाने की बात कहता है।

उसने कहा है कि विलाप में भी आनन्दानुभूति होती है। इस प्रकार प्लेटो के त्रासदी सम्बन्धी विचार न तो पूर्ण ही है और न ही व्यवस्थित ही। वस्तुतः उसका उद्देश्य भी इस विषय का सम्पूर्ण विवेचन करना नहीं था। प्लेटो के बाद अरस्तू ने त्रासदी का गम्भीर और सर्वांगीण विवेचन किया है। जो निम्नलिखित है-

त्रासदी का विवेचन अरस्तू ने 'पेरि-पोइतिकेस' (पोइटिक्स अर्थात् काव्यशास्त्र) में किया। उसने न केवल त्रासदी की परिभाषा ही प्रस्तुत की, अपितु उसके तत्वों, उसके रूप और कार्यों पर भी विचार प्रकट किये। त्रासदी संबंधी अरस्तू के विचार निम्नलिखित हैं।

5.3.1 स्व-मूल्यांकन (क)

प्रिय विद्यार्थियो इस पाठ में अभी तक प्राप्त ज्ञान का मूल्यांकन आप निम्नलिखित रिक्त स्थान भरकर करें।

1. प्लेटो यह मानते हैं कि त्रासदी त्रास और ----- के भाव जागृत करती है।
2. प्लेटो का विचार है कि क्रोध, भय -----आदि भाव मूलतः त्रासदायक हैं।
3. प्लेटो ने कहा है कि विलाप में भी ----- होती है।
4. त्रासदी का विवेचन अरस्तू ने ----- में किया।
5. प्लेटो के बाद ----- ने त्रासदी का गम्भीर और सर्वांगीण विवेचन किया है।

5.4 त्रासदी: अर्थ एवं परिभाषा

त्रासदी को दुखांत नाटक कहा गया है। अरस्तू के अनुसार - ''त्रासदी किसी गंभीर, स्वतःपूर्ण तथा निश्चित आयाम से युक्त कार्य की अनुकृति का नाम है जिसका माध्यम नाटक के भिन्न-भिन्न भागों में भिन्न रूप से प्रयुक्त सभी प्रकार के आभरणों से अलंकृत भाषा होती है, जो समाख्यान रूप में न होकर कार्य-व्यापार रूप में होती है और जिसमें करूणा तथा त्रास के उद्रेक द्वारा उन मनोविकारों का उचित विरेचन किया जाता है।''

5.4.1 स्व-मूल्यांकन (ख)

प्रिय विद्यार्थियो! निम्नलिखित प्रश्नों के उत्तर सही या गलत चिन्ह द्वारा देकर आप अभी तक प्राप्त ज्ञान का स्व-मूल्यांकन करें।

1. त्रासदी को दुखांत नाटक कहा नहीं गया है। ( )
2. अरस्तू के अनुसार ''त्रासदी किसी गंभीर, स्वतापूर्ण तथा निश्चित आयाम से युक्त कार्य की अनुकृति का नाम है। ( )
3. त्रासदी में नाटक के भिन्न-भिन्न भागों में भिन्न रूप से प्रयुक्त सभी प्रकार के आभरणों से अलंकृत भाषा होती है।( )
4. त्रासदी की भाषा समाख्यान रूप में न होकर कार्य-व्यापार में होती है।( )
5. त्रासदी में करुणा तथा त्रास के उद्रेक द्वारा मनोविकारों का उचित विरेचन किया जाता है। ( )

5.5 त्रासदी के अंग

अरस्तू त्रासदी के अनिवार्यतः छः अंग मानते हैं, जो उसके सौष्ठव का निर्धारण करते हैं - कथानक, चरित्र-चित्रण, पद-रचना, विचार-तत्व, दृश्य-विधान, गीत और अभिनय।

क. कथानक- त्रासदी के कथानक सम्बन्धी अरस्तू की तीन धारणाएं महत्वपूर्ण हैं- त्रासदी का एक निश्चित आयाम अथवा आकार होना चाहिए, एक निश्चित संरचना होनी चाहिए और कथानक ही नाटक की आत्मा है। कथानक का आकार पर्याप्त लम्बा होना चाहिए, ताकि एक कलात्मक सम्पूर्णता की भांति प्रेक्षकों अथवा पाठकों

द्वारा ग्रहण किया जा सके। कथानक का आकार इतना हो कि त्रासदी रंगमंच पर भली-भांति अभिनीत की जा सके फिर नाटक उतना ही लम्बा हो जितना कि मानव स्मृति की परिधि में असानी से आ सके। कथानक संरचना में 'प्रारम्भ', 'मध्य' और 'अंत' बिल्कुल स्पष्ट तथा उचित कारणों और परिणामों के साथ जुड़ा होना चाहिए। कथानक में पूर्णता, एकांन्विति, सहज विकास और कुतूहल के साथ-साथ संभाव्यता तथा अनिवार्यता के गुण होने चाहिए। कथानक का आधार दन्तकथामूलक, कल्पनामूलक और इतिहासमूलक कुछ भी हो सकता है। कथानक सरल अथवा जटिल हो सकता है पर श्रेष्ठ त्रासदी की रचना जटिल कथानक पर होती है क्योंकि जटिल कथानक में कार्य-व्यापार का विपर्यय अथवा स्थिति का उत्क्रमण तथा अभिज्ञान अथवा 'अज्ञान का अनावृत' होना पाया जाता है।

संकलनत्रय- कथानक की रचना में सहायक तत्व है अतः त्रासदी के कथानक में कार्य, स्थान एवं समय की एकता रहनी चाहिए। कार्य व्यापार की एकता से तात्पर्य घटनाओं का उल्लेख है। कथानक की रचना में सहायक सभी घटनाएं मात्र एक ही व्यक्ति के जीवन से सम्बन्धित होनी चाहिए जो उसके दुःखद अन्त के लिए उत्तरदायी है। समय की एकता के संदर्भ में अरस्तू ने कहा है कि त्रासदी सूर्य के चक्कर तक की होनी चाहिए। स्थान की एकता के लिए अरस्तू ने कुछ भी व्यक्त नहीं किया है इसलिए स्थान और समय की एकता संबंधी कई भी नियम, उन्होंने अच्छी त्रासदी के लिए अनिवार्य भी घोषित नहीं किया।

ख. चरित्र-चित्रण- चरित्र में अरस्तू का तात्पर्य मात्र पात्रों से नहीं, वरन् वे चरित्र उसी पात्र को मानते हैं, जो स्वभाव अथवा व्यवहार के कुछ पृथक् लक्षण प्रदर्शित करें, वे लक्षण चाहे अच्छाई की ओर हों अथवा बुराई की ओर। चरित्र के संबंध में अरस्तू चार बातें महत्वपूर्ण मानते हैं- (क) चरित्र अच्छे अथवा सदाचारी हों, किंतु किसी भी तरह पूर्ण न हों। (ख) चरित्र उपयुक्त अथवा अपनी जाति के प्रति सच्चे हों। (ग) चरित्र वास्तविकता की तरह हों। (घ) चरित्र समानुरूप अथवा अंतर्विरोधी हों। त्रासदी के नायक के विषय में अरस्तू का विचार है कि त्रासदी का नायक ऐसा होना चाहिए, जिसके कार्य-व्यवहार करुणा और त्रास के भावों का पाठकों अथवा दर्शकों में उद्रेक कर सके। त्रासदी के नायक का चरित्र सर्वांगीणतः पूर्ण नहीं होना चाहिए। वह मध्यम चरित्र का नैतिक दोषों से रहित होना चाहिए।

ग. विचार (thought)- निश्चित परिस्थितियों में जो कुछ प्रासंगिक और सम्भव है, उसको कहने की क्षमता-शक्ति ही विचार है। त्रासदी में विचार वहीं प्रस्तुत

किये जाते हैं, जहां किसी बात का अस्तित्व साबित करना हो अथवा जब किसी सिद्धांत-वाक्य या सूत्र को प्रतिपादित करना हो।

घ. **कथन-शैली (डिक्शन)-** अर्थ की शब्दों में अभिव्यक्ति ही कथन-शैली है। अरस्तू के अनुसार त्रासदी की कथन-शैली परिस्थिति के अनुरूप और उचित होनी चाहिए, अर्थात् शोक, संवेदना, पश्चाताप आदि भावों की अभिव्यक्ति के अनुरूप ही शब्द चयन और कथन-शैली होनी चाहिए।

ङ. **गीत (सांग)-** त्रासदी में गीत योजना भी होनी चाहिए। त्रासदी के अलंकरण में, अरस्तू, गीतों को महत्वपूर्ण तत्व मानते हैं।

च. **अभिनय (स्पैक्टेकिल)-** उपर्युक्त के अनुकरण का ढंग ही अभिनय है। अभिनय प्रेक्षक अथवा श्रोताओं को भावात्मक आकर्षण प्रदान करता है।

5.5.1 स्व-मूल्यांकन (ग)

प्रिय विद्यार्थियो! इस पाठ में आपको ड्राइडन की त्रासदी के अंगों का जो ज्ञान प्राप्त हुआ उसका मूल्यांकन बहुविकल्पीय प्रश्नों के उत्तर द्वारा करें-

1. अरस्तू त्रासदी के कितने अंग मानते हैं।

   क) छः ख) दो

   ग) चार घ) पाँच

2. त्रासदी के कथानक सम्बन्धी अरस्तू की कितनी भाषाएँ महत्वपूर्ण हैं?

   क) दो ख) तीन

   ग) चार घ) पाँच

3. किसने कहा है कि समय की एकता के संदर्भ में त्रासदी सूर्य के चक्कर तक की होनी चाहिए।

   क) प्लेटो ख) लोजाइन्स

   ग) अरस्तू घ) तीनों में से कोई नहीं

4. चरित्र के संबंध में अरस्तू कितनी बातें महत्वपूर्ण मानते हैं?

   क) दो ख) तीन

   ग) चार घ) पांच

5. अभिनय किसको भावात्मक आकर्षण प्रदान करता है?

   क) प्रेक्षक ख) श्रोता

   ग) दोनों घ) दोनों में से कोई नहीं

5.6 त्रासदी के संगठन सम्बन्धी अंग

1. **प्रस्तावना-** प्रस्तावना त्रासदी का वह संपूर्ण भाग है, जो गायक वृन्द के पूर्वगान से पहले रहता है। वास्तव में प्रस्तावना त्रासदी के उस आरम्भिक भाग का नाम है जो त्रासदी के लिए - विशेषता: उसकी कथावस्तु के लिए भूमिका प्रस्तुत करता है।
2. **उपाख्यान-** उपाख्यान वह समग्र अंश है, जो पूर्ण वृन्दगानों के बीच विद्यमान रहता है।
3. **उपसंहार-** उपसंहार त्रासदी का वह पूरा अंश है, जिसके बाद कोई वृन्दगान नहीं होता।
4. **वृन्दगान-** वृन्दगान के दो भाग है - पूर्वगान और उत्तरगान। पूर्वगान गायकवृन्द का पहला समवेत उच्चार है और उतरगान गायकवृन्द का वह सम्बोध गीत है जिसमें समण अथवा गुरु-लघु-द्विवर्णिक चतुष्पदी का प्रयोग न हो। स्पष्ट शब्दों में पूर्वगान पहला वृन्दगान है और उतरगान कदाचित् अन्तिम।

अतः यह सत्य है कि अरस्तू के विचार पूर्णतः संतोषजनक नहीं थे परन्तु उसने जो प्रश्न उठाये है वह मौलिक हैं। उनके प्रश्न में आगामी विद्वानों को सोचने और तात्विक विश्लेष्ण करने की प्रेरणा दी है। इसीलिए ल्यूकस ने अरस्तू के ग्रंथ poetics के सम्बन्ध में लिखा है-

'Those few pages ask if they do not answer almost all that we need to know'

त्रासदी के संबंध में आगे चलकर जॉन ड्राइडन ने भी अरस्तू को सम्मुख रखते हुए अपने विचार दिए।

5.6.1 स्व-मूल्यांकन (घ)

प्रिय विद्यार्थियो! इस पाठ में अभी तक प्राप्त ज्ञान का मूल्यांकन आप निम्नलिखित रिक्त स्थान भरकर करें।

1. --------- त्रासदी का वह संपूर्ण भाग है, जो गायक वृन्द के पूर्वागन से पहले रहता है।
2. उपाख्यान --------- का वह पूरा अंश है, जिसके बाद वृन्दगान नहीं होता।
3. वृन्दगान के दो भाग हैं- पूर्वगान और ---------।
4. --------- त्रासदी का वह पूरा अंश है, जिसके बाद कोई वृन्दगान नहीं होता।
5. पूर्वगान पहला वृन्दगान है और --------- कदाचित अन्तिम।

त्रासदी संबंधी जॉन ड्राइडन की अवधारणा पर आगे विचार किया जा रहा है-

5.7 जॉन ड्राइडन: त्रासदी की अवधारणा

5.7.1 परिचय एवं रचनाएं

आधुनिक अंग्रेज़ी आलोचना के जनक जॉन ड्राइडन का समय 1631 से 1700 तक माना जाता है। वे एक साथ कवि, नाटककार, व्यंग्यकार और अनुवादक थे पर आज उन्हें नवशास्त्रवादी आलोचक के रूप में जाना जाता है। इनका जन्म नार्थम्पटन शहर में हुआ। ट्रिनिटी कॉलेज केम्ब्रिज में उच्च शिक्षा प्राप्त की। इनका लेखन कार्य नाटक लेखन से आरंभ होता है। इनके प्रारम्भिक नाटकों में 'दि वाइल्ड गेलेंट (1663) तथा 'द राइवल लेडीज़ (1664) उल्लेखनीय हैं। सन् 1665 में उनका 'दि इंडियन इम्पेरर' नाटक विशेष रूप से विख्यात हुआ।

ड्राइडन सैद्धान्तिक और व्यावहारिक दोनों प्रकार के आलोचक थे। उन्होंने न केवल नाटक, वीर नाटक, काव्य-प्रयोजन, प्रहसन, कल्पना, अनुकरण आदि से सम्बद्ध गंभीर और शाश्वत प्रश्नों पर ही अपने विचार प्रकट किए अपितु पुरातन कवियों की भी समीक्षा की। वे एक कवि-आलोचक थे। एक ओर उन्हें प्राचीन ग्रीक और रोमी साहित्य का ज्ञान था। दूसरी ओर तत्कालीन यूरोपीय साहित्य का। एक ओर वे शैक्सपियर, बैन-जॉनसन, प्लैचर के अध्येता थे तो दूसरी और अरस्तू, होरेस के कला सिद्धांतों के भी ज्ञाता थे। वास्तव में आलोचना के क्षेत्र में वे प्राचीन के प्रति निष्ठा रखते हुए भी नवीन की ओर आकृष्ट थे। आलोचना संबंधी उनकी महत्वपूर्ण रचना 'एन ऐसे आफ ड्रामाटिक पोइजी' है। इसके अतिरिक्त उन्होंने आलोचना के क्षेत्र में कोई ग्रंथ नहीं लिखा। उनका आलोचक दृष्टिकोण उनकी विभिन्न काव्यकृतियों की भूमिकाओं तथा समर्पण-पत्रों में मिलता है। जिनका विवरण निम्नलिखित है-

	भूमिका का शीर्षक	**भूमिका में आलोचना का विषय**
1.	इपिसल डैडीकेटरी ऑफ दि राइवल लेड़ीज	नाट्य लेखन में हीरोइक कपलेट
2.	डैडीकेशन टू एमस मिराबिलीज	वीर प्रधान काव्य लेखन में तुकांत चतुष्पदी के प्रयोग का औचित्य
3.	दि एपोलाजी फार हीरोइक पोयट्री	महाकवि मिल्टन की प्रशस्ति
4.	दि ग्राउंड्स् आफ क्रिटिसिज्म इन ट्रेजडी	अरस्तू की त्रासदी विषयक धारणाओं को अनावृत्त कर इस क्षेत्र में फ्लेचर और शेक्सपीयर की निष्पत्तियों का विवेचन

5.	ए डिसकोर्स कन्सर्निंग द ओरिजन एंड प्रोगे्रस ऑफ सेटायर	व्यंग्य के विषय में विचार
6.	ए पेरेलल ऑफ पोयट्री एण्ड पेन्टिंग	काव्यकला संबंधी विचार
7.	डेडीकेशन ऑफ दि एनीस	बर्जिल को दृष्टिगत रखते हुए महाकाव्य का विवेचन
8.	प्रिफेस टू दि फेबिल्स	होमर, आविद, चासर और बोकेसियों के कथा साहित्य का रसास्वादन तथा मूल्यांकन
9.	ए डिफेन्स आफ एन ऐसे ऑफ ड्रामाटि पोइज़ी	त्रासदी में तुकान्त द्विपदी का प्रयोग
10.	ट्रेजडीस ऑफ दि लास्ज एज कन्सीडर्ड	त्रासदी विषयक विचार

ड्राइडन की समीक्षात्मक कृति तथा इन भूमिकाओं को पढ़ने पर ड्राइडन एक गम्भीर अध्येता के रूप में हमारे सामने आते हैं। वे एक ऐसे समीक्षक थे जिसे ग्रीक एवं लैटिन की साहित्यिक परंपराओं का विस्तृत ज्ञान था। इसलिए उनके काव्य-परिभाषा, काव्य प्रयोजन, नाट्य कला, काव्य में कल्पना और लयात्मकता, काव्य और महाकाव्य, कामदी, कामदी और प्रहसन, व्यंग्य रचना और भाषा-शैली संबंधी दृष्टिकोणों का सर्वत्र सम्मान हुआ है।

- **स्व-मूल्यांकन (ङ)**

प्रिय विद्यार्थियो! इस पाठ से आपको जा ज्ञान प्राप्त हुआ उसका मूल्यांकन निम्नलिखित बहुविकल्पीय प्रश्नों के उत्तर द्वारा करें।

1. आधुनिक अंग्रेजी आलोचना के जनक कौन हैं?
   क) जॉन ड्राइडन ख) प्लेटो
   ग) अरस्तू घ) तीनों में कोई नहीं
2. जॉन ड्राइडन का समय कब से कब तक माना जाता है?
   क) 1531 से 1600 ख) 1631 से 1700
   ग) 1831 से 1900 घ) 1800 से 1900
3. जॉन ड्राइडन का लेखन कार्य कहां से आरंभ होता है?
   क) नाटक लेखन ख) उपन्यास लेखन
   ग) काव्य लेखन घ) निबंध लेखन

4. जॉन ड्राइडन के नाटक 'दि वाइल्ड गेलेंट' का प्रकाशन वर्ष है-

क)	1664	ख)	1665
ग)	1663	घ)	1669

6. जॉन ड्राइडन के नाटक 'दि इंडियन इम्पेरर' नाटक का प्रकाशन वर्ष क्या है?

क)	1666	ख)	1665
ग)	1843	घ)	1944

7. जॉन ड्राइडन किसके अध्येता थे?

क)	शैक्सपियर	ख)	बैन-जॉनसन
ग)	प्लैचर	घ)	उपर्युक्त सभी

8. ड्राइडन किसके कला सिद्धांतों के ज्ञाता थे?

क)	अरस्तू	ख)	होरेस
ग)	दोनों	घ)	दोनों में से कोई नहीं

प्रस्तुत पाठ में उनके त्रासदी संबंधी विचार जानना अपेक्षित हैः

5.7.2 त्रासदी विषयक विचारधारा

ड्राइडन की त्रासदी संबंधी अवधारणा प्रमुखतः ट्रोयलस एण्ड क्रेसिडा की भूमिका 'दि ग्राउण्ड्स ऑफ क्रिटिसिज्म इन ट्रेजडी' में पायी जाती है। इसके अतिरिक्त 'डेडीकेशन ऑफ दि एनीस' तथा राइमर की 'ट्रेजडीस ऑफ दि लास्ट एज कन्सीडर्ड' में भी उनके त्रासदी संबंधी विचार मिलते हैं।

त्रासदी को पारिभाषित करते हुए 'दि ग्राउण्डस ऑफ क्रिटिसिज्म इन ट्रेजडी में ड्राइडन लिखते हैंः "त्रासदी एक महान्, सम्पूर्ण और सम्भाव्य कार्य व्यापार की अनुकृति का नाम है, जिसका अभिनय किया जाता है वर्णन अथवा कथन नहीं और जो हमारे मस्तिष्क से करुणा, और त्रास के मनोवेगों का उद्रेक कर विरेचन करने में सहायक होती है।" उनके त्रासदी के तत्वों सम्बन्धी विचार भी द्रष्टव्य है।

क. **कथानक-** त्रासदी के कथानक के विषय में ड्राइडन लिखते हैं कि त्रासदी का विषय क्षुद्र नहीं होना चाहिए। उदात्त विषय के कारण ही त्रासदी भय और करुणा के मनोवेगों का विरेचन कर सकती है।

ख. **संकलनत्रय-** त्रासदी के कथानक का एक महत्वपूर्ण तत्व है। संकलनत्रय के विषय में ड्राइडन से 'कालान्विति और स्थानान्विति के 'पराधीनतापूर्ण निर्वाह' का उपहास किया है क्योंकि अन्वित - त्रय अनावश्यक रूप से नाटककार के कार्यक्षेत्र को सीमित करती है। उनकी यह भी धारणा है कि कालान्विति और स्थानान्विति का

अति नियमनिष्ठ प्रयोग कथानक का विनाश कर देता है और कल्पना का ह्रास करता है। 'ए डिफेन्स आफ एन ऐसे ऑफ ड्रामाटिक पोयज़ी' में उन्होंने लिखा है कि ''कालान्विति का अति नियमनिष्ठ प्रयोग यह होना चाहिए कि कथानक का समय और अभिनय का समय एक ही हो अर्थात् कथानक के अनुसार किसी घटना क्रम के घटित होने में जितना समय लगा है, उतना ही समय उस घटना के अभिनीत होने में भी लगे।

ग. **चरित्र चित्रण एवं नायक -** त्रासदी के नायक और चरित्र-चित्रण के विषय में वे लिखते हैं कि त्रासदी का नायक करुणा और भय के उद्रेक में सहायक होना चाहिए, अर्थात् वह एक ऐसा सदाचारी पुरुष होना चाहिए जिसका दुर्भाग्यपूर्ण पतन प्रेक्षकों के मन में करुणा भर दे। नायक का सामाजिक स्तर उच्चकोटी का होना चाहिए ताकि उसका पतन भावक-मन को भय से अभिभूत कर सके।

त्रासदी में नायक के अतिरिक्त सभी पात्र स्वयं को अपने सामाजिक स्तर, आयु और जीवन के अन्य तथ्यों के अनुरूप सच्चाई प्रकट करने वाले होने चाहिए। सभी चरित्र स्वयं को मूक और निष्क्रिय पात्रों के रूप में प्रस्तुत न कर अपने कार्य व्यापारों के माध्यम से व्यक्तित्व का उद्घाटन करने वाले होने चाहिए।

घ. **अभिनय-** अभिनय तत्व पर विचार करते हुए ड्राइडन कहता है- अभिनय अभिनेता का कार्य है। अतः त्रासदी की श्रेष्ठता का श्रेय केवल त्रासदीकार को ही नहीं दिया जा सकता रचनाकार और अभिनेता दोनों ही इस श्रेय के प्रतिभागी हैं। क्योंकि अभिनय एक कला है इसलिए कुशल अभिनय से निकृष्ट कोटि की त्रासदी भी उत्कृष्ट प्रतीत हो सकती है और अकुशल अभिनय से उत्कृष्ट कोटि की त्रासदी भी निकृष्ट हो सकती है।

ङ. **वृंदगान-** त्रासदी में प्रस्तुत किए जाने वाले वृंदगान के विषय में 'डेडीकेशन ऑफ एकसामेन पोइंटिकस' में ग्रीक कोरस को उन्होंने 'व्यर्थ की बाधा' कह अंग्रेजी-त्रासदी में वृंदगान की वर्जना की है। कोरस (वृंदगान) को अनावश्यक घोषित करने में, वस्तुतः ड्राइडन का ध्यान श्रोताओं के आनंद की ओर था।

च. **भाषा-शैली-** भाषा-शैली के संदर्भ में अगर देखा जाए तो ड्राइडन देश-भाषा (राष्ट्र-भाषा) प्रेमी थे। उन्होंने विशुद्ध अंग्रेज़ी शब्दावली के प्रयोग का आग्रह किया है। वे भाषा की एकरूपता के पक्ष में थे इसलिए भाषा प्रयोग में वे बागाडम्बर और वाग्स्फीति के विरोधी थे। तुच्छ विषय को भव्य शब्दावली में लिखना तथा जो तथ्य एक पंक्ति में सुस्पष्ट किया जा सकता हो उसे चार-छः पंक्तियों में लिखना वह अविवेक पूर्ण मानते हैं। वे त्रासदी के लिए उदात्त शैली के पक्षपाती

थे। काव्योत्कर्ष के लिए अलंकारों का विषय-वस्तु तथा पात्रानुकूल प्रयोग करने के समर्थक थे।

- **स्व-मूल्यांकन (च)**

प्रिय विद्यार्थियो! निम्नलिखित प्रश्नों के उत्तर सही या गलत चिन्ह द्वारा देकर आप अभी तक प्राप्त ज्ञान का स्व-मूल्यांकन करें।

1. ड्राइडन की त्रासदी संबंधी अवधारणा प्रमुखतः ट्रोयलस एण्ड क्रेसिडा की भूमिका 'दि ग्राउण्ड्स ऑफ क्रिटिसिज्म इन ट्रेजडी' में पायी जाती है। ( )
2. त्रासदी के विषय में ड्राइडन लिखते हैं कि इसका विषय क्षुद्र होना चाहिए। ( )
3. ड्राइडन की धारणा है कि कालान्विति और स्थानान्विति का अति नियमनिष्ठ प्रयोग कथानक का विनाश कर देता है और कल्पना का ह्रास करता है। ( )
4. ड्राइडन के अनुसार नायक का सामाजिक स्तर उच्चकोटि का होना चाहिए ताकि उसका पतन भावक-मन को भय से अभिभूत कर सके। ( )
5. भाषा-शैली के संदर्भ में अगर देखा जाए तो ड्राइडन देश-भाषा (राष्ट्र-भाषा) प्रेमी थे। ( )

5.8 ड्राइडन और अरस्तु की त्रासदी संबंधी परिभाषा में साम्य

ड्राइडन के त्रासदी विषयक विचारों को अरस्तू के समकक्ष रखते हुए निम्नलिखित बिंदु विचारणीय हैं-

ड्राइडन की त्रासदी की परिभाषा अरस्तू से पूर्णतः साम्य रखती है। अरस्तू की तरह वह एक सम्पूर्ण, महान् एवं संभाव्य कार्य व्यापार की अनुकृति को ही त्रासदी मानते हैं। परन्तु ड्राइडन ने 'भय और त्रास' के मनोवेगों का विवेचन अरस्तू के अनुसार न करते हुए फ्रांसीसी आलोचक रेपिन से प्रभावित होकर किया है। रेपिन के अनुसार - ''त्रास से अहम् अर्थात् अभिमान का और करुणा से कठोर हृदयता अथवा सहानुभूति के अभाव का उपचार होता है।'' ड्राइडन भी करुणा और त्रास मनोविकारों का यही उद्देश्य मानते हैं। इस प्रकार त्रासदी में अरस्तू यदि करुणा और त्रास का उद्रेक और तत्पश्चात् विरेचन मानवात्मा अथवा मानव मस्तिष्क की विशुद्धता और प्रफुल्लता के लिए आवश्यक मानते हैं तो ड्राइडन इन मनोवेगों को मानव स्वभाव के वद्ध-मूल दुर्गणों (अहंकार और कठोर हृदय) के उपचार के लिए आवश्यक मानते हैं।

क. कथानक- त्रासदी के कथानक के विषय में ड्राइडन के विचार अरस्तू से ही प्रभावित हैं पर यहाँ पर अरस्तू ने कथानक के विषय में विशद् विवेचन किया है वहीं ड्राइडन

ने कथानक को उदात्त कहकर ही सर्व धारणाओं को इसी में अंतर्निहित कर दिया है। ड्राइडन के अनुसार- ''कथानक सावयव जीवंत प्राणी-सा प्रतीत होना चाहिए, अर्थात् कार्य व्यापार अथवा घटनाएं एक दूसरे से भली-भांति गुम्फित हों, ताकि एक महान् और सम्पूर्ण कथानक की रचना हो सके। ''वह दो कथानकों को एक स्थान पर समेटने के विरोध में हैं, परन्तु उपकथानकों को दर्शकों के मनोरंजन के लिए प्रस्तुत किया जाना वह उचित मानते हैं लेकिन शर्त यह कि उपकथानक मुख्य कथानक से पूर्णतः सन्निविष्ट होना चाहिए।'' अरस्तू कथानक क¨ चरित्र से अधिक महत्त्वपूर्ण मानते है। काव्यशास्त्र में वे लिखते हैं-''त्रासदी का अस्तित्व बिना चरित्र के सम्भव है किन्तु बिना कथानक अर्थात् कार्य-व्यापार के असम्भव।'' ड्राइडन कथानक और अभिनेता को बराबर महत्व देते हैं।

ख. **संकलनत्रय-** कथानक का महत्वपूर्ण तत्व है ड्राइडन ने संकलनत्रय से सम्बन्धित अरस्तू की प्राचीन अवधारणा का अनुमोदन पूर्णतः नहीं किया है। उन्होंने अरस्तू की इस विचारधारा को - "एक ही कथानक, 24 घंटे का समय तथा एक ही स्थल ताकि घटनाओं क्रम टूटे नहीं" पूर्णता नहीं माना है। पर कार्यान्विति संबंधी अवधारणा में वे अरस्तू से सहमत है और कहते हैं - "कार्यव्यापार अथवा घटनाएं एक दूसरे से भली-भांति गुम्फित हों, ताकि एक महान् और सम्पूर्ण कथानक की रचना हो सके।" परन्तु कालान्विति और स्थानान्विति के 'पराधीनता पूर्ण निर्वाह' का उपहास किया है, जो कि अनावश्यक रूप में नाटककार के कार्य क्षेत्र को सीमित कर देते हैं। इस संबंध में वे लिखते हैं "अरस्तू ने यदि अपने त्रासदी विषयक प्रति मान सोफोक्लीज़ और यूरिपिडस से ग्रहण किए थे। यदि उन्होंने हमारी त्रासदियां देखी होती, तो सम्भवतः अपना विचार बदल लिया होता।"

ग. **चरित्र-चित्रण-** त्रासदी के चरित्र-चित्रण के संदर्भ में ड्राइडन अरस्तू और होरेस के ही अनुकरण कत्र्ता हैं। इन ग्रीक गुरुओं के समान ड्राइडन भी मानते हैं कि त्रासदी का नायक ऐसा ही होना चाहिए, जिसके कार्य-व्यवहार करुणा और त्रास के भावों का पाठकों एवं दर्शकों में, सर्वाधिक उद्रेक कर सके। अन्य चरित्रों के संदर्भ में ड्राइडन होरेस के विचारों के समर्थक हैं वे मानते हैं कि प्रत्येक पात्र को अपनी आयु और अनुभव के अनुसार ही व्यवहार करना चाहिए।

घ. **अभिनय-** के संदर्भ में ड्राइडन ने अरस्तू की मान्यता का खंडन किया है और कहा कि त्रासदी की सफलता का श्रेय न केवल कवि को दिया जा सकता है अपितु अभिनेता का अभिनय भी इसका भागीदार है क्योंकि उत्कृष्ट अभिनय से ही त्रासदी का वांछित परिणाम मिलता है यदि अभिनय उत्कृष्ट नहीं होगा तो रचनाकार की रचना चाहे जितनी भी उत्कृष्ट क्यों न हो प्रभावशाली नहीं बन पाएगी।

ङ. वृंदगान- त्रासदी में वृंदगान के संदर्भ में ड्राइडन के विचार अरस्तू से बिल्कुल भिन्न हैं इस संदर्भ में वे लिखते हैं - ''ग्रीक त्रासदीकारों के लिए वृन्दगान का प्रयोग इसलिए आवश्यक था कि उनके श्रोता ऐसा चाहते थे, परन्तु अंग्रेज़ी रंगमंच पर इसका प्रयोग अनावश्यक है क्योंकि अंग्रेजी श्रोता वृन्दगान को नहीं चाहते। उनका दृढ़ विश्वास है कि नाटककार की सफलता का अंतर्निहित सूत्र उसका युग-बोध और श्रोताओं की अभिरूचि का ज्ञान है। वे लिखते हैं कि क्लासिकल नियमों का अतिक्रमण करने पर भी जैकोबियन और ऐलिजाबेथन युग के नाटककारों को भारी सफलता इसीलिए मिली कि वे श्रोताओं की परिवर्तित अभिरूचि और युग परिवेश के अनुकूल रचना कर रहे थे।

त्रासदी की भाषा-शैली के संदर्भ में ड्राइडन राष्ट्र भाषा, देश भाषा को ही महत्व देते हैं और अरस्तू के समान भाषा की एकरूपता पर बल देते हैं।

अरस्तू ने त्रासदी को महाकाव्य से श्रेष्ठ माना है। इसकी श्रेष्ठता उन्होंने दो आधारों पर व्यक्त की हैः (क) त्रासदी अपने संदेश को अति संक्षिप्त परिधि में ही व्यक्त करती है। (ख) त्रासदी पाठक और दर्शक दोनों को ही अध्ययन और अभिनय के माध्यम से लाभान्वित करती है। दूसरी ओर ड्राइडन ने त्रासदी की श्रेष्ठता प्रक्रियामाणित करने वाले अरस्तू के इन दोनों तर्कों का खंडन करते हुए महाकाव्य को त्रासदी से श्रेष्ठ घोषित करते हुए कहा - ''चूँकि त्रासदी का क्षेत्र सीमित होता है, इसलिए त्रासदी पाठक अथवा दर्शक को उस गहराई तक प्रभावित नहीं कर सकती जिस गहराई तक महाकाव्य कर सकता है अर्थात् व्यापक परिधि के कारण ही महाकाव्य पाठकों पर गहन और चिरस्थायी प्रभाव डालता है।''

- **स्व-मूल्यांकन (छ)**

प्रिय विद्यार्थियो! इस पाठ में अभी तक प्राप्त ज्ञान का मूल्यांकन आप निम्नलिखित रिक्त स्थान भरकर करें।

1. त्रासदी के कथानक के विषय में ड्राइडन के विचार ------ से ही प्रभावित हैं।
2. त्रासदी के चरित्र-चित्रण के संदर्भ में ड्राइडन अरस्तू और ------ के ही अनुकरणकर्ता हैं।
3. ------ के संदर्भ में ड्राइडन ने अरस्तू की मान्यता का खंडन किया है।
4. त्रासदी में ------ के संदर्भ में ड्राइडन के विचार अरस्तू से बिल्कुल भिन्न है।
5. अरस्तू ने त्रासदी को ------ से श्रेष्ठ माना है।

5.9 सारांश

अतः ड्राइडन के त्रासदी विषयक विचारों की समीक्षा करते हुए कहा जा सकता है कि त्रासदी संबंधी उनके विचारों पर एक ओर होरेस, लोंगिनुस का प्रभाव था तो दूसरी ओर बोयले, एवरमन्द का। उन्होंने त्रासदी के कई संदर्भों में प्राचीन ग्रीक गुरुओं का सम्मान किया है तो दूसरी ओर वह युग विशेष में, परिस्थिति विशेष में नवीनता के आकांक्षी थे। इसलिए वे कहते हैं कि- ''शास्त्रवादी गुरुओं के सिद्धांत मानव प्रकृति से उद्घाटित सत्य हैं, परन्तु फिर भी वह परिस्थिति और देशकालातीत नहीं माने जा सकते और न सभी युगों में, सभी राष्ट्रों के हर प्रकार के साहित्य पर लागू ही हो सकते हैं।''

5.10 कठिन शब्द

1. अनुकृति = किसी रचना की हूबहू नकल, देखादेखी।
2. अभिनीत = जिसका अभिनय हुआ हो।
3. त्रासदी = ऐसी रचना या नाटक जो दुखांत हो।
4. वृन्दगान = दो या दो से ज्यादा लोगों का सामूहिक रूप से गाना या सहगान मंडली
5. अध्येता = अध्ययन करने वाला, अध्ययकर्ता, पाठक
6. प्रेक्षक = उद्रेक, द्रष्टा
7. निष्क्रिय = कोई काम-धाम न करने वाला
8. विशुद्धता = शुद्ध, निर्मल
9. उर्द्रक = अधिकता, प्रचुरता
10. अतिक्रमण = सीमा का उल्लंघन, हद से आगे जाना

5.11 अभ्यासार्थ प्रश्न:

1. त्रासदी का अर्थ एवं परिभाषा देते हुए उसके अंगों पर प्रकाश डालिए ?

2. त्रासदी के संगठन संबंधी अंगों का विवेचन कीजिए ।

3. जॉन ड्राइडन की त्रासदी विषयक विचारधारा पर विचार कीजिए।

5.12 उत्तर कुंजी

स्व-मूल्यांकन (क)

1. करुणा
2. द्वेष
3. आनन्दानुभूति
4. पेरिन्योइतिकेस
5. अरस्तू

स्व-मूल्यांकन (ख)

1. गलत
2. सही
3. सही
4. सही
5. सही

स्व-मूल्यांकन (ग)

1. छः
2. तीन
3. अरस्तू
4. चार
5. दोनों

स्व-मूल्यांकन (घ)

1. प्रस्तावना
2. त्रासदी
3. उत्तरगान
4. उपसंहार
5. उत्तरगान

स्व-मूल्यांकन (ङ)

1. जॉन ड्राइडन
2. 1631 से 1700
3. नाटक लेखन
4. 1663
5. 1665
6. उपर्युक्त सभी
7. दोनों

स्व-मूल्यांकन (च)

1. सही
2. गलत
3. सही
4. सही
5. सही

स्व-मूल्यांकन (छ)

1. अरस्तू
2. होरेस
3. अभिनय
4. वृंदगान
5. महाकाव्य

5.13 पठनीय पुस्तकें

1. पाश्चात्य काव्य शास्त्र- देवेन्द्रनाथ शर्मा, नेशनल पेपरबैक्स, 2023
2. पाश्चात्य साहित्य चिंतन- प्रो. निर्मला जैन, राधाकृष्ण प्रकाशन, 2017
3. उदात्त के विषय में- प्रो. निर्मला जैन, वाणी प्रकाशन, दिल्ली, 2004
4. पाश्चात्य काव्य शास्त्र की परम्परा- सं. डॉ. नगेन्द्र और सावित्री सिन्हा
5. काव्य में उदात्त तत्व- डॉ. नगेन्द्र और नेमिचन्द्र जैन, राजपाल एवं संस, दिल्ली

मैथ्यू अर्नाल्ड: कविता-जीवन की आलोचना

रूपरेखा

6.1 उद्‌देश्य एवं अपेक्षित परिणाम
6.2 प्रस्तावना
6.3 मैथ्यू अर्नाल्ड: काव्य प्रयोजन
स्व-मूल्यांकन (क)
स्व-मूल्यांकन (ख)
6.4 मैथ्यू अर्नाल्ड: काव्य और नैतिकता
स्व-मूल्यांकन (ग)
6.5 सारांश
6.6 कठिन शब्द
6.7 अभ्यासार्थ प्रश्न
6.8 उत्तर कुंजी
6.9 पठनीय पुस्तकें

6.1 उद्‌देश्य एवं अपेक्षित परिणाम

प्रिय विद्‌यार्थियो! प्रस्तुत आलेख का उद्‌देश्य आपको

- काव्य-जीवन की आलोचना के विषय में अर्नाल्ड के विचारों की जानकारी देना।
- मैथ्यू अर्नाल्ड के काव्य प्रयोजन से अवगत करवाना।
- मैथ्यू अर्नाल्ड के काव्य में नैतिकता के महत्व को स्थापित किया है उनकी जानकारी देना।
- इस पाठ का विस्तृत अध्ययन करने के पश्चात् आप मैथ्यू अर्नाल्ड के काव्य प्रयोजन को समझ सकेंगे इसके साथ ही मैथ्यू अर्नाल्ड के काव्य और नैतिकता को पूर्ण रूप से समझने में सक्षम होंगे।

6.2 प्रस्तावना:

मैथ्यू अर्नाल्ड ने काव्य को जीवन की आलोचना और व्याख्या के रूप में देखा। वह समकालीन भौतिक व्यवस्था के विपरीत बृहत्तर मानवीय मूल्यों पर आधारित संस्कृति

की स्थापना के पक्ष में था। उस समय के इंग्लैंड और योरुप में भौतिक लालसाएं बलवती हो रही थीं। विश्व के बड़े-बड़े भूभागों पर इंग्लैंड का शासन था। चारों ओर से धन इंग्लैंड में आ रहा था। मनुष्य के गौरव की कसौटी केवल एक थी- उसका धनी होना। मैथ्यू अर्नाल्ड ने सामाजिक परिस्थितियों से मुंह मोड़ने वाले साहित्य को अराजकता फैलाने वाला साहित्य कहा था। सच्चा काव्य जीवन का वैसा चित्रण नहीं करता जैसा यथार्थ में होता है। कवि जीवन की समीक्षा करता है और मानव-संस्कृति के पोषक उदात्त मूल्यों की स्थापना करता है। काव्य-सत्य और काव्य सौंदर्य के मिलान से कवि एक ऐसे सत्य की रचना करता है जो शाश्वत है और मानव जीवन के लिए आध्यात्मिक (न कि भौतिक) दृष्टि से कल्याणकारी हो।

"Poetry is, at bottom, a criticism of life."

कवि एक उपदेश का रूप धारण कर लेता है। उसका काम यही कह कर समाप्त नहीं हो जाता कि मनुष्य जी किस प्रकार रहे हैं। जीना कैसे चाहिए ¼How to live½ इसका संकेत करना कवि का मुख्य उद्देश्य है।

साहित्य तो जीवन की आलोचना है ही, आलोचना स्वयं में साहित्यिक सृजन से कम नहीं है। आलोचना के दो मार्ग हो सकते हैं। एक, स्थापित काव्य सिद्धान्तों के अनुसार रचना को अच्छा या बुरा कह देना, दो, कृति का गंभीर अध्ययन करके उसे सामाजिक संदर्भों और मानवीय मूल्यों की कसौटी पर रख कर परखना। अर्नाल्ड दूसरे प्रकार की आलोचना को ही वास्तविक आलोचना मानता है। अर्नाल्ड आलोचक को कृतिकार की भांति एक सर्जक मानता है। उसने जोर देकर कहा कि आलोचक सामाजिक दायित्व से आँखें नहीं मूंद सकता। अर्नाल्ड की सर्वप्रमुख विशेषता यही है कि उसने काव्य और जीवन का अविच्छिन्न संबंध स्थापित करके आलोचना को भी सामाजिक और सांस्कृतिक सरोकारों से जोड़ने का आग्रह किया। साहित्यकार और आलोचक दोनों समाज के जागरूक प्रहरी हैं। साहित्य रचना के संदर्भ में दो प्रकार की शक्तियां काम करती हैं। मनुष्य की सृजनात्मकता की शक्ति तथा दूसरी युग की प्रवृत्तियों। साहित्य का निर्माण दोनों के समन्वय से होता है। समीक्षक एक ऐसा व्यक्ति है जो सामाजिक परिस्थितियों, उनके मानव जीवन पर पड़ने वाले अच्छे और बुरे प्रभावों पर गंभीरता पूर्वक विचार करता है। इस प्रकार वह काव्य को दिशा-निर्देश देता है जिससे काव्य शाश्वत सांस्कृतिक मूल्य का वाहक बन जाता है। सृजन और समीक्षा की शक्तियों में सृजन का स्थान निःसंदेह पहला है क्योंकि काव्य रचना नहीं होगी तो समीक्षा की जरूरत ही नहीं पड़ेगी। किन्तु ऐसा कोई युग नहीं होता जब काव्य-रचना नहीं होती। काव्य-रचना को घटिया होने से बचाना समीक्षक का धर्म है। इस प्रकार साहित्यकार स्वयं भी समाज और जीवन का

आलोचक है। आलोचक समाज, जीवन और साहित्य का आलोचक है। अर्नाल्ड के अनुसार आलोचना की बस इतनी ही भूमिका है कि जो तत्त्व जगत के लिए सर्वोत्कृष्ट है, उन्हें समझे, उनका प्रचार करे जिससे अच्छे काव्य की रचना हो सके।

यहाँ कहा जा सकता है कि मैथ्यू अर्नाल्ड साहित्य को धर्म और नीति के बंधनों में बांध देता है। किन्तु गंभीरता से विचार किया जाए तो स्पष्ट होता है कि अर्नाल्ड जिन्हें मानव-मूल्य कहता है, वह धार्मिक मतमतान्तरों की सीमा से परे हैं। वह एक ऐसी मानव-संस्कृति के निर्माण का पक्षधर है जिसमें संकीर्णताओं से मुक्ति दिलाकर संपूर्ण मानव समाज को एक जीवंत पूर्ण इकाई के रूप में प्रस्तुत करने का लक्ष्य सिद्ध होगा। इस लक्ष्य की प्राप्ति के लिए काव्य की भूमिका सर्वाधिक महत्त्वपूर्ण है। काव्य जीवन की आलोचना ही नहीं करता, एक श्रेष्ठ जीवन के निर्माण की प्रेरणा भी देता है।

6.3 मैथ्यू अर्नाल्ड: काव्य प्रयोजन

मैथ्यू अर्नाल्ड कवि और आलोचक होने के साथ एक अध्यापक थे। इसीलिए काव्य की चर्चा करते समय उनके सामने एक सामाजिक परिदृश्य भी रहा। उन्हें आधुनिक अंग्रेजी आलोचना का युग-प्रवर्तक माना जाता है। 1849 ईस्वी में इनका पहला काव्य संग्रह प्रकाशित हुआ तथा 1865 में इनका आलोचना ग्रन्थ 'एसेज इन क्रिटिसिज़्म' प्रकाशित हुआ। इंगलैंड में यह युग विज्ञान और उद्योग की प्रगति का युग था। इंगलैंड एक साम्राज्यवादी शक्ति बन चुका था। विश्व के अनेक भूभागों पर इंग्लैंड का शासन स्थापित हो चुका था। भौतिक समृद्धि इंग्लैंड वासियों के चरणों का स्पर्श कर रही थी। ऐसे वातावरण में मैथ्यू अर्नाल्ड ने घोषणा की कि साहित्य और कविता को जीवन की आलोचना और व्याख्या में समर्थ होना चाहिए। More and more mankind will discover that we have to turn to poetry to interpret life for us, console us, to sustain us.

इस प्रकार मैथ्यू अर्नाल्ड का चिन्तन एक और समाज में व्याप्त कुरीतियों से दुखी था तो दूसरी और वह इन कुरीतियों के समाधान के लिए कविता को अनिवार्य उपकरण के रूप में देख रहा था। उसके अनुसार जीवन की व्याख्या और आलोचना कविता का मुख्य प्रयोजन था। मैथ्यू अर्नाल्ड जीवन की उन सभी विशेषताओं से दुखी था जो उसकी समकालीन सभ्यता की अनिवार्य चिह्नक थीं। यह सभ्यता पूर्णरूप से भौतिक लक्ष्यों पर केन्द्रित थी। मैथ्यू अर्नाल्ड ने इस सभ्यता को अपूर्ण जीवन के लक्षण कहा। उसके अनुसार एक व्यापक और मानवीय संस्कृति ही मनुष्य के लिए कल्याणकारी हो सकती थी। अर्नाल्ड के अनुसार मानव जीवन की पूर्णता का नाम संस्कृति है और इसकी प्राप्ति

काव्य द्वारा ही हो सकती है। कहा जाता है कि जिस प्रकार एक उच्छृंखल व्यक्ति को सही रास्ते पर लाने का प्रयास किया जाता है, ऐसा ही प्रयास अर्नाल्ड ने साहित्य और समाज में करना चाहा। अर्नाल्ड मानव समाज को विभाजित करके नहीं देखता था। वह मनुष्य के ऐसे कार्य-व्यापारों को महत्त्व देता है जो मानव मात्र के लिए शाश्वत हैं। इस प्रकार एक ऐसी संस्कृति का निर्माण जो शाश्वत मानव-मूल्यों पर आधारित हो, काव्य का श्लांघनीय प्रयोजन है।

मैथ्यू अर्नाल्ड इस बात से दुखी था कि उस समय के अधिकांश लोग दूसरों से अधिक धनी होने में ही अपना गौरव मानते थे। अर्नाल्ड ने ऐसे लोगों को संस्कृति विहीन लोग कहा। 1869 ईस्वी में उनकी प्रसिद्ध पुस्तक 'संस्कृति और अराजकता' (Culture and Anarchy) प्रकाशित हुई जिसमें जीवन को सुसंस्कृत बनाने वाली आध्यात्मिक परिस्थितियाँ उत्पन्न करने पर जोर दिया गया ताकि मनुष्य प्रेम, सुरुचि और आह्लाद की विशेषताएं पैदा कर सकें, उनका विकास कर सकें, इन्हें अपना सकें।

अर्नाल्ड का कहना था कि मनोरंजन प्रदान करना ही कवि और काव्य का उद्देश्य नहीं हो सकता। उसके अनुसार, 'वही कविता श्रेष्ठ है जिसमें निर्माण करने, पोषण करने और आनन्द प्रदान करने की क्षमता हो। आह्लाद, मनोरंजन, आनन्द की कसौटी यह है कि वह मनुष्य के जीवन का परिष्कार करे। उदात्त मूल्यों की प्रतिष्ठा ही संस्कृति और काव्य का लक्ष्य है। माधुर्य और आलोक संस्कृति के दो विशिष्ट गुण हैं। अभिप्राय यह कि मैथ्यू अर्नाल्ड काव्य के प्रयोजक के रूप में एक ऐसे मनोरंजन की मांग करता है जो मनुष्य को एक मानवीय संस्कृति के अंग के रूप में प्रस्तुत करे, जिसके आलोक में मनुष्य एक सच्चा मनुष्य बन सके।

मैथ्यू अर्नाल्ड ने बहुत साफ और जोरदार ढंग से काव्य और जीवन के आपसी सम्बन्ध की आवश्यकता स्थापित की। मनोरंजन काव्य का उद्देश्य है किन्तु जिसे अर्नाल्ड मनोरंजन कहता है, वह सामान्य मन-बहलाव नहीं है। इस स्तर का साहित्य अर्नाल्ड की दृष्टि में साहित्य है ही नहीं। साहित्य तो वह है जो आनन्द प्रदान करके मनुष्य को एक सांस्कृतिक प्राणी के रूप में जीने की क्षमता प्रदान करे। उत्कृष्ट काव्य वह है जो उत्कृष्ट आनन्द का सृजन करता है।

काव्य जीवन को अधिक सुन्दर बनाता है। इसका प्रयोजन मानव संस्कृति का निर्माण करना, स्वार्थों से मुक्ति प्रदान करना और एक मूल्य-आधारित समाज का निर्माण करना है। मानवता के साथ पशुता का भी अस्तित्व रहता है। काव्य का प्रयोजन यही है कि वह पशुता से मुक्ति दिलाकर मनुष्य का परिसंस्कार करे।

इस प्रकार अर्नाल्ड नैतिकता को काव्य के एक महत्त्वपूर्ण प्रयोजन के रूप में स्वीकार करता है। कला के लिए और कला जीवन के लिए- दो सिद्धान्तों के संघर्ष में अर्नाल्ड कला की सिद्धि जीवन के सुधार में ही मानता है। जीवन के साथ साहित्य का यह संबंध किसी भी प्रकार उस प्रयोजन से भिन्न है जिसके अन्तर्गत साहित्य को राजनीति के प्रचार का उपकरण माना जाता है। राजनीति या राज्य के उद्देश्यों की पूर्ति अर्नाल्ड द्वारा प्रस्तुत काव्य-प्रयोजनों के संदर्भ में कहीं नहीं आती। अर्नाल्ड मानव जीवन को एक सांस्कृतिक समग्र के रूप में देखता है और इसी मस्तिष्क की स्थापना कविता का प्रयोजन है।

साहित्य के सृजन में दो प्रकार की क्षमताओं की भूमिका होती है-सृजन की शक्ति तथा युग की प्रवृत्तियों। कवि के पास युगीन प्रवृत्तियों की समीक्षा करने की भी शक्ति होती है। अपनी सृजनात्मक प्रति भा के बल पर वह युगीन प्रवृत्तियों को ऐसी दिशा दे सकता है जो मानव समाज को परस्पर प्रेम और सहयोग जैसे गुणों के सूत्रों में बांध देती है।

- **स्व-मूल्यांकन (क)**

प्रिय विद्यार्थियो! इस पाठ में अभी तक प्राप्त ज्ञान का मूल्यांकन आप निम्नलिखित रिक्त स्थान भरकर करें।

1. मैथ्यू अर्नाल्ड कवि और आलोचक होने के साथ एक ------ थे।
2. ------ ईस्वी में इनका पहला काव्य संग्रह प्रकाशित हुआ।
3. मैथ्यू अर्नाल्ड का 1865 में आलोचना ग्रन्थ ----- प्रकाशित हुआ।
4. इंग्लैंड में यह युग विज्ञान और ----- की प्रगति का युग था।
5. मैथ्यू अर्नाल्ड ने घोषणा की कि साहित्य और ----- को जीवन की आलोचना और व्याख्या में समर्थ होना चाहिए।

- **स्व-मूल्यांकन (ख)**

प्रिय विद्यार्थियो! निम्नलिखित प्रश्नों के उत्तर सही या गलत चिन्ह द्वारा देकर आप अभी तक प्राप्त ज्ञान का स्व-मूल्यांकन करें।

1. मैथ्यू अर्नाल्ड के अनुसार जीवन की व्याख्या और आलोचना कविता का मुख्य प्रयोजन था। ( )
2. मैथ्यू अर्नाल्ड जीवन की उन सभी विशेषताओं से दुखी था जो उसकी समकालीन सभ्यता की अनिवार्य चिह्नक थीं। ( )
3. अर्नाल्ड के अनुसार मानव जीवन की पूर्णता का नाम संस्कृति नहीं है और न ही इसकी प्राप्ति काव्य द्वारा ही हो सकती है। ( )

4. 1869 ईस्वी में उनकी प्रसिद्ध पुस्तक 'संस्कृति और अराजकता' प्रकाशित हुई। ( )
5. मैथ्यू अर्नाल्ड नैतिकता को काव्य के एक महत्वपूर्ण प्रयोजन के रूप में स्वीकार करता है।( )

6.4 मैथ्यू अर्नाल्ड: काव्य और नैतिकता

साहित्य में आधुनिकता के संदर्भ में मैथ्यू अर्नाल्ड लिखते हैंः-

एक बार महान विचारक बुद्ध के समक्ष उनका एक शिष्य प्रस्तुत हुआ। वह अपनी तपस्या और साधना के अंतिम प्रकरण में कोई कठिन कार्य करने की अनुमति मांग रहा था। बुद्ध ने शिष्य से कहा- 'तो जाओ 'पूर्ण', तुमने मुक्ति प्राप्त कर ली है; अब अन्य लोगों को मुक्ति प्रदान करो। तुम्हें संतुष्टि प्राप्त हो चुकी है, अब औरों को सांत्वना दो। तुम स्वयं तो किनारे पर पहुंच गए हो, अब दूसरों को भी भवसागर की कठिनाइयों को पार करने में सहायता दो।'

इस संदर्भ पर अपनी टिप्पणी करते हुए अर्नाल्ड कहते हैं कि जिस युग में बुद्ध ने मुक्ति की बात की थी, वह एक नैतिक तल की मुक्ति थी, वह मुक्ति अहंकार, क्रोध, स्वार्थ जैसे तत्वों से मुक्त होने का संकेतक थी। दूसरी ओर आधुनिक युग में मनुष्य एक अन्य प्रकार की मुक्ति की खोज में व्यस्त है। सारी मानव जाति एक बौद्धिक मुक्ति की तलाश में व्याकुल है।

मैथ्यू अर्नाल्ड का युग धनलोलुपता का युग था। मनुष्य के सभी प्रयास भौतिक वैभव की प्राप्ति के लिए लक्षित थे। अर्नाल्ड इस स्थिति से चिन्तित था। वह काव्य को ऐसे उपकरण के रूप में प्रस्तुत करना चाहता था जो मनुष्य को स्वार्थ और लोलुपता की सीमाओं से मुक्ति दिला सके। इंग्लैंड उस समय एक सार्वभौमिक शक्ति थी। इस देश के वासी संसार के अन्य भूभागों में रहने वाले मनुष्यों को हीन दृष्टि से देखते थे, असभ्य मानते थे। अर्नाल्ड ने, ऐसी परिस्थिति में एक वैश्विक संस्कृति का स्वप्न देखा। यह संस्कृति मानव-मूल्यों पर आधारित होगी और ये मूल्य एक देश या समय के लिए नहीं होंगे।

माना जा सकता है कि अर्नाल्ड के विचार ईसाई धर्म के सिद्धान्तों से प्रभावित थे। वह एक ऐसे परिवेश में रहता था जहां ईसाइयत ही प्रमुख धर्म था। ऐसे में यदि उसकी नैतिकता सम्बन्धी धारणाएं बाइबल से प्रभावित हुई हों तो हमें न तो आश्चर्य करना चाहिए, न ही इसके लिए अर्नाल्ड किसी प्रकार की भर्त्सना का अधिकारी है।

अर्नाल्ड काव्य को किसी समुदाय विशेष से जोड़ कर नहीं देखता। वह नैतिक मूल्यों की स्थापना कविता का मुख्य प्रयोजन मानता है। लेकिन उसकी नैतिकता संबंधी

धारणा सार्वदेशिक है। अर्नाल्ड मानता था कि काव्य के विषयों का चुनाव ऐसा होना चाहिए कि साहित्य देश और काल की सीमाओं को लांघ कर शाश्वत काव्य की कोटि प्राप्त कर सके। अर्नाल्ड मानता था कि कवि को उत्कृष्ट विषयों का चयन करना चाहिए। श्रेष्ठ कार्य और विषय वही होते हैं जो मानव मात्र के लिए कल्याणकारी होते हैं। जिसे समाज का उच्च वर्ग कहा जाता है, वह स्वार्थी होता है। काव्य को ऐसे मानव-समुदाय के कल्याण का लक्ष्य अपने सामने रखना चाहिए जो श्रेष्ठ सामाजिक गुणों को ग्रहण करने के लिए तैयार है। अर्नाल्ड साहित्य को समाज की आलोचना मानता है। वह आलोचक को भी निर्देश देता है कि उसी साहित्य को श्रेष्ठ घोषित करे जो विशाल मानव-संस्कृति की स्थापना में सहायक हो।

अर्नाल्ड मानता है कि कवि और आलोचक को एक धर्मोपदेशक के उत्साह के साथ काव्य का निर्णय करना चाहिए। इसका अभिप्राय यह है कि कवि और आलोचक नैतिक सिद्धान्तों की अनदेखी न करे। वे सजग रहें कि कहीं नैतिकता को हानि पहुंचाने वाले साहित्य की रचना तो नहीं हो रही। आलोचक समाज के प्रति ही नहीं, काव्य के प्रति भी उत्तारदायी है। यदि आलोचक नैतिक आग्रहों से समझौता नहीं करता तो साहित्य भी समाज में व्याप्त कुरीतियों को महिमा मंडित करने का साहस नहीं करेगा।

अर्नाल्ड उस यथार्थ के चित्रण को महत्त्व नहीं देता जो कुरूप है और जिसका मानव-मन पर श्रेष्ठ प्रभाव नहीं होता। काव्य समाज का चित्रण ही नहीं करता, उसकी आलोचना भी करता है। यह आलोचना ही साहित्य को श्रेष्ठ साहित्य बनाती है।

अर्नाल्ड की सबसे बड़ी विशेषता यह है कि उसने साहित्य को व्यापक सांस्कृतिक परिप्रेक्ष्य में देखा। उसके अनुसार मनुष्य के कल्याण-साधक मूल्य सभी देशों और कालों में अपरिवर्तित रहते हैं। काव्य इन्हीं मूल्यों की खोज और स्थापना करता है।

6.4.1 स्व-मूल्यांकन (ग)

प्रिय विद्यार्थियो! इस पाठ से आपको मैथ्यू अर्नाल्ड: काव्य और नैतिकता का जो ज्ञान प्राप्त हुआ है उसका स्व-मूल्यांकन आप निम्नलिखित बहुविकल्पीय प्रश्नों द्वारा करें।

बहुविकल्पीय प्रश्न:-

1) किसने अपने शिल्प से कहा- 'तो जाओ पूर्ण तुमने मुक्ति प्राप्त कर ली है, अब अन्य लोगों को मुक्ति प्रदान करो। तुम्हें संतुष्टि प्राप्त हो चुकी है अब औरों को सांत्वना दो। तुम स्वयं तो किनारे पर पहुंच गए हो, अब दूसरों को भी भवसागर की कठिनाइयों को पार करने में सहायता दो।''

क) बुद्ध ख) मैथ्यू अर्नाल्ड
ग) अरस्तू घ) प्लेटो

2) मैथ्यू अर्नाल्ड का युग किसका युग था?
क) आधुनिकता ख) धनलोलुपता
ग) दोनों घ) दोनों में से कोई नहीं

3) मैथ्यू अर्नाल्ड के विचार किस धर्म के सिद्धान्तों से प्रभावित थे?
क) हिन्दू धर्म ख) सिख धर्म
ग) ईसाई धर्म घ) उपर्युक्त सभी

4) मैथ्यू अर्नाल्ड नैतिक मूल्यों की स्थापना किसका मुख्य प्रयोजन मानता है?
क) कविता ख) नाटक
ग) उपन्यास घ) कहानी

5) किसके अनुसार कवि और आलोचक को एक धर्मोपदेशक के उत्साह के साथ काव्य कास निर्णय करना चाहिए?
क) प्लेटो ख) अरस्तू
ग) लोजाइनस घ) मैथ्यू अर्नाट्ड

6.5 सारांश

भौतिकतावादी अराजकता से समाज को मुक्ति दिला कर एक सांस्कृतिक विश्व की स्थापना अर्नाल्ड का उद्देश्य है। संस्कृति के वह दो गुण मानता है- माधुर्य और प्रकाश. सारे समाज को श्रेष्ठ विचारों से परिपूर्ण करना ही अर्नाल्ड की दृष्टि में काव्य और काव्यालोचन का उद्देश्य है। अर्नाल्ड की विचारधारा बहुत हद तक प्लेटो जैसे दार्शनिक से मिलती-जुलती है। यदि प्लेटो ने होमर जैसे कवियों को अपनी 'रिपब्लिक' से बहिष्कृत करना चाहा तो अर्नाल्ड ने भी बहुत से श्रेष्ठ साहित्यकारों की कटु आलोचना की। प्लेटो के विचार उसकी समकालीन परिस्थितियों से उपजे थे। ऐसा ही अर्नाल्ड के बारे में भी कहा जा सकता है। किन्तु अर्नाल्ड ने जिस समाज को दृष्टि में रखकर बात की, वह एक देशीय नहीं था।

अर्नाल्ड मानता था कि मनुष्य की बौद्धिक उच्चता तथ्यों की निष्पक्ष ढंग से पूर्वग्रहमुक्त समीक्षा शक्ति में निहित है।

6.6 कठिन शब्द

1. श्लांघनीय = प्रशंसनीय, सराहने योग्य
2. शाश्वत = संघ रहने वाला, निरंतर।

3. उत्छृंखल = स्वेच्छाचारी, मनमानी करने वाला
4. परिदृश्य = चारों ओर दिखने वाला दृश्य
5. निष्पक्ष = तटस्थ, बिना पक्ष का
6. समीक्षा = परीक्षण, गुण-दोषों का अहवान
7. बहिष्कृत = त्यागा हुआ, निकाला हुआ।
8. माधुर्य = मधुरता, मिठास।
9. प्रति संस्कार = पुर्नर्निर्माण, सुधारना।
10. अविच्छिन्न = अटूट, अखंडित।

6.7 अभ्यासार्थ प्रश्न:

1. कविता जीवन की आलोचना है। अर्नाल्ड की इस परिभाषा को स्पष्ट करें।

2. मैथ्यू अर्नाल्ड की काव्य संबंधी मान्यताओं पर विचार व्यक्त करें ।

6.8 उत्तर कुंजी

स्व-मूल्यांकन (क)

1. अध्यापक
2. 1849
3. एसेज इन क्रिटिसिज्म
4. उद्योग
5. कविता

स्व-मूल्यांकन (ख)

1. सही
2. सही
3. गलत
4. सही
5. सही

स्व-मूल्यांकन (ग)

1. बुद्ध
2. धनलोलुपता
3. ईसाइ धर्म
4. कविता
5. मैथ्यू अर्नाल्ड

6.9 पठनीय पुस्तकें

1. पाश्चात्य काव्य शास्त्र- देवेन्द्रनाथ शर्मा, नेशनल पेपरबैक्स, 2023
2. पाश्चात्य साहित्य चिंतन, प्रो. निर्मला जैन, राधाकृष्ण प्रकाशन, 2017
3. उदात्त के विषय में, डॉ. निर्मला जैन, वाणी प्रकाशन, दिल्ली, 2004
4. पाश्चात्य काव्य शास्त्र की परम्परा, सं. डॉ. नागेन्द्र और सावित्री सिन्हा
5. काव्य में उदात्त तत्व, डॉ. नगेन्द्र और नमिजन्द्र जैन, राजपाल एवं संस, दिल्ली

वर्ड्सवर्थ: काव्य-भाषा

रूपरेखा

7.1 उद्देश्य एवं अपेक्षित परिणाम
7.2 प्रस्तावना
7.3 **वड्स्वर्थ :** काव्य भाषा
स्व-मूल्यांकन (क)
7.3.1 छंद
स्व-मूल्यांकन (ख)
7.3.2 काव्य और कल्पना
7.3.3 काव्य-प्रयोजन
स्व-मूल्यांकन (ग)
7.4 सारांश
7.5 कठिन शब्द
7.6 अभ्यासार्थ प्रश्न
7.7 उत्तर कुंजी
7.8 पठनीय पुस्तकें

7.1 उद्देश्य एवं अपेक्षित परिणाम

प्रिय विद्यार्थियो! प्रस्तुत आलेख का उद्देश्य आपको

- काव्य की भाषा के विषय में वड्स्वर्थ के मतों की जानकारी देना।
- काव्य के तत्वों की जानकारी देना।
- काव्य और कल्पना एवं काव्य के प्रयोजन से अवगत करवाना।

प्रस्तुत पाठ का विस्तृत अध्ययन करने के उपरांत आप वड्स्वर्थ की काव्य भाषा तथा छंद को समझ सकेंगे इसके साथ ही वड्स्वर्थ के काव्य और कल्पना तथा काव्य-प्रयोजन को पूर्ण रूप से समझने में सक्षम होंगे।

7.2 प्रस्तावना:

पाश्चात्य काव्यशास्त्र के अनुसार काव्य के चार तत्त्व निर्धारित किए गए हैं-- कल्पना-तत्त्व; बुद्धि-तत्त्व, भाव-तत्त्व तथा (भाषा)-शैली तत्त्व। कल्पना-तत्त्व, बुद्धि तत्त्व

तथा भाव तत्त्व भाषा के भाव-पक्ष या विषय-वस्तु से संबंधित है, जबकि (भाषा)-शैली तत्त्व का संबंध अभिव्यक्ति-पक्ष या कला-पक्ष से है। भाव-पक्ष को काव्य की आत्मा और कला-पक्ष को इसका शरीर माना जा सकता है। भाव-पक्ष तथा कला-पक्ष का चोली-दामन का संबंध है। भाव की प्रकृति के अनुसार अभिव्यक्ति अपना रूप धारण करती है। वस्तुतः सफल कवि या लेखक की पहचान यही है कि वह भाव-पक्ष तथा कला-पक्ष का समुचित सामंजस्य स्थापित करे। "गद्यं कवीनाम् निकषं बंदति" अर्थात् गद्य कवियों की कसौटी है; इस कथन में यही बात छिपी हुई है कि गद्यकार अपनी शैली का समुचित प्रयोग करे जिससे उसका भाव सहज ही बोधगम्य हो।

7.3 वर्ड्सवर्थ: काव्य-भाषा

भारतीय काव्यशास्त्र की परंपरा में शैली शब्द पुराना है। इसका पर्याय रीति है। आठवीं-नौवीं शताब्दी के बीच वामन ने रीति सम्प्रदाय की प्रतिष्ठा करते हुए कहा कि काव्य की आत्मा रीति है। 1 रीति को समझाते हुए वामन कहते हैं कि रीति विशिष्ट पद-रचना है। 2 शब्दों के समुचित विधान को 'रीति' कहते हैं। शब्द-विन्यास मधुर, कठोर तथा सामान्य होता है जिसको क्रमश: वैधर्भी, गौड़ीय तथा पाँचाली रीति कहा जाता है।

काव्यशास्त्र के अनुसार शब्द और अर्थ का अन्योन्याश्रित संबंध है। अर्थ (भावपक्ष) जैसा होगा, भाषा-शैली तथा छंद वैसा ही रूप ग्रहण करेगा। शब्द और अर्थ का संबंध वैसा ही माना गया है जैसा संबंध शरीर और आत्मा का। जिस प्रकार शरीर तथा आत्मा की अलग-अलग कल्पना करना बहुत ही कठिन कार्य है, ठीक उसी प्रकार 'शब्द' और 'अर्थ' संपृक्त हैं। शब्दार्थ के साहित्य के निर्माण में कवि की प्रति भा निर्धारित होती है। साहित्य शब्द और अर्थ की वह अवस्थिति है जो न्यूनता और अधिकता से रहित, परस्पर-स्वर्द्धि भाव से रमणीय और सौंदर्य-शालिनी होती है। इस प्रकार की अवस्थिति एक सहृदय के लिए आहलादकारी सिद्ध होती है।

शब्द और अर्थ के सहभाव के संबंध में महाकवि कालिदास ने एक अनूठी कल्पना प्रस्तुत की है। कवि जगत के माता-पिता पार्वती और शंकर की वंदना करता जो एक-दूसरे से उसी रूप में संपृक्त हैं जिस प्रकार शब्द और अर्थ। वस्तुतः शब्द (शैली) और अर्थ एक-दूसरे से अलग अविभासित होते हैं किंतु अपने वास्तविक रूप में वे एक-दूसरे से पृथक् नहीं हैं। शब्द कहने मात्र से अर्थ का बोध हो जाता है। गोस्वामी तुलसीदास ने शब्द और अर्थ के सहभाव को इस रूप में कहा है

गिरा अरथ जल बीचि सम कहियत भिन्न न भिन्न।
बंदौं सीताराम पद जिनहिं परम प्रिय खिन्न।।

इस परिदृश्य में कवि वर्ड्सवर्थ के शैली संबंधी विचारों को देखें तो उनके बारे में कई महत्त्वपूर्ण बातें उजागर होती हैं। अठारहवीं शताब्दी के अंत में ड्राइडन तथा दूसरे कवियों एवम् आचार्यों ने जिस काव्य-शैली को मान्य माना था, कालांतर में वह शैली रूढ़ मानी जाने लगी। वर्ड्सवर्थ की प्रतिक्रिया इस शैली के प्रति और भी तीव्र थी। उन्हें यह शैली कृत्रिम, बोझिल तथा भावशून्य प्रतीत हुई। जिस प्रकार टी. एस. इलियट जैसे विद्वान प्रति दिन की बोलचाल की भाषा के समर्थक रहे हैं, उसी प्रकार वर्ड्सवर्थ ने कहा कि उनकी भाषा अधिक प्राकृतिक तथा स्वाभाविक है। वर्ड्सवर्थ से पहले काव्य-भाषा की शब्दावली निश्चित की गई थी और उनमें से निम्न तथा साधारण शब्दों का बहिष्कार किया गया था। वर्ड्सवर्थ को विशिष्ट काव्यगत युक्तियाँ-मानवीकरण, वक्रोक्ति विपयर्य वैषम्य रुचिकर नहीं थे। वे पौराणिक दंतकथाओं तथा भावाभास के अनावश्यक प्रयोग के भी विरोधी थे। उन्होंने विलक्षणता दूरारूढ़ कल्पना अतिश्योक्ति, शाब्दिक चमत्कार तथा अस्पष्टता की भी आलोचना की, जो सत्रहवीं शताब्दी में प्रमुख शैलियाँ थीं। वर्ड्सवर्थ के कहने का आशय यही है कि काव्य की भाषा सर्वप्रचलित भाषा हो। यह साधारण लोगों की भाषा होती है तथा इसे हम जनभाषा भी कह सकते हैं।

वर्ड्सवर्थ ने भाषा से कृत्रिमता दूर करने के लिए सरलता पर बल दिया। उनके समय में अलंकृत भाषा का यांत्रिक अनुकरण हो रहा था। वर्ड्सवर्थ की मान्यता थी कि सरल और ग्रामीण जीवन से यदि विषय चुने जाएँगे तो भाषा स्वयं सरल हो जाएगी। उनके अनुसार कवि का कर्त्ताव्य यह है कि वह पाठक को जीवन तथा जगत की समीपता से बाँधे रखे।

वर्ड्सवर्थ के अनुसार काव्यभाषा जनसाधारण की भाषा हो तथा छंदोबद्ध रचना तथा गद्य की भाषा में न तो कोई तात्विक अंतर होता है न ही हो सकता है। इस मान्यता के लिए उन्होंने कहा कि ''गद्य की भाषा और कविता की भाषा दोनों की अभिव्यंजना करने वाली इंद्रिय तथा दोनों को ग्रहण करने वाली इंद्रिय एक ही है, इनके परिच्छेद एक ही तत्त्व से बने होते हैं और इनकी राग-रूचि भी परस्पर समान होती है।''1

वस्तुतः मूल प्रश्न यह है कि जनसाधारण की भाषा क्या है? क्या सर्वप्रचलित भाषा ही जनभाषा है? क्या जनभाषा वह भाषा है जो सहज ही बोधगम्य हो? आलोचकों का कहना है कि वर्ड्सवर्थ की अधिकांश रचनाओं में इस भाषा का प्रयोग नहीं हुआ है। स्वयं उन्होंने इस बात का अनुभव किया कि काव्य-भाषा के बारे में उनके विचार उनकी काव्य-रचना से मेल नहीं खाते। कालांतर में उन्होंने ग्राम्य-भाषा में सुधार और परिष्कार की बात की। तदनुसार वे कहते हैं कि काव्य-भाषा के लिए सही तथा उपयुक्त शब्दों का चुनाव होना चाहिए, यों ही ग्राम्य भाषा का चुनाव नहीं किया जाना चाहिए। कवि-

आलोचक का कहना है कि काव्य-भाषा सरल, सीधी और आडंबरविहीन होनी चाहिए और वह पाठक के हृदय में अरूचि तथा वितृष्णा पैदा न करे। वर्ड्सवर्थ का विश्वास है कि इसी विधि से हम ग्राम्यत्व, तुच्छता तथा सामान्यता के दोषों से बच सकते हैं।

वर्ड्सवर्थ के अनुसार भाषा में बोधगम्यता होनी चाहिए। इसका आशय यह है कि काव्य-भाषा सबकी समझ में आ सके। यहाँ सुमित्रानंदन पंत की निम्नलिखित पंक्तियाँ उद्धृत की जा सकती हैं जिसमें इस बात पर बल दिया गया है कि काव्य-भाषा अलंकार-विहीन होनी चाहिएः

तुम जन-गण में वहन कर सको मेरे विचार।
वाणी मेरी चाहिए तुम्हें क्या अलंकार।।

वर्ड्सवर्थ के भाषा-शैली संबंधी विचार उनके काव्य-संबंधी विचारों से घनिष्ठ संबंध रखते हैं। कवि कविता को भावावेग का उच्छलन मानते हैं। भावोच्छलन के समय भाषा हृदय से निकलती है, वह चिंतन और मनन के उपरांत गढ़ी हुई नहीं है। जिस प्रकार चिंतन की प्रक्रिया से गुज़रकर कवि का मन मस्तिष्क इतना परिष्कृत हो जाता है कि "उसका सहज भावावेग उच्चकोटि का और प्राणवान तथा ऊर्जायुक्त होता है, उसी प्रकार सच्चे तथा विवेकपूर्ण चुनाव (True and judicious selection) से भाषा गरिमामंडित, सजीव और सप्राण हो जाती है वर्ड्सवर्थ भावोच्छलन के पक्ष में है किंतु उनका "भावोच्छलन लापरवाह या विवेकहीन भावोच्छलन न होकर विचारवान व्यक्ति का भावोच्छलन है। इसका अर्थ यह हुआ कि वर्ड्सवर्थ की काव्य-रचना में सहज भावोच्छलन है किंतु उस पर कवि की सचेतनता तथा विवेक का पूर्ण अंकुश है। गोस्वामी तुलसीदास की रचनाओं में कहीं-कहीं अति-भावुकता के स्थल पढ़ने को मिलते हैं किंतु कवि वहाँ भी विचारवान तथा चेतन अवस्था में बात करते दिखाई देते हैं।

- **स्व-मूल्यांकन (क)**

प्रिय विद्यार्थियो! इस पाठ में अभी तक प्राप्त ज्ञान का मूल्यांकन आप निम्नलिखित रिक्त स्थान भरकर करें।

1. भारतीय काव्यशास्त्र की परंपरा में शैली (स्टाइल) शब्द पुराना है। इसका पयार्य ---- है।
2. आठवीं-नौवीं शताब्दी के बीच वामन में रीति संप्रदाय की प्रतिष्ठा करते हुए कहा कि काव्य की ---- रीति है।
3. रीति को समझाते हुए वामन कहते हैं कि रीति विशिष्ट ---- है।
4. शब्दों के समुचित विधान को ---- कहते हैं।

5. शब्द और अर्थ का संबंध वैसा ही माना गया है जैसा संबंध शरीर और ---- का।
6. वड्स्वर्थ की विशिष्ट काव्यगत युक्तियाँ मानवीकरण, वक्रोक्ति, विपपर्य ----- रुचिकर नहीं थे।
7. वड्स्वर्थ ने भाषा से कृत्रिमता दूर करने के लिए ---------पर बल दिया।
8. वड्स्वर्थ की मान्यता थी कि सरल और ग्रामीण जीवन से यदि विषय चुने जाएँगे तो भाषा स्वयं -----जो जाएगी।
9. वड्स्वर्थ के अनुसार भाषा में ------- होनी चाहिए।
10. वड्स्वर्थ के भाषा-शैली संबंधी विचार उनके ----- विचारों से घनिष्ठ संबंध रखते हैं।

7.3.1 छंद

वर्ड्सवर्थ कविता को छंदमयी मानते हैं। छंद के कारण ही कवि को एक विशेष प्रकार की भाषा का प्रयोग करना चाहिए। वह जिस प्रकार भाषा के प्रयोग तथा चयन पर बल देते हैं, उसी प्रकार छंद के चयन पर भी बल देते हैं।

कवि वर्ड्सवर्थ के अनुसार छंद उपयुक्त नियमित तथा एकविध होना चाहिए। उसके नियम निश्चित होने चाहिए। वे छंद के प्रयोग को अनिवार्य नहीं मानते किंतु छंद के प्रयोग की महत्ता तथा अनिवार्यता से वे परिचित दिखाई देते हैं। वर्ड्सवर्थ की मान्यता है कि करूण स्थिति (करूण रस) को उजागर करने के लिए छंदमयी रचना में जितना सफल प्रयोग हो सकता है, उतना गद्य में नहीं। कवि की आस्था है कि छंद विषय को संतुलित करता है तथा पाठक को आनंद प्रदान करता है।

वर्ड्सवर्थ की मान्यताओं का खंडन किया गया है। कॉलरिज जैसे कवि-आलोचक इस बात से सहमत नहीं हैं कि ग्राम्य-भाषा तथा काव्य-भाषा की समीपता का अंतरंग संबंध है। वर्ड्सवर्थ काव्यभाषा तथा सामान्य जनभाषा में कोई मौलिक अंतर नहीं मानते हैं, वह कालरिज को मान्य नहीं है। वस्तुतः वर्ड्सवर्थ कृत्रिम भाषा-शैली का बहिष्कार करना चाहते थे, पर उन्होंने इस बात पर आवश्यकता से अधिक बल दिया। उन्होंने कल्पना शक्ति पर भी बहुत बल दिया। इसी प्रकार शैली की परिशुद्धता की अपेक्षा उन्होंने भावपक्ष की महत्ता को उजागर किया।

संक्षेप में वर्ड्सवर्थ ने काव्य-रचना-प्रक्रिया के आधार पर काव्य का विवेचन किया। उन्होंने काव्य में भाव तत्त्व (राग तत्त्व) की की प्रतिष्ठा की। इसी प्रकार कवि-आलोचक ने जनसाधारण के भावों और सामान्य-भाषा (जनभाषा) को महत्त्व दिया। वे रूढ़, अलंकृत, आडंबरपूर्ण तथा कृत्रिम भाषा के विरोधी थे।

- **स्व-मूल्यांकन (ख)**

प्रिय विद्यार्थियो! निम्नलिखित प्रश्नों के उत्तर सही या गलत चिन्ह द्वारा देकर आप अभी तक प्राप्त ज्ञान का स्व-मूल्यांकन करें।

1. वड्स्वर्थ कविता को छंदमयी मानते हैं। ( )
2. कवि वड्स्वर्थ के अनुसार छंद उपयुक्त नियमित तथा एकविध होना चाहिए। ( )
3. वड्स्वर्थ की मान्यता है कि करुण स्थिति (करुण रस को उजागर करने के लिए छंदमयी रचना में जितना सफल प्रयोग हो सकता है, उतना गद्य में नहीं। ( )
4. वड्स्वर्थ काव्यभाषा तथा सामान्य जनभाषा में मौलिक अंतर मानते हैं। ( )
5. शैली की परिशुद्धता की अपेक्षा वड्स्वर्थ ने भावपक्ष की महत्ता को उजागर नहीं किया। ( )

7.3.2 काव्य और कल्पना:

काव्य शब्द का प्रयोग काव्यशास्त्र में व्यापक तथा संकुचित दोनों अर्थों में किया जाता है। व्यापक अर्थ में काव्य 'साहित्य' शब्द का पर्यायवाची है तथा कविता के अतिरिक्त इसमें साहित्य की अन्य विधाएँ, जैसे कथा-साहित्य (उपन्यास तथा कहानी), निबंध, रेखाचित्र, संस्मरण, जीवनी आत्मकथा आदि को सम्मिलित किया जा सकता है। संकुचित या सीमित अर्थ में काव्य का क्षेत्र केवल कविता तथा उसकी विभिन्न विधाओं तक परिसीमित किया जा सकता है।

काव्य संपूर्ण साहित्य की सुरभि है, उसमें साहित्य का सारा संसार अंतर्निहित है। काव्य में शुद्ध अनुभूति की अभिव्यक्ति पूर्ण तीव्रता तथा गंभीरता से होती है। वस्तुतः काव्य के लिए जो सत्य है, वह साहित्य के लिए भी है। काव्य की सुरभि को हम केवल कविता तक ही परिसीमित नहीं कर सकते हैं।

पाश्चात्य काव्यशास्त्र के आचार्यों तथा अन्य काव्य-आलोचकों ने काव्य की जो परिभाषाएँ निर्धारित की हैं, उनके आधार पर कह सकते हैं कि कल्पना काव्य का एक महत्त्वपूर्ण तत्त्व है। अंग्रेजी काव्यशास्त्र के एक प्रसिद्ध विद्वान शैले के अनुसार "सामान्य अर्थ में कविता को कल्पना की अभिव्यक्ति के रूप में परिभाषित किया जा सकता है।" हडसन महोदय के अनुसार"काव्य कल्पना और संवेग के माध्यम से जीवन की व्याख्या है।" इन परिभाषाओं से स्पष्ट होता है कि कल्पना काव्य का अनिवार्य तत्त्व है तथा सार्थक कल्पना के बिना साहित्य का अस्तित्व अधूरा है। कॉलरिज का कहना है कि दार्शनिक हुए बिना एक व्यक्ति एक महान कवि नहीं हो सकता। इस संदर्भ में यह

कथन बुहत ही सटीक लगता है, "जहाँ न जाए रवि, वहाँ जाए कवि।" कवि की उड़ान बहुत ऊँची होती है। वह समय की सीमाओं से तथा आकार प्रदान करता है। ऊपर उठकर जो कुछ कहता है, वह सार्वदेशिक, सार्वकालिक तथा सार्वभौम होता है। कल्पना ही वह शक्ति है जिसके आधार पर कवि या कलाकार अपनी नवीन सृष्टि को रूप कल्पना-शक्ति के माध्यम से ही कवि या साहित्यकार उन बाह्य वस्तुओं के बिंब का निर्माण करता है जो इंद्रियों के सामने उपस्थित नहीं रहतीं। यह कवि के मस्तिष्क की रचनात्मक शक्ति है। रचनात्मक कल्पना और मौलिकता में घनिष्ठ संबंध होता है। जिसमें रचनात्मक कल्पना होती है, उसमें मौलिकता भी होती है। कवि अपनी इसी कल्पना-शक्ति के सहारे ऐसा चित्र निर्मित करता है जो सहृदय पाठक को अनायास ही अपनी ओर आकृष्ट करता है तथा उसे रस-विभोर कर देता है। कल्पना ही वास्तव में ऐसा साधन है, जिससे बिंब या प्रतीक का निर्माण होता है, अलंकारों की निर्मिति होती है तथा अभिव्यक्ति में वक्रता आती है। कल्पना-शक्ति के सहारे ही कवि की अभिव्यंजना-शक्ति का विकास होता है तथा शब्द-शक्ति में नई अर्थवत्ता आती है।

1. कवि-कल्पना के बारे में वर्ड्सवर्थ के विचारों में एकरसता नहीं हैं। उनके विचार बहुआयामी हैं। वर्ड्सवर्थ एक ओर कल्पना के अंतर्गत बिंबों के स्वच्छंद पुनः सर्जन और उसके संयोजन को लेते हैं, तो कभी उसे बौद्धिक अंतर्दृष्टि मानते हैं। बौद्धिक अंतर्दृष्टि की बात करते हुए वर्ड्सवर्थ नव्यशास्त्रवादियों की भाषा में बात करते हैं।
2. दूसरी और वर्ड्सवर्थ किसी बिंब या विचार के थोपे जाने को कल्पना कहते हैं। वास्तव में यह विचार या बिंब वास्तविक जगत पर थोपा जाता है। दूसरी ओर वे कल्पना को दीप्ति (प्रकाश) मानते हैं। व्यक्ति की आत्मा तथा उसके चेतन मस्तिष्क के नियंत्रण से यह बाहर की चीज़ है।
3. प्रायः वर्ड्सवर्थ कल्पना को बिंब या विचार तथा दीप्ति (प्रकाश) इन दोनों के बीच की स्थिति को मानते हैं। इसमें कवि अपनी ओर से योग देता है तथा अपने अन्तर्ज्ञान से भी काम लेता है।
4. वर्ड्सवर्थ का कहना है कि कवि सामान्य जीवन की घटनाओं और स्थितियों पर अपना रंग चढ़ाए, वस्तुओं का वर्णन इस प्रकार करे जैसी कि वे उसे दिखाई देती हैं, जैसे कि वह उनके संबंध में अनुभव करता है।

   इसके लिए कवि को अपनी संवेदनशीलता और कल्पना से काम लेना चाहिए। इसके योग से कवि को विषय (वर्णवस्तु) अधिक आकर्षक तथा सुंदर बनाना होगा, किंतु इसका कदापि यह मतलब नहीं है कि वह कल्पना

के नाम पर भ्रांति उत्पन्न करे। प्रकृति के माध्यम से अदृश्य जगत से संबंध जोड़ा जा सकता है। संक्षेप में कल्पना के अंतर्गत पारदर्शी अंतर्दृष्टि, मस्तिष्क की विशुद्धता तथा सर्वोत्तम कोटि की बौद्धिकता तथा तर्कशीलता को लेते हैं।

5. वर्ड्सवर्थ ने कल्पना को कभी-कभी वह शक्ति माना है जिसके द्वारा कवि व्यक्ति तथा वस्तु में सार्वभौम विचारों तथा सिद्धांतों की प्रतिष्ठा करता है। कवि कल्पना-शक्ति द्वारा अनेक वस्तुओं को एकता प्रदान कर देता है तो कभी एक को अनेक में विभक्त कर देता है। दूसरे शब्दों में, कल्पना वह शक्ति है जिसके द्वारा कवि कभी असीम से ससीम की ओर जाता है तो कभी ससीम से असीम की ओर जाता है। अतः कल्पना-शक्ति संश्लेषण और विश्लेषण दोनों का कार्य करती है।

6. यहाँ कॉलरिज और वर्ड्सवर्थ के कल्पना-संबंधी विचारों की तुलना करना असंगत न होगा। कवि कॉलरिज का मत यह था कि फैंटेसी समुच्चयात्मक या सहचरी शक्ति है और कल्पना स्वरूप प्रदान करने वाली या परिवर्द्धन करने वाली शक्ति है। इसके विपरीत वर्ड्सवर्थ का विचार था कि कल्पना तथा फैंटेसी दोनों ही रचनात्मक शक्तियाँ हैं। उनके अनुसार इन दोनों शक्तियों का कार्य स्मृतियों तथा वस्तुओं को एकत्र करना, उन्हें एक-दूसरे से संबद्ध करना तथा नई चीजों की उद्भावना करना है।

7. कॉलरिज और वर्ड्सवर्थ एक बात में सहमत हैं। दोनों फैंटेसी और कल्पना का भेद बताते हुए कहते हैं कि फैंटेसी का संबंध निश्चित तथा स्थिर वस्तुओं से है। इन दो धारणाओं को कई उदाहरणों से समझाया जा सकता है। उदाहरण के लिए जब किसी वस्तु का आकार आदि निश्चित रूप में बताया जाए, तो वहाँ फैंटेसी कार्य करती है। दूसरी ओर जब हिमालय की सबसे ऊँची चोटी आकाश से बातें करते हुए देखेंगे, वहाँ कवि कल्पना-शक्ति का आश्रय लेता है। "यदि कोई कवि सायंकालीन ओस-बिंदुओं को आकाश के आँसू कहे, तो उसे फैंसी समझना चाहिए और यदि मिल्टन के समान कोई कवि आदम के पूर्ण पतन पर आकाश को शोकपूर्ण अश्रु बहाते हुए चित्रित करे, तो उसे कल्पना का कार्य समझना चाहिए क्योंकि हमारा मन इस चित्र को तर्कसम्मत तथा न्यायसंगत मानता है।"1

8. उपरोक्त विवेचन से फैंटेसी और कल्पना के कुछ भेदक लक्षण निर्धारित किए जा सकते हैं। फैंटेसी भ्रांति पर आधारित होती है तथा यह बौद्धिक

व्यायाम की उपज है। इसकी गति तीव्र होती है। यह एकदम विचारों तथा बिंबों को प्रस्तुत करती है। काव्य के लिए फैंटेसी को अधिक उपयोगी नहीं माना जा सकता। इसके विपरीत कल्पना की गति धीमी होती है। वह चित्र आदि का निर्माण धीरे-धीरे करती है, जिसका असीम तथा अनिश्चित रूप होता है।

7.3.3 काव्य-प्रयोजन

कवि वर्ड्सवर्थ के लिए काव्य लोकमंगल का साधक है। उसकी उपयोगिता यह है कि या तो वह पाठकों के भावों का संस्कार और परिष्कार करे, उनके ज्ञान में वृद्धि करे या उनके मानसिक तथा नैतिक स्वास्थ्य और सुख के लिए उपयोगी हो।

वर्डसवर्थ के कहने का आशय यह है कि काव्य की रचना लोकहित या लोकमंगल की साधना है। कवि काव्य या साहित्य को नैतिक आहार मानता है। इसके द्वारा पाठकों या प्रेक्षकों के भावों में परिष्कार तथा परिवर्द्धन लाया जा सकता है। वर्ड्सवर्थ का कहना है कि काव्य मानसिक स्वास्थ्य एवं सुख के लिए उपयोगी है। वस्तुतः वर्ड्सवर्थ के काव्य-प्रयोजन संबंधी विचार आदर्शवादी हैं। उनका मत है कि कवि ऐसी कृति करे जिससे पाठकों की भावनाओं में परिष्कार हो। काव्य का प्रयोजन मनुष्य की भावनाओं को अधिक संतुलित, विवेकपूर्ण, शुद्ध, स्थायी तथा प्रकृति के अनुरूप बनाए। भारतीय काव्यशास्त्र के एक महान आचार्य मम्मट ने काव्य-प्रयोजन की बात करते हुए कहा है कि काव्य-प्रयोजन का उद्देश्य व्यवहार-कुशलता प्राप्त करना है।1 व्यावहारिकता मनुष्य में तभी आ सकती है जब कि पाठक का श्रोता के व्यवहार में वांछनीय परिवर्तन तथा परिवर्द्धन आए। यह परिवर्तन भी मनुष्य को शुद्ध तथा संतुलित बना देता है।

वर्डसवर्थ के अनुसार काव्य का भावात्मक प्रभाव ऐसा होना चाहिए कि उसे पढ़कर पशुओं, मनुष्यों तथा जड़-पदार्थों तक के प्रति सहानुभूति तथा संवेदना जाग्रत हो सके, उनकी भावात्मक जड़ता और उदासीनता समाप्त हो सके, वे जगत का रहस्य और उसकी मूल प्रकृति समझ सकें।

स्पष्ट है कि वर्ड्सवर्थ के काव्य-संबंधी विचार बहु-आयामी हैं। एक स्तर पर वे काव्य के माध्यम से मानवों में भावात्मक परिष्कार करना चाहते हैं तो दूसरी ओर वे मानवेत्तर प्राणियों एवं जड़-पदार्थों तक के प्रति संवेदना तथा सहानुभूति जाग्रत करवाना चाहते हैं। यहां सूरदास के 'सूरसागर' में वर्णित-वंशीवादन की अनायास याद आती है। श्रीकृष्ण की बांसुरी से मनुष्य क्या, दूसरे मानवेतर प्राणी (पशु-पक्षी) तथा जड़-पदार्थ भी द्रवित हो उठते हैं। काव्य का यह भावात्मक दृष्टिकोण सार्वभौम है तथा भारतीय

काव्यशास्त्र के आचार्यों ने बहुत पहले इन बातों के बारे में गंभीरतापूर्वक विवेचन किया है। काव्य नीरस शिक्षा या उपदेश नहीं देता। यदि उपदेश देना ही हो,वह वाच्यार्थ न होकर व्यंग्यार्थ होना चाहिए। कहना होगा कि भारतीय काव्यशास्त्र में व्यंजना शब्द-शक्ति का गंभीर विवेचन किया गया है। काव्य-प्रयोजन के बारे में वर्ड्सवर्थ का यह भी विचार है कि काव्य का कार्य असत्य भावनाओं का विवेचन करना है। इसके द्वारा सभ्यता तथा सामाजिक आडंबर से उत्पन्न पूर्वाग्रहों को समाप्त करना है, घृणा-द्वेष जैसी भावनाओं को दूर करना है। काव्य के द्वारा मानव-संवेदना का विस्तार होता है। वर्ड्सवर्थ का यह कथन इस भारतीय विचारधारा के साथ मेल खाता दिखाई देता है कि यह मेरा है, वह आपका है इस प्रकार की सोच तथा मानसिकता सीमित चेतना रखने वालों की है। विशाल हृदय रखने वाले मनीशियों के लिए यह वसुधा एक परिवार के समान है। इस प्रकार की भावना तभी सम्भव है जब हमारी संवेदना में विस्तार तथा गहराई आती है।

वर्ड्सवर्थ साहित्य के माध्यम से नैतिक सत्य का प्रचार तो चाहते ही हैं किन्तु इसके साथ-साथ वे आनंद-प्राप्ति को आवश्यक तत्त्व मानते हैं। भारतीय काव्यशास्त्र में आनंद-प्राप्ति काव्य की पराकाष्ठा मानी गई है। साहित्यिक आनंद के बाद हमारे यहां किसी और आनंद की कल्पना नहीं की गई है। वर्ड्सवर्थ बौद्धिकता तथा आनंद में एकदम पारस्परिक विरोध मानते हैं। यह बात सही है क्योंकि साहित्य बुद्धि प्रदान न होकर भावना-प्रदान है। कालांतर में वर्ड्सवर्थ के दृष्टिकोण में परिवर्तन आ गया तथा उन्होंने यह विश्वास प्रकट किया कि विज्ञान के विषय भी काव्य में सम्मिलित किए जा सकते हैं तथा काव्य के सौंदर्य-बोध में सहायक सिद्ध हो सकते हैं। तथापि कवि-ज्ञान तथा विज्ञान का अंतर स्पष्ट करते हुए उन्होंने कहा कि पहला ज्ञान विषयीगत है जबकि विज्ञान एक व्यक्ति निष्ठा उपलब्धि है।

वर्ड्सवर्थ के अनुसार कवि-ज्ञान अस्तित्व का आवश्यक अंग है। वह हमारा सहज उत्ताराधिकारी है जो छीना नहीं जा सकता। इसके विपरीत वैज्ञानिक "सुदूर एवं अज्ञात उपकर्ता समझकर सत्य की खोज करता है, कवि सत्य को साकार मित्र समझकर खुशी के गीत गाता है और उन गीतों में मानव-मात्र उसका साथ देता है।1 कवि का कार्य समूची मानव-जाति को प्रेम के सूत्र में बांधना है, गिरने से रोकना है। अतः वह "मानव-प्रकृति" की सुरक्षा चट्टान" है।

- **स्व-मूल्यांकन (ग)**

प्रिय विद्यार्थियो! इस पाठ से आपको वड्स्वर्थ की काव्य और कल्पना का जो ज्ञान प्राप्त हुआ है, उसका स्व-मूल्यांकन आप निम्नलिखित बहुविकल्पीय प्रश्नों द्वारा करें।

बहुविकल्पीय प्रश्न:-

1) काव्य शब्द का प्रयोग काव्य-शास्त्र में किन दो अर्थों में किया जाता है?

क) व्यापक ख) संकुचित

ग) दोनों घ) दोनों में से कोई नहीं

2) किस विद्वान के अनुसार, ''सामान्य अर्थ में कविता को कल्पना की अभिव्यक्ति के रूप में परिभाषित किया जा सकता है?''

क) शैले ख) हडसन महोदय

ग) कालरिज घ) तीनों में से कोई नहीं

3) किस विद्वान के अनुसार ''काव्य कल्पना और संवेग के माध्यम से जीवन की व्याख्या है?

क) कालरिज ख) शैले

ग) हडसन महोदय घ) तीनों में से कोई नहीं

4) किस विद्वान का कहना है कि दार्शनिक हुए बिना एक व्यक्ति एक महान कवि नहीं हो सकता?

क) हडसन महोदय ख) कॉलरिज

ग) शैले घ) लोंजाइनस

5) कल्पना के अन्तर्गत वड्स्वर्थ किसकी बात करते हैं?

क) पारदर्शी अंतदृष्टि ख) मस्तिष्क की विशुद्धता

ग) तर्कशीलता घ) उपर्युक्त सभी

6) किस आलोचक के अनुसार कल्पना तथा फैंटेसी दोनों की रचनात्मक शक्तियाँ हैं?

क) कॉलरिज ख) वड्स्वर्थ

ग) हडसन महोदय घ) शैले

7) किसके लिए काव्य लोकमंगल का साधक हे?

क) वड्स्वर्थ ख) कॉलरिज

ग) शैले घ) हडसन महोदय

8) किसके कहने का आशय यह है कि काव्य की रचना लोकहित या लोकमंगल की साधना है?

क) अरस्तू ख) प्लेटो

ग) लोंजाइनस घ) वड्स्वर्थ

9) वड्स्वर्थ साहित्य के माध्यम से किसको आवश्यक तत्व मानते हैं?

क) नैतिक सत्य ख) आनंद प्राप्ति

ग) दोनों घ) दोनों में कोई नहीं

10) किस विद्वान के अनुसार कवि-ज्ञान अस्तित्व का आवश्यक अंग है?

क) वड्स्वर्थ ख) कॉलरिज

ग) शैले घ) हडसन महोदय

क) नैतिक सत्य

7.4 सारांश :

कल्पना-तत्त्व काव्य का अविभाज्य अंग है। कवि के पास यदि रचनात्मक कल्पना का अभाव है, वह सही अर्थों में कवि नहीं कहलाया जा सकता। वर्ड्सवर्थ ने काव्य में कल्पना-तत्त्व के योग पर पूरा बल दिया है। कवि के कल्पना-संबंधी विचार बहुआयामी हैं। कहीं-कहीं उनके प्रक्रियात्ययों में उलझनें तथा विरोधाभास दिखाई देता है। कवि का दृष्टिकोण मानवतावादी है। वर्ड्सवर्थ के कल्पना संबंधी विचार और अधिक व्याख्या तथा स्पष्टिकरण की मांग करते हैं।

7.5 कठिन शब्द

1. सम्पृक्त = जिससे संपर्क हुआ हो, सवद्ध।
2. परिदृश्य = चारों ओर दिखने वाला दृश्य
3. परिच्छेद = विभाजक, बँटवारा
4. विलक्षणता = अद्भुत, अनोखा
5. भावोच्छलन = उछलने या तरंगायित होने की क्रिया या भाव।
6. संश्लेषण = एक में मिलाना।
7. उपकर्ता = उपकार करने वाला
8. विशेधाभास = विशेष, परस्पर विरुद्धता
9. अविभाज्य = जो विभाजित न किया जा सके।
10. प्रेक्षकों = देखने वाला, दर्शक, द्रष्टा।

7.6 अभ्यासार्थ शब्द:

1. वर्डसवर्थ की काव्यभाषा विषयक मान्यताओं पर प्रकाश डालिए ।

____

____

____

2. काव्य-प्रयोजन को लेकर वर्ड्सवर्थ के विचारों पर रोशनी डालें ?

3. काव्य-कल्पना को लेकर वर्ड्सवर्थ के विचार प्रकट करें।

7.7 उत्तर कुंजी

स्व-मूल्यांकन (क)

1.	रीति	2.	आत्मा
3.	पद-रचना	4.	रीति
5.	आत्मा	6.	वैषम्य
7.	सरलता	8.	सरल
9.	बोधगम्यता	10.	काव्य संबंधी

स्व-मूल्यांकन (ख)

1.	सही	2.	सही
3.	सही	4.	गलत
5.	गलत		

स्व-मूल्यांकन (ग)

1.	दोनों	2.	शैले
3.	हडसन महोदय	4.	कॉलरिज
5.	उपर्युक्त सभी	6.	वड्स्वर्थ
7.	वड्स्वर्थ	8.	वड्स्वर्थ
9.	दोनों	10.	वड्स्वर्थ

7.8 पठनीय पुस्तकें

1. पाश्चात्य काव्य शास्त्र- देवेन्द्रनाथ शर्मा, नेशनल पेपरबैक्स, 2023
2. पाश्चात्य साहित्य चिंतन, प्रो. निर्मला जैन, राधाकृष्ण प्रकाशन, 2017
3 उदात्त के विषय में - प्रो. निर्मला जैन, वाणी प्रकाशन, दिल्ली, 2004
4 पाश्चात्य काव्य शास्त्र की परम्परा, सं. डॉ. नगेन्द्र और सावित्री सिन्हा
5 काव्य में उदात्त तत्व, डॉ. नगेन्द्र और नेमिचन्द्र जैन, राजपाल एवं संस, दिल्ली

कॉलेरिज : कल्पना की अवधारणा

रूपरेखा

8.1 उद्देश्य एवं अपेक्षित परिणाम
8.2 प्रस्तावना
8.3 सैमुअल टेलर कॉलेरिज
8.3.1 काव्य-प्रयोजन
स्व-मूल्यांकन (क)
8.3.2 सौंदर्य विवेचन तथा कल्पना संबंधी विचार
स्व-मूल्यांकन (ख)
8.3.3 कला और अनुकरण
स्व-मूल्यांकन (ग)
8.4 निष्कर्ष
8.5 कठिन शब्द
8.6 अभ्यासार्थ प्रश्न
8.7 उत्तर कुंजी
8.8 पठनीय पुस्तकें

8.1 उद्देश्य एवं अपेक्षित परिणाम

प्रिय विद्यार्थियो! प्रस्तुत पाठ का उद्देश्य आपको

- कॉलेरिज के सिद्धांतों से परिचित होना।
- कॉलरिज अनुसार काव्य का प्रयोजन क्या है, इसकी जानकारी देना।
- काव्य के कल्पना के महत्व को जानना।
- कला और अनुकरण से संबंधित जानकारी प्राप्त करना।

प्रस्तुत पाठ का विस्तृत अध्ययन करने के पश्चात् आप कॉलेरिज के काव्य प्रयोजन, कॉलेरिज के सौंदर्य विवेचन तथा कल्पना संबंधी विचार को समझ सकेंगे तथा कॉलेरिज के कला और अनुकरण को पूर्ण रूप से समझने में सक्षम होंगे।

8.2 प्रस्तावना

कवि-हृदय में उद्भूत होने वाले संश्लिष्ट बिम्बों की शाब्दिक अभिव्यक्ति तथा इस अभिव्यक्ति द्वारा पाठक को आनन्द प्रदान करना ही कॉलेरिज के उद्धार काव्य का प्रयोजन है। इनके अनुसार काव्य-सृजन के लिए कल्पना का महत्व सर्वोपरि है। 'वर्तमान' को अनुभूत करने वाला प्रत्यक्ष, अतीत या भूत को संयोजित करने वाली स्मृति और भविष्य में अवगाहन करने वाली शक्ति मिलकर उस कल्पना-शक्ति का निर्माण करती है जो कविता को सौंदर्यगुण-सम्पन्न करता है। इस प्रकार कॉलेरिज के अनुसार कविता कल्पना की अभिव्यक्ति का नाम है।

8.3 कॉलेरिज

सैमुअल टेलर कॉलेरिजः अंग्रेजी साहित्य में सैमुअल टेलर कॉलेरिज (1722-1834 ई.) एक प्रतिभा सम्पन्न कवि एवं समालोचक के रूप में विख्यात हैं। ये प्रसिद्ध कवि वर्ड्सवर्थ के मित्र, सहयोगी थे, जिसका प्रति फलन 'लिरिकल बैलड्स' के रूप में सामने आया जो दोनों के सहलेखन में संकलित काव्य संग्रह है तथा इसमें इन दोनों कवियों की कविताएँ संकलित हैं। कॉलेरिज गम्भीर अध्येता, संवेदनशील कवि एवं विविध विषयों के ज्ञाता थे। इनकी आलोचनात्मक कृतियों में 'बायोग्राफिया लिटरेरिया' और 'लैक्चर्स ऑन शेक्सपियर' विशेष उल्लेखनीय है।

8.3.1 काव्य-प्रयोजन

कवि-हृदय में उद्भूत होने वाले संश्लिष्ट बिम्बों की शाब्दिक अभिव्यक्ति तथा इस अभिव्यक्ति द्वारा पाठक को आनन्द प्रदान करना ही कॉलेरिज के उद्धार काव्य का प्रयोजन है। एक बात स्पष्ट है कि सामाजिक परिस्थितियों और आन्दोलनों से जुड़ाव या उनकी अभिव्यक्ति कॉलेरिज के चिन्तन में शामिल नहीं थी।

आलोचक मानते हैं कि कॉलेरिज के अनुसार कविता का आरम्भिक प्रयोजन तात्कालिक आनन्द प्रदान करना है किन्तु उसका चरम प्रयोजन उस सत्य की अभिव्यक्ति है जिसे कवि अपनी विशिष्ट प्रतिभा के बल पर विविध अनुभवों के माध्यम से ग्रहण करता है। ये अनुभव कवि हृदय में एक संश्लिष्ट रूप ग्रहण कर लेते हैं और इनकी अभिव्यक्ति पाठक को एक रहस्यात्मक लोक का दिग्दर्शन करवाती है।

आनन्द काव्य के द्वारा स्वत: उद्भूत होता है वस्तुत, काव्य रचना के लिए कवि के पास दो प्रकार की कल्पनाशक्ति होती है।

मुख्य या प्राथमिक और गौण। प्राथमिक कल्पना सामान्य मानवीय अनुभव का मुख्य साधन है। सृष्टि की शाश्वत तथा असीम प्रक्रिया का मानव-मन द्वारा अवलोकन

मुख्य कल्पना के सहारे होता है। मुख्य कल्पना की प्रक्रिया सहज होती है जबकि गौण कल्पना एक सायास प्रक्रिया है। यह कवि की विशेष प्रतिभा है। वास्तव में यह 'गौण कल्पना ही उस सृजन का कारण है, जिसे कॉलेरिज आदर्श काव्य की संज्ञा देता है। इस प्रकार काव्य का प्रयोजन सामान्य अनुभवों को एक फंतासी के रूप में प्रस्तुत करना है। इसके लिए कॉलेरिज ने 'फैंसी' शब्द का प्रयोग किया है। यहां पहुंच कर काव्य-रचना के सारे संघटक देश-काल की सीमाओं से मुक्त हो जाते हैं। काव्य का सही पाठक या आलोचक भी वही है जो इस संश्लिष्ट बिम्बों का आस्वादन कर सके।

कॉलेरिज के अनुसार काव्य की उत्पत्ति केवल भाव की तीव्रता से नहीं होती, वह संवेदनों की एक संश्लिष्ट प्रक्रिया का परिणाम है। संवेदन का अर्थ है अनुभूतियों को ग्रहण करने की प्रति भा। काव्य की सृजन-प्रक्रिया अपने चरम क्षणों में एक चेतन व्यापार नहीं रह जाती। इस स्थिति को प्राप्त करना-कराना ही काव्य का मुख्य उद्देश्य है। व्यक्तिगत जीवन की इस स्थिति में कोई भूमिका नहीं रहती। व्यक्ति-जीवन जीवनी-लेखन में महत्त्वपूर्ण होता है, काव्य-रचना में नहीं। काव्य-रचना का प्रयोजन कल्पना-प्रस्तुत बिम्बों को शाब्दिक अभिव्यक्ति देना ही है।

काव्य का प्रयोजन यह भी है कि वह अनुभवों को देश-काल की सीमाओं से मुक्त करे। शब्द भाषा विशेष के होते हैं, ये काव्य के प्रभाव को सीमित कर सकते हैं। प्रतीक और बिम्ब भाषाई अभिव्यक्ति को चित्रात्मक रूप देते हैं। इस स्थिति पर पहुंच कर रचना देश-काल के सभी बन्धनों से मुक्त हो जाती है।

कॉलेरिज कविता को खण्ड-खण्ड रूप में नहीं देखता। अंशों या खण्डों में विभाजित रचना एक संपूर्ण कलाकृति का रूप नहीं ले पाती। काव्य में विविध अंश इस प्रकार घुल-मिल जाते हैं कि सम्पूर्ण रचना एक इकाई के रूप में प्रस्तुत होती है। इसका प्रभाव भी एक जैव समग्र या पूर्ण के रूप में ही होता है। इस प्रकार कॉलेरिज प्लेटो की अंत:प्रेरणा, अरस्तू की कल्पना और क्रोचे की अंत: प्रज्ञा को समेट कर चलता है। अनुभूति, संवेदना और भाव का एकाकार हो जाना या कर देना ही काव्य का स्त्रोत है; यही उसका प्रयोजन भी है।

कॉलेरिज जिन सिद्धान्तों का प्रतिपादन करता है, उनके अनुसार कलाकृति का मूल्य वही है जो उसकी कला में निहित है। एक प्रकार से यह सिद्धान्त कलावाद का पोषण करता है। कलाकृति से अलग होकर चिन्तन करना कला के साथ अन्याय है। इसीलिए काव्य और कविता का आकार उतना ही होना चाहिए जितना उसे एक जैव समग्र के रूप में प्रस्तुत करने के लिए आवश्यक है। लम्बी या किसी भी आकार की रचना वास्तविक काव्य नहीं कहला सकती। जहां तक कवि का सम्बन्ध है, वह रचना

करता नहीं है, वह तो स्वयं ही उस रचना के रूप में प्रकट होता है। (A poet does not create but becomes).

कॉलेरिज ने काव्य रचना के दो सूत्र प्रस्तुत किए हैं :

1. श्रेष्ठ काव्य वह नहीं है जिसे हम पढ़ कर एक ओर रख देते हैं। काव्य की श्रेष्ठांता उस शक्ति में है जो पाठक को बार-बार पढने़ और आनन्दित होने को बाध्य करती है।
2. काव्य से ऐसे शब्दों का प्रयोग दोषपूर्ण माना जाएगा जिन्हें अर्थ में परिवर्तित किए बिना बदला जा सके।

कवि द्वारा चयनित शब्दावली का कोई विकल्प नहीं हो सकता। यह शब्दावली कवि के रचना धर्म का अंग है और यही उस काव्य की रचना करती है जो सौंदर्य की दृष्टि से स्वत: संपूर्ण है। इसी संपूर्ण सौन्दर्य से प्राप्य आनन्द की समग्र अनुभूति पाठक को करवाना कविता का प्रयोजन है। इस प्रकार कॉलेरिज एक ओर कविता का वस्तु जगत से सीधा संबंध नहीं मानता। वह संश्लिष्ट बिम्बों और प्रतीकों का महत्त्व स्थापित करता है। वह यह भी मानता है कि प्रत्येक व्यक्ति श्रेष्ठ काव्य का आस्वादक नहीं हो सकता। साथ ही वह काव्य की संम्प्रेषनीयता पर भी बल देता है।

- **स्व-मूल्यांकन (क)**

प्रिय विद्यार्थियो! इस पाठ में अभी तक प्राप्त ज्ञान का मूल्यांकन आप निम्नलिखित रिक्त स्थान भरकर करें।

1. सैमुअल टेलर कॉलेरिज प्रसिद्ध कवि वड्स्वर्थ के ------- सहयोगी थे।
2. कॉलेरिज -------- संवेदनशील कवि एवं विविध विषयों के ज्ञाता थे।
3. कॉलेरिज की आलोचनात्मक कृतियों में 'वायोग्राफिया लिटरेटिया' -------- विशेष उल्लेखीय है।
4. प्राथमिक कल्पना सामान्य --------का मुख्य साधन है।
5. मुख्य कल्पना की प्रक्रिया सहज होती है जबकि गौण कल्पना एक ------प्रक्रिया है।
6. वास्तव में वह गौण कल्पना ही उस सृजन का कारण है, जिसे कॉलेरिज ----- काव्य की संज्ञा देता है।
7. संवेदन का अर्थ है ------को ग्रहण करने की प्रतिभा।
8. कॉलेरिज प्लेटो की --------अरस्तू की --- और क्रोचे की ------- को समेट कर चलता है।

9. कॉलेरिज के अनुसार काव्य की श्रेष्ठता उस शक्ति में है जो पाठक को बार-बार पढ़ने और ---------- होने को बाध्य करती है।
10. कॉलेरिज -----और प्रतीकों का महत्व स्थापित करता है।

8.3.2 सैमुअल टेलर कॉलेरिजः सौंदर्य विवेचन तथा कल्पना संबन्धी विचार

सौंदर्य क्या है? इस प्रश्न का उत्तर पाने के लिए सभी आचार्य आलोचक तथा सौंदर्य शास्त्री व्याकुल रहे हैं। वास्तविक सौंदर्य वस्तु में नहीं, वस्तु द्वारा मानव-मन पर पडने वाले प्रभाव का नाम है। कॉलेरिज के अनुसार, कविता के निर्मायक विभिन्न अंग या अंश सौंदर्य का निर्माण करते हैं। यही सौंदर्य पाठक तक संक्रमित होता है। कविता का आनन्द विविध अंगों, अंशों या तत्त्वों के परस्पर सम्बन्ध से उत्पन्न सौंदर्य से उत्पन्न होता है। यह सौंदर्य संपूर्ण कविता के प्रभाव से अनुस्यूत होता है; एक अंश से नहीं। इस प्रकार कविता के सौंदर्य ग्रहण के लिए संपूर्ण कविता का अध्ययन आवश्यक है।

काव्य-सृजन के लिए कल्पना का महत्त्व सर्वोपरि है। 'वर्तमान' को अनुभूत करने वाला प्रत्यक्ष, अतीत या भूत को संयोजित करने वाली स्मृति और भविष्य में अवगाहन करने वाली शक्ति मिलकर उस कल्पना-शक्ति का निर्माण करती हैं जो कविता को सौंदर्यगुण-सम्पन्न करता है। इस प्रकार, कालेरिज के अनुसार कविता कल्पना की अभिव्यक्ति का नाम है।

कवि के लिए कालेरिज अनेक गुणों को महत्त्व देता है। पद्य-निर्माण की शक्ति, बिम्ब-विधान, विचार-गांभीर्य, मानवता, ईश्वर में आस्था, भावावेश जैसी विशेषताओं की एक लम्बी तालिका प्रस्तुत करता हुआ वह कल्पना (Imagination) को कवि की सबसे महत्त्वपूर्ण क्षमता मानता है।

उसके अनुसार कविता सौंदर्य के माध्यम से त्वरित आनन्द प्रदान करती है तथा इस प्रक्रिया में पाठक के भावों का उद्वेलन हो जाता है। कॉलरिज कल्पना को कवि की ऐसी क्षमता के रूप में देखता है जो यथार्थ को अयथार्थ अथवा अवास्तविक रूप में चित्रित करती है और यह 'कल्पनाप्रसूत' चित्र ही यथार्थ प्रतीत होता है। यह चित्र न तो कृत्रिम अनुभूत होता है, न ही भ्रांतिपूर्ण। कवि पाठक को एक स्वप्नलोक में ले जाता है। ये स्वप्न निद्रा-अवस्था में अनुभूत होने वाले स्वप्नों से अलग प्रकार के होते हैं। इनका अनुभव पाठक आँखें खोले हुए करता है।

'कल्पना' की चर्चा करता हुआ कॉलेरिज इसके दो भेद करता है :

1. प्राथमिक (Primary Imagination)
2. गौण (Secondary Imagination)

प्राथमिक कल्पना मानवीय बोध (human perception) का मुख्य माध्यम है। समस्त मानवीय अनुभवों का समुच्चय करके मनुष्य की यह शक्ति पदार्थों को एक समन्वित पूर्ण के रूप में प्रस्तुत करती है। प्राथमिक कल्पना असीम अहं में सृष्टि के शाश्वत क्रम का ससीम मन में पुर्नरावलोकन है। गौण कल्पना मुख्य कल्पना की प्रति ध्वनि होती है मुख्य कल्पना मनुष्य को अनुभवगत जगत का बोध करवाती है। मुख्य कल्पना का काम सहज ढंग से चलता है।

गौण कल्पना मनुष्य की सजग इच्छा पर निर्भर होती है। मुख्य कल्पना एक अनायास प्रक्रिया है।

इस प्रकार कॉलेरिज की काव्य-कला संबंधी अवधारणा जगत के तीन भेद कर देती है :

(क) ऐंद्रिय जगत – जिसका बोध मनुष्य की ज्ञानेन्द्रियों द्वारा होता है।

(ख) मनोजगत – यह ऐंद्रिय जगत का मानसिक अधिग्रहण है।

(ग) कला-जगत – जो गौण कल्पना के प्रयोग द्वारा एक नवनिर्मित-कल्पित जगत है।

कल्पना तथा ललित कल्पना

कॉलेरिज 'कल्पना' (Imagination) के साथ एक अन्य शब्द 'फैन्सी' का प्रयोग करता है। 'फैंसी' ग्रीक शब्द 'फंतासिया' (Phantasia) से व्युत्पन्न है। बाद में इसके लिए फंतासी (Fantasy) शब्द का भी प्रयोग होने लगा। हिन्दी में 'फैंसी' के लिए प्राय: 'ललित कल्पना' या 'रम्य कल्पना' शब्दावली का प्रयोग किया जाता है। यहाँ ध्यान रखना होगा कि Imagination शब्द लैटिन Imagination से संबद्ध है। मूलत: दोनों का अर्थ एक है किन्तु कॉलरिज 'फैंसी' को कल्पना से अलग मानता है। फैंसी के लिए सामग्री मानव-मन में पहले से तैयार रहती है। इसके संघटक देश और काल की सीमाओं से मुक्त होते हैं। साहचर्यगत विशेषताओं के कारण ये संघटक एक ऐसे मिश्रण का रूप ले लेते हैं जो कला या कविता की संज्ञा प्राप्त करते हैं। उपर्युक्त चर्चा से 'फैंसी' की निम्नलिखित विशेषताएँ स्पष्ट होती हैं :

(क) यह देश-काल (Place and time) की सीमाओं का अतिक्रमण करती है।

(ख) यह अवचेतन मन की स्मृति के समान है।

(ग) यह संचित सामग्री का साहचर्य के नियम द्वारा संयोजन एवं अभिव्यंजन करती है।

कल्पना शक्ति ही मनुष्य और पशु में भेदक तत्व है। कॉलेरिज द्वारा प्रयुक्त 'फैंसी' वास्तव में मनोविज्ञान से लिया शब्द है। बहुत-से कवियों तथा आलोचकों ने 'फैंटेसी (फंतासी) शब्द का भी प्रयोग किया है। कवि का अनुभव भौतिक या बाहरी स्तरों तक सीमित नहीं रहता। कवि की अनुभूति ज्ञानेन्द्रियों द्वारा गृहीन 'प्रत्यक्ष' रूप में न रहकर बिम्बात्मक रूप ग्रहण कर लेती है। एक सीमा तक हमारी कल्पना बहुत ऊपरी सतह पर काम करती है। विशेष दिवास्वप्नों में कल्पना का यही पक्ष काम करता है। फ्रायड के अनुसार, वे भी ''काव्य-रचना का उपादान बन जाते हैं किन्तु फ्रायड ने दिवास्वप्नों की अपेक्षा स्वप्नों को अधिक महत्व दिया। फ्रायड के अनुसार, ''कोई स्वप्न सुनाने में कठिनाई का एक कारण यही होता है कि इन प्रति बिम्बों को शब्दों में बदलना होता है।'' कवि की यही शक्ति उसे एक सौंदर्यात्मक कृति की रचना करने में सफल बनाती है।

- **स्व-मूल्यांकन (ख)**

प्रिय विद्यार्थियो! निम्नलिखित प्रश्नों के उत्तर सही या गलत चिन्ह द्वारा देकर आप अभी तक प्राप्त ज्ञान का स्वमूल्यांकन करें।

1. कॉलेरिज के अनुसार कविता के निर्मायक विभिन्न अंग या अंश सौंदर्य का निर्माण करते हैं। ( )
2. काव्य-सृजन के लिए कल्पना का महत्व सर्वोपरि है। ( )
3. कॉलेरिज के अनुसार कविता कल्पना की अभिव्यक्ति का नाम नहीं है। ( )
4. प्राथमिक कल्पना मानवीय बोध का मुख्य माध्यम है। ( )
5. कॉलेरिज कल्पना (इमेजिनेशन) के साथ एक अन्य शब्द फैन्सी शब्द का प्रयोग करता है। ( )
6. 'फैंसी' ग्रीक शब्द फंतासिया से व्युत्पन्न है। ( )
7. कॉलेरिज द्वारा प्रयुक्त 'फैंसी' वास्तव में मनोविज्ञान से लिया शब्द है। ( )

8.3.3 कला और अनुकरण

इंग्लैंड के रोमांसवादी कवियों में निम्नलिखित विशेष रूप से उल्लेखनीय हैं :

वर्ड्सवर्थ, कॉलेरिज, बायरन, शैली तथा कीट्स। इनमें वर्ड्सवर्थ तथा कॉलेरिज काव्य-मीमांसक के रूप में विशेष रूप से प्रतिष्ठित हुए। सन् 1798 में इन दोनों के सम्पादन में 'लिरिकल बैलेड्स' (Lyrical Ballads) नामक ग्रन्थ प्रकाशित हुआ और वस्तुत: यहीं से इंग्लैंड में रोमांसवाद का उदय माना जाता है। यद्यपि 'रोमांस' शब्द के अनेक अर्थ है, तथापि बुद्धि की अपेक्षा कल्पना को महत्त्व देना इसकी प्रमुख विशेषता है। रोमांसवाद स्वयं में नव्यशास्त्रवाद की प्रतिक्रिया में जन्मा था। रोमांसवाद ने कल्पना, रहस्य, प्रकृति प्रेम जैसी प्रवृत्तियों पर विशेष बल दिया।

सेम्युअल टेलर कॉलरिज अध्यात्म और मनोविज्ञान की गहन दृष्टि लेकर कविता एवं आलोचना के क्षेत्र में आया। सभी स्वच्छन्दतावादी (रोमांसवादी) कवियों की भांति कॉलरिज ने रूढ़ सिद्धान्तों के पालन का विरोध किया। कवि के लिए वह मौलिकता, प्रतिभा एवं कल्पना को अनिवार्य मानता है।

कॉलरिज के आलोचना-सिद्धान्तों का आधार है। एक पुस्तिका-'बयोग्राफिया लिटरेरिया' (Biographia Literaria)। कॉलरिज विभिन्न कलाओं की एकता पर बल देता है। इनकी भिन्नता कलागत माध्यम पर निर्भर है। कविता (Poetry) को वह उन्हीं कलात्मक अभिव्यक्तियों के लिए प्रयुक्त करता है जिनका माध्यम शब्द हैं।

कॉलेरिज कलाकृति की रचना में कल्पना को सबसे महत्त्वपूर्ण मानता है। वह बुद्धि और हृदय का सांमजस्य चाह कर भी कल्पना की वरीयता देता है। उसके अनुसार कल्पना की शक्ति के कारण कवि यथार्थ को अयथार्थ और ऐसे अवास्तविक रूप में प्रस्तुत करता है जो काल्पनिक होने के बावज़ूद यथार्थ प्रतीत होता है। इस प्रकार कॉलेरिज प्रकृति के अनुकरण को कविता नहीं मानता वह ऐसे अनुकरण को कविता मानता है जो यथार्थ से सर्वथा भिन्न चित्र प्रस्तुत करने में सक्षम होता है।

कॉलेरिज कल्पना के दो भेद करता है– मुख्य तथा गौण। मुख्य अथवा प्राथमिक कल्पना मानव के यथार्थ अनुभवों पर आधारित होती है। इन अनुभवों की अपनी सीमा होती है। गौण कल्पना के लिए कवि को चेष्टा करनी पड़ती है। यह गौण कल्पना ही कलासृजन का कारण होती है।

कॉलेरिज 'फैंसी' की अवधारणा प्रस्तुत करता है। यह 'ललित कल्पना' देश और कला के यथार्थ से मुक्त होती है। इस प्रकार कॉलेरिज अनुकरण को उस सिद्धान्त से बहुत परे ले जाता है। जिसका आरम्भ प्लेटो से हुआ था। कॉलेरिज के यहां 'अनुकरण' या प्रकृति के प्रभावों का ग्रहण एक आरंभिक अवस्था है। कवि के मन में विद्यमान अनेक संश्लिष्ट प्रभाव मिलकर काव्यकृति को उस यथार्थ से बहुत दूर ले जाते हैं जिस का अनुभव सामान्य मनुष्य अपनी ज्ञानेन्द्रियों द्वारा करता है। कॉलेरिज प्रकृति के अनुकरण सम्बन्धी सभी सिद्धान्तों को एक नया मोड़ देता है। वह स्थापित करता है कि कवि का चित्र जो फैंटेसी या फंतासी द्वारा उद्भूत होता है, वह उस वस्तुजगत से बहुत दूर तथा भिन्न होता है जिसे मनुष्य सामान्यत: अनुभव करते हैं और जिसकी अनुकृति या सादृश्य-विधान क्षमता द्वारा रचित संरचना को कविता या कलाकृति कहा जाता है। प्रकृति-चित्रण वर्ड्सवर्थ की कविता का मुख्य विषय था। 'लिरिकल बैलेड्स' की भूमिका में प्रस्तुत यह विचार कि 'कविता भावों का सहज उच्छलन है' तथा ऐसे भावों की अभिव्यक्ति है जो एकान्त और शान्ति के क्षणों में कवि के मानस-पटल पर उभर आते

हैं –वर्डस्वर्थ के साथ ही जुड़े रहे। किन्तु कॉलेरिज की, कृति 'बायोग्राफिका लिटरेरिया' तक पहुंचते स्वच्छन्दतावादी काव्यांदोलन इस प्रश्न पर गहराई से विचार करने लगा कि किस प्रकार के लोगों में काव्यात्मक भाषा का जन्म होता है।' काव्य के अभिव्यक्ति पक्ष में भाव-चित्रों की क्या भूमिका होती है, ये कल्पना के किस स्तर से उपजते हैं, इन विषयों पर कॉलेरिज वर्ड्सवर्थ से अलग हो जाता है। कॉलेरिज काव्य (पोयट्री) और कविता (पोएम) में भेद करता है। काव्य का सम्बन्ध दर्शन से है। जो व्यक्ति एक महान दार्शनिक नहीं है, वह महान कवि नहीं बन सकता।

कविता अन्य कलाओं से मात्र इसलिए भिन्न है कि यह एक भाषाई अभिव्यक्ति है। कविता का उद्देश्य आनन्द प्रदान करना है। सत्य की खोज करता हुआ भी कवि जिस कविता की रचना करता है, उसकी कलात्मकता इसी बात में निहित है कि वह किस सीमा तक आनन्द प्रदान करती है। काव्य अभिव्यक्ति की ऐसी कला है जो तात्कालिक आनन्द प्रदान करती है। इसके लिए छन्द, तुक आदि का भी प्रचुर महत्त्व है। काव्य छन्दोबद्ध न हो, तो भी इसे आनन्द प्रदान करने में सक्षम होना चाहिए। छन्द का जन्म स्वत: हो जाता है।

फैंटेसी, फैंसी को महत्त्व देने के कारण कॉलेरिज को प्रतीकवादी भी माना जा सकता है। काव्य-कला और पाठक की उस कला को समझने की क्षमता पर विचार करता हुआ कॉलेरिज मानता है कि कविता का आनन्द वही उठा सकता है जिसकी वृत्तियां कोमल हैं, जो भावुक है और जो सौन्दर्य का पारखी है। इस प्रकार काव्य का आस्वादक प्रत्येक मनुष्य नहीं हो सकता। एक विशिष्ट मानसिकता से सम्पन्न व्यक्ति ही है। उस संश्लिष्ट रचना का आनन्द ले सकता है जिसे काव्य कहा जा सकता है।

कला हो या कविता उसके जीवन का यथा तथ्य चित्रण नहीं होता। इसीलिए कविता को जीवन की अनुकृति नहीं माना जा सकता। कॉलेरिज के अनुसार काव्य में वास्तविक और अवास्तविक दोनों प्रकार के तत्त्वों का समावेश होता है। कवि की विशिष्ट मानसिकता के कारण वास्तविक या यथार्थ चित्र वस्तुगत तथ्य से बहुत दूर जा पड़ते हैं।

वास्तव में प्रत्येक कलाकृति सौन्दर्यपूर्ण अभिव्यक्ति है। वास्तविक सौंदर्य वस्तु में नहीं; कवि-मन पर पडऩे वाले प्रभाव का नाम है। कवि अपनी प्रतिभा से अनुभव को एक संश्लिष्ट किन्तु कलापूर्ण, आनन्दप्रदायी रचना के रूप में प्रस्तुत करता है।

- **स्व-मूल्यांकन (ग)**

प्रिय विद्यार्थियो! इस पाठ से आपको एस.टी. कॉलेरिज कला और अनुकरण का जो ज्ञान प्राप्त हुआ है। उसका स्व मूल्यांकन आप निम्नलिखित बहुविकल्पीय प्रश्नों द्वारा करें।

बहुविकल्पीय प्रश्न:-

1) 'लिरिकल बैलेड्स' नामक ग्रन्थ कब प्रकाशित हुआ?

क) 1798 ख) 1884

ग) 1693 घ) 1949

2) किसके सम्पादन में 'लिरिकल बैलेड्स' नामक ग्रन्थ प्रकाशित हुआ।

क) कॉलेरिज ख) वड्स्वर्थ

ग) दोनों घ) दोनों में से कोई नहीं

3) रोमांसवाद का उदय कहां से माना जाता है?

क) अमेरिका ख) इंग्लैंड

ग) लंदन घ) उपर्युक्त सभी

4) रोमांसवाद कौन-कौन सी प्रवृत्तियों पर विशेष बल देता है?

क) कल्पना ख) रहस्य

ग) प्रकृति प्रेम घ) उपर्युक्त सभी

5) सेम्युअल टेलर कॉलरिज कवि के लिए किसी अनिवार्यता मानता है?

क) मौलिकता ख) प्रतिभा

ग) कल्पना घ) उपर्युक्त सभी

6) कॉलेरिज कल्पना के कितने भेद मानता है

क) दो ख) तीन

ग) चार घ) पांच

7) 'बापोग्राफिका लिटरेरिया' किसकी कृति है।

क) वड्स्वर्थ ख) कॉलेरिज

ग) अरस्तू घ) प्लेटो

8) फैंटेसी, फैंसी को महत्व देने के कारण कॉलेरिज को क्या माना जा सकता है?

क) यथार्थवादी ख) प्रयोगवादी

ग) प्रतीकवादी घ) उपर्युक्त सभी

9) कॉलेरिज के अनुसार काव्य में किस प्रकार के तत्वों का समावेश होता है?

क) वास्तविक ख) अवास्तविक

ग) दोनों घ) दोनों में से कोई नहीं

8.4 सारांशः कॉलेरिज की मान्यता है कि कल्पना द्वारा ही काव्य हृदयग्राही, मर्मस्पर्शी और सजीव बनता है। कल्पना प्रयोग की अन्त:शक्ति कवि का सर्वश्रेष्ठ गुण है

और उसका समुचित प्रयोग काव्योत्कर्ष के क्षणों की समुचित देन है। कल्पनाशक्ति हदय और बुद्धि, अन्तर्जगत और बहिर्जगत का समन्वय करती है तथा इसके द्वारा विचार भी सरल हो जाते हैं।

8.5 कठिन शब्द

1. अवगाहन = चिंतन-मनन
2. सहलेखन = एक ही काम पर कई लोगों के साथ मिलकर काम करना या सहयोग करना।
3. संघटक = घटक, अवयव
4. संवेदन = सुख दुःख आदि की प्रतीति करना
5. अंत प्रेरणा = सहज प्रेरणा, मन की स्वाभाविक प्रेरणा
6. संक्रमित = संक्रमण होना
7. कल्पनाप्रसूत = कल्पना से उत्पन्न
8. पुर्नरावलोकन = दोहराना
9. फैंटेसी = कल्पना
10. वरीयता = श्रेष्ठता

8.6 अभ्यासार्थ प्रश्न

प्रक्रिया.1 कॉलेरिज के कल्पना संबंधी विचार पर प्रकाश डालें।

प्रक्रिया.2 कॉलेरिज के अनुसार काव्य का प्रयोजन क्या है?

प्रक्रिया.3 कॉलेरिज के कला और अनुकरण संबंधी विचार स्पष्ट कीजिए।

8.7 उत्तर कुंजी

स्व-मूल्यांकन (क)

1. मित्र
2. गम्भीर अध्येता
3. लैक्चर्स ऑन शैक्सपियर
4. मानवीय अनुभव
5. सायास
6. आदर्श
7. अनुभूतियों
8. अंताप्रेरणा, कल्पना, अंत,
9. आनन्दित
10. संश्लिष्ट बिम्बों

स्व-मूल्यांकन (ख)

1. सही
2. सही
3. गलत
4. सही
5. सही
6. सही

स्व-मूल्यांकन (ग)

1. 1798
2. दोनों
3. इंग्लैंड
4. उपर्युक्त सभी
5. उपर्युक्त सभी
6. दो
7. कॉलेरिज
8. प्रतीकवादी
9. दोनों

8.8 पठनीय पुस्तकें

1. पाश्चात्य काव्य शास्त्र- देवेन्द्रनाथ शर्मा, नेशनल पेपरबैक्स, 2023
2. पाश्चात्य साहित्य चिंतन, प्रो. निर्मला जैन, राधाकृष्ण प्रकाशन, 2017

3 उदात्त के विषय में-प्रो. निर्मला जैन, वाणी प्रकाशन, दिल्ली, 2004

4 पाश्चात्य काव्य शास्त्र की परम्परा, सं. डॉ. नगेन्द्र और सावित्री सिन्हा

5 काव्य में उदात्त तत्व, डॉ. नगेन्द्र और नेमिचन्द्र जैन, राजपाल एवं संस, दिल्ली

टी. एस. इलियट: परम्परा और निर्वैयक्तिकता व वस्तुनिष्ठ सहसम्बन्ध

रूपरेखा

9.1 उद्‌देश्य एवं अपेक्षित परिणाम
9.2 प्रस्तावना
9.3 परम्परा और निर्वैयक्तिकता
स्व-मूल्यांकन (क)
9.4 वस्तुनिष्ठ सहसम्बन्ध
स्व-मूल्यांकन (ख)
9.5 काव्य-भाषा
स्व-मूल्यांकन (ग)
9.6 निष्कर्ष
9.7 कठिन शब्द
9.8 अभ्यासार्थ प्रश्न
9.9 उत्तर कुंजी
9.10 पठनीय पुस्तकें

9.1 उद्‌देश्य एवं अपेक्षित परिणाम

प्रस्तुत आलेख का उद्‌देश्य आपको टी.एस.इलियट के समीक्षा सिद्‌धान्त से परिचित करवाते हुए इलियट की परंपरा संबंधी अवधारणा तथा उनके निवैयक्तिता के सिद्‌धान्त से अवगत करवाना है।

प्रस्तुत पाठ का विस्तृत अध्ययन करने के पश्चात् आप टी.एस.इलियट की परम्परा और निवैयक्तिकता, को समझने के साथ ही उनके वस्तुनिष्ठ सहसम्बन्ध को पूर्ण रूप से समझने होंगे।

9.2. प्रस्तावना:

विख्यात कवि, नाटककार तथा आंग्ल-अमरीकी 'नयी आलोचना' के जनक टी. एस. इलियट का जन्म 26 सितम्बर, 1888 ई. को सेंट लुई, (अमरीका) के एक प्रतिष्ठित परिवार में हुआ और उनकी मृत्यु 4 जनवरी, 1965 ई. को लंदन में हुई। वे हार्वर्ड विश्वविद्‌यालय में प्रो. इर्विंग बेबिट के शिष्य थे। एफ. एच. ब्रैडले के दर्शन पर उनका

शोधप्रबंध, उनकी मृत्यु के उपरांत, 'नॉलिज एंड एक्सपीरिएंस' शीर्षक से प्रकाशित हुआ। सन् 1948 में उन्हें साहित्य का 'नोबेल पुरस्कार' और 'ब्रिटिश ऑडर ऑफ मेरिट' (ओ. एम.) की उपाधि मिली। वे दो बार अमरीकी विश्वविद्यालयों में विज़िटिंग प्रोफ़ेसर के रूप में आमंत्रित किये गये। उन्हें अनेक साहित्यिक सम्मान मिले। इलियट की काव्य-रचनाओं में 'द लव साँग आफ एल्फर्ड प्रूफॉक' (1915), 'द वेस्ट लैंड' (1922)और 'फोर क्वाट्रेट्स (1943) तथा नाटकों में 'मर्डर इन द कैथिड्रल' (1935), 'द फेमिली रियूनियन' (1939) और 'द काकटेल पार्टी' (1950) विशेष लोकप्रिय हुए। समालोचना में उनकी 'द सेक्रेड वुड' (1920), 'होमेज टु जॉन ड्राइडन' (1924) 'एलिजाबेथेन एसो' (1932), 'द यूज़ ऑफ पोएट्री एंड द यूज़ ऑफ क्रिटिसिज़्म' (1933), 'सेलेक्टेड एसो' (1934) और 'एसेज: एन्शेंट एंड मॉडर्न' (1936) विशेष प्रसिद्ध हुईं।

समालोचक के रूप में इलियट एक ऐसा चिंतक था, जिसने व्यवस्थित सिद्धांत निरूपण नहीं किया, पर अपनी पीढ़ी की रुचि और विचारों को बहुत-दूर तक प्रभावित किया। उनके ध्यान का केंद्र थे मेटाफिज़िकल कवि तथा एलिजाबेथेन और जेकोबियन युग के नाटक। काव्यात्मक अंतर्दृष्टि से कल्पना का संधान करने वाले इलियट का रुझान सौंदर्यशास्त्रीय सिद्धान्त तथा जीवन के नियम के तौर पर 'क्लासिकी संयम' की ओर था।

कविता को कविता के रूप में देखने की वकालत इलियट लंबे समय तक करते रहे। कविता को कवि से मुक्त, एक निर्वैयक्तिक, रचना के रूप में ग्रहण करने की मांग इलियट ने केवल कवि की दृष्टि से ही नहीं की, वे आलोचक से भी इस निर्वैयक्तिक भाव की अपेक्षा करते थे। जिस प्रकार भारतीय काव्यशास्त्र में कविता के सहृदय पाठक के लिए पूर्वाग्रह-मुक्ति एक अनिवार्य शर्त है, लगभग उसी प्रकार, इलियट ने काव्यास्पद के लिए इस बात की आवश्यकता पर बल दिया है कि "साहित्य के आलोचक के मन में कलाकृति के द्वारा संप्रेरित संवेगों के अतिरिक्त किसी और संवेग की उपस्थिति नहीं होनी चाहिए।"

कवि-पक्ष में जो निर्वैयक्तिकता सृजन के लिए आवश्यक है, वही आलोचक में आस्वाद और विश्लेषण के लिए अनिवार्य है। इलियट के अनुसार, भोक्ता-व्यक्ति और रचयिता-कलाकार के बीच दूरी के समानांतर कला की श्रेष्ठता के अनुपात में वृद्धि होती है, ठीक उसी प्रकार कलाकृतियों का अनुशीलन करते समय आलोचक को भी हर प्रकार के इतर मुलाहिज़ों से, यहां तक कि अपनी अनुवांषिक विरासत से भी मुक्त, केवल पाठक होना चाहिए: "कलास्वाद के लिए यह अनिवार्य है कि कलाओं का अनुशीलन करते समय व्यक्ति सब-कुछ का, यहाँ तक कि अपने वंश-वृक्ष का भी संवरण करके इस कार्य में

प्रवृत्त हो। आवश्यक है कि कलाओं का उपभोक्ता-सहृदय किसी परिवार, जाति, दल या वर्ग का सदस्य न होकर आत्मस्थित पाठक-मात्र हो।''

किसी समय रचना और आलोचना, दोनों के लिए व्यक्तित्व के अतिक्रमण का समर्थन करने वाले इलियट 'द यूज़ ऑफ पोएट्री' तक पहुँचते-पहुँचते यह अनुभव करने लगे थे कि अपने व्यक्तित्व का अतिक्रमण न कवि के लिए संभव है और न आलोचक के लिए। वे मानते थे कि अच्छे और बुरे लेखन के प्रति मान हमारी रुचि-अरुचि से परे होते हैं। इसी प्रकार कविता में शाश्वत तत्त्व समान होते हैं, परंतु ''इस समान तत्त्व के निरूपण का हर प्रक्रिया समय, स्थान और व्यक्ति की सीमाओं में बँधा होता है और ये सीमाएँ इतिहास के परिप्रेक्ष्य में उद्घाटित होती हैं।''

9.3 परम्परा और निर्वैयक्तिकता

1. परम्परा से इलियट का तात्पर्य एक समुदाय के व्यक्तियों के रक्त-सम्बन्ध में व्यक्त होने वाले सभी स्वाभाविक कार्यों एवं रीति-रिवाज़ों से है, जो उसकी संस्कृति होते हैं। इनसे ही उसके जातीय जीवन-दर्शन, कला और साहित्य आदि अनुस्यूत होते हैं। इस प्रकार, इलियट ने परम्परा क¨ संस्कृति के पोशक-रूप में स्वीकार किया है। यह सांस्कृतिक भाव-धारा किसी काल-विशेष की उपज अथवा किसी काल-विशेष के हेतु नहीं होती। इसका प्रवाह तो अविच्छिन्न एवं अबाध होता है।

   इलियट के अनुसार, कुछ लोग परम्परा का अर्थ ही गलत लगा लेते हैं। वे उसे अतीत को वर्तमान के रूप में ही मानते हैं, किन्तु परम्परा तो अतीत को वर्तमान से सम्बद्ध करती है। किसी उत्कृष्ट कला-कृति के मूल्यांकन का अर्थ होता है- समस्त पुरातन कलाकृतियों का परिशीलन एवं पुर्न मूल्यांकन। कवि और परम्परा के सम्बन्ध में इलियट की एक निश्चित धारणा थी। उसका कहना था कि किसी भी कवि के निज की महत्ता व उसकी प्रशंसा, पूर्ववर्ती मृत- कवियों के संदर्भ से ही, स्पष्ट होती है। जब तक हम उसकी तुलना नहीं करते, उसका महत्त्व नहीं आंक सकते।

   वस्तुतः परम्परा एक जीता-जागता अस्तित्व है। एक युग की मान्यताओं के विरोध में क्रांतिकारी स्वरों का उद्घोश, परम्परा के अस्तित्व के लिए घातक न होकर, उसके विकास एवं गति का सूचक है। ये क्रांतियां परम्परा की वृद्धि के लिए अनिवार्य तत्व हैं। परम्परा का विकास पूर्णता का सूचक नहीं, अपितु उसकी वृद्धि एवं घनत्व का द्योतक है। युग-विशेष अपनी रुचियों के आधार पर अपने विचारों, अपनी मान्यताओं का निर्माण कर, पिछले युग

की आलोचना करता हुआ, उनके प्रति पादन में अपना पूरा प्रक्रिया करता है। आने वाला युग भी ऐसा ही करता है। इस प्रकार, परम्परा अपने जीवित कणों को इन आंदोलनों से सिंचित करती हुई, काल पर पद-चिह्न छोड़ती हुई, आगे बढ़ती चली जाती है।

2. **निर्वैयक्तिकता:** इलियट ने परम्परा के जीवन्त विकास को अधिक महत्त्व देकर उसके आधार पर कई काव्य-मत प्रतिपादित किए। परम्परा के जीवन्त विकास का महत्त्व देने से सृजन में आत्मनिष्ठां अंश स्वयं गौण हो जाता है और वस्तुनिष्ठ अंश को प्रमुखता प्राप्त हो जाती है। इलियट ने इसीलिए सृजन को निर्वैयक्तिक निरूपित किया। इस संदर्भ में उन्होंने जो कुछ कहा है, उसे पश्चिम में और आधुनिक हिन्दी-क्षेत्र में बड़ा महत्त्व प्राप्त हुआ है।

सामान्यतः यह समझा जाता है कि कवि अपने वैयक्तिक भावों एवं अनुभूतियों की अभिव्यक्ति करता है, किन्तु इलियट ने इन दोनों ही बातों का खंडन किया है। उसके विचार से न तो कविता में कवि की वैयक्तिकता रहती है और न ही भावों की अभिव्यक्ति। इस तथ्य को स्पष्ट करने के लिए इलियट ने काव्य की सृजन-प्रक्रिया पर प्रकाश डालते हुए कहा है, ''वस्तुतः कवि के मस्तिष्क में अनगिनत भाव, अनुभूतियाँ, शब्दावलियाँ, बिम्ब आदि भरे रहते हैं और जब तक वे काव्य में व्यक्त नहीं हो जाते, वहीं रहते हैं। किन्तु जब वे घुलमिल कर कविता के रूप में व्यक्त हो जाते हैं तो उनका स्वरूप कुछ-और ही हो जाता है। उन सब तत्वों के मिश्रण से जो नयी वस्तु सृजित होती है, वह अपने सभी घटक तत्वों से भिन्न होती है। दूसरे शब्दों में, कहा जा सकता है कि कवि के भाव, विचार, अनुभव, अनुभूतियाँ, बिम्ब एवं प्रतीक आदि अपने मूल रूप में व्यक्त न होकर एक ऐसे नये रूप में व्यक्त होते हैं, जो किसी भी घटक-तत्त्व के पूर्ववर्ती रूप से मेल नहीं खाता। जिस प्रकार एक स्वादिष्ट चटनी में नमक, मिर्च, खटाई, पोदीना आदि न-जाने कितने पदार्थ मिश्रित रहते हैं, किन्तु यदि हमें पूछा जाये कि इस चटनी का स्वाद नमक जैसा है या मिर्च जैसा अथवा खटाई जैसा, तो इन सब प्रश्नों का एक ही उत्तार होगा कि उसका स्वाद इन सभी से भिन्न है। वह एक ऐसा नया स्वाद है, जो इन सबमें से किसी भी एक में नहीं मिलता। यही बात कविता पर लागू होती है। इसलिये इलियट ने कहा है, ''कविता के माध्यम से हम भावों की अभिव्यक्ति नहीं करते, अपितु उनसे मुक्ति प्राप्त करते हैं या उनसे पलायन करते हैं। भाव ही नहीं, कविता के माध्यम से कवि अपनी वैयक्तिकता की सीमाओं से भी मुक्त हो जाता है। उसका स्वर एक व्यक्ति का स्वर न रहकर विश्वमानव का सार्वजनीन स्वर बन जाता है।''

इलियट ने साहित्य में रोमानी भावगत मूल्यों के विरुद्ध प्राचीन वस्तुगत एवं तटस्थ दृष्टिकोण का समर्थन किया है। उनके अनुसार, काव्य की रचना एक निर्वैयक्तिक साधना है। इसमें कवि को कलात्मक उद्देश्य के प्रति पूर्णतः आत्मसमर्पण करना पड़ता है। इसीलिए कविता आत्माभिव्यक्ति न होकर आत्म से पलायन है। कविता, व्यक्तित्व का अनवरत निषेध होने के कारण, कला की रचना है, कवि के मनोवेगों का उद्गार नहीं है। स्पष्ट है कि कला की निर्वैयक्तिकता में इलियट का गहरा विश्वास था। अपने आदर्श 'एज़रा पाउण्ड' की भांति वह भी कला की वस्तुनिष्ठता का समर्थक था। कुशल कलाकार उसकी दृष्टि में वही था, जिसके मन में भोगने वाले प्राणी और रचयिता के बीच अन्तर का विचार होगा। कवि के पास अभिव्यक्त करने के लिए कोई व्यक्तित्व नहीं होता, वह तो केवल माध्यम है। इलियट के ही शब्दों में, "कविता की भावनाएँ या संवेदनाएँ या उसके बिम्ब कवि की भावनाओं, संवेदनाओं एवं उसके अन्तर में निर्मित बिम्बों से सर्वथा पृथक् होते हैं।" व्यक्ति के लिए जो अनुभव या प्रभाव मुख्य होते हैं, कविता के लिए वे मुख्य नहीं भी हो सकते। साथ ही, जो कविता के अनुभव-प्रभाव हैं, उनका मानव-जीवन पर प्रभाव ही न हो, ऐसा भी हो सकता है।

अनुभव, जब तक वह कला के क्षेत्र में नहीं आता, व्यक्तिनिष्ठ है, किन्तु जब वह कला की वस्तु बन जाता है, तब उसे स्वयं को परिवर्तित करना होता है और उसके लिए अपने निजी अर्थ को साधारण बनाना अनिवार्य हो जाता है। कविता के अनिजत्व का तात्पर्य है कि वह कभी भी आत्म-प्रकाशन न हो, वरन् ऐसे अनुभव का प्रकाशन हो, जो कवि का नहीं है। इसका अर्थ है कि अनुभव को अव्यक्तिगत बनाना आवश्यक है। दूसरे शब्दों में, अनुभव कवि को आदेश देता है कि तुम माध्यम ह॓, कोई रूप खोजकर मुझे अभिव्यक्ति दो। इस आदेशानुसार कवि चरित्र खोजता है या स्वयं कोई मुखौटा लगा लेता है और न-केवल अनुभव के आदेश का पालन करता है, बल्कि, साथ ही, अन्तर्निहित भावनाओं को अभिव्यक्त करने का साधन भी बना लेता है।

इलियट काव्य को व्यक्तित्व नहीं मानता, उसे भावों की अभिव्यंजना भी नहीं मानता, अपितु काव्य को वह एक ऐसा साधन मानता है, जिसके द्वारा व्यक्तित्व और भावों से कवि का आरक्षण हो सके। कलाकार की उन्नति निरंतर आत्म-बलिदान और निरंतर व्यक्तित्व के परिहार में निहित है। यह आत्म-बलिदान और व्यक्तित्व-परिहार परम्परा के नियमित रूप से ग्रहण करने पर ही संभव हो सकता है। इस प्रकार, परम्परा के तत्वों के सन्निवेश के कारण उसकी रचना में वह शक्ति आ जाती है, जिससे श्रोता अथवा पाठक मुग्ध होकर उसे अपना ही मानने लग जाता है।

कवि जो-कुछ कहना चाहता है, उसको सुनने के लिए श्रोता भी चाहिए। वह शून्य में अपने रागों का संधान नहीं करता, बल्कि समाज के धरातल पर अपने गीतों का अवतरण करता है। यदि कवि अपनी ही गाथा को अपने एकांतिक रूप में निरन्तर गति से गाता चला जाय और सुनने वाले की रुचि एवं उत्सुकता का ध्यान न रखे, तो साहित्य केवल पृथक्-पृथक् रचनाओं के समूह से आक्रान्त होकर निर्जीव हो जाएगा। इससे साहित्य की रक्षा के लिए कवि का अतीत की भावना से सदैव संयुक्त रहना नितांत अनिवार्य है- ''अधिक बलयुक्त बात यह है कि कवि को अतीत की सचेतना अवश्य विकसित अथवा सुरक्षित करनी चाहिए और उसे चाहिए कि वह जीवन भर इस चेतना के विकास को गतिमान रखे।''

कवि का अतीत से सम्बन्ध, इलियट के अनुसार, अनिवार्य है, किन्तु इस सम्बन्ध में ध्यान देने योग्य तीन बाते हैं- प्रथम तो कवि को अतीत का ग्रहण खण्ड-रूप में नहीं करना चाहिए, फिर उसकी एक-दो विशेषताओं के ग्रहण से ही संतुष्टि नहीं माननी चाहिए और, अन्त में, उसे किसी काल-विशेष से मोह न रखकर अतीत की समग्रता में व्याप्त परम्परा के जीवन-परमाणुओं की खोज करनी चाहिए। अतीत की एकसूत्रता में वर्तमान को रखते हुए, उसकी समस्याओं के सरलीकरण के लिए, अतीत की वर्तमानता का आलोक अनिवार्य है- ''अतीत और वर्तमान का अन्तर यह है कि वर्तमान की चेतना एक रूप में अतीत की जागरूकता है, जिसे एक सीमा तक कवि की जागरूकता भी प्रकट नहीं कर सकती।''

इलियट के अनुसार, काव्य की चेतना व्यष्टिगत न होकर समष्टिगत है। यदि काव्य में भाव का स्थान है, तो वह विषयगत न होकर घटनाओं पर अवलम्बित होता है। इलियट का यह 'अव्यक्तिगत सिद्धान्त' उसकी अपनी परम्परा की विचारधारा से निःसृत है।

इलियट के अनुसार, निर्वैयक्तिक कला के सिद्धान्त का दूसरा पक्ष है- कवि और कविता का सम्बन्ध। इलियट ने काव्य-सृजन का क्रम प्रस्तुत करते हुए रासायनिक प्रक्रिया के साथ उसकी तुलना की है। जब ऑक्सीजन और सल्फरडाइआक्साइड, दोनों रासायनिक वस्तुएँ प्लेटिनम के तार के संपर्क में आती हैं, तो वे सल्फ्यूरिक एसिड के रूप में परिवर्तित हो जाती हैं। यह तभी संभव है, जब प्लेटिनम मौजूद हो, किन्तु इससे प्लेटिनम में कोई परिवर्तन नहीं होता। यद्यपि इसके बिना कोई रासायनिक परिवर्तन भी नहीं हो सकता। वह प्लेटिनम निष्क्रिय, तटस्थ और अपरिवर्तित रहता है। 'ट्रैडीशन एण्ड इण्डिविजुअल टेलैण्ट' में इलियट कहता है, ''कवि का मस्तिष्क इस प्लेटिनम के टुकड़े की भांति होता है। व्यक्ति के अनुभव को यह पूर्णतः या अंशतः प्रभावित कर

सकता है, परन्तु कलाकार जितना सिद्धहस्त होगा, उतने ही उसमें भोक्ता-मानव और सृष्टा-मस्तिष्क अलग रहेंगे।''

बस, इसी उपमा को बहुत-दूर तक सृजन के ऊपर घटित करते हुए इलियट ने कई ऐसे वाक्य लिखे हैं, जो नये सृष्टाओं के मुख से नारा बनकर गूँजते-अनुगूँजते चले जा रहे हैं, जैसे, ''कला व्यक्तित्व की अभिव्यक्ति नहीं, वरन् उससे पलायन है,'' ''व्यक्तिगत भावों का प्रकाशन कला नहीं है, वरन् उनसे पलायन कला है,'' ''जब तक ऊपरी ढक्कन फूट न जाय, तब तक हम नहीं जान पाते कि उसके भीतर क्या है,'' ''निजता-त्याग तथा निजता का निरंतर निषेध कवि के सृजन की प्रक्रिया है,'' ''कविता लिखने का अनुभव दर्शन नहीं, वरन् एक प्रक्रिया है, जो कागज़ पर शब्द-संयोजन में विश्रान्त होती है,'' ''भावों की महानता और तीव्रता नहीं, वरन् सृजन-प्रक्रिया के उस दबाव की उत्कटता महत्त्वपूर्ण होती है, जिसके कारण रचना की उत्पत्ति होती है,'' आदि-आदि।

लेकिन सन् 1940 में 'यीट्स' के विषय में समीक्षात्मक भाषण देते समय उन्होंने कला की निर्वैयक्तिकता से सम्बन्धित अपने उपर्युक्त मतों को स्मरण करके कहा कि ''मैंने अपने प्रारम्भिक लेखों में कला की निर्वैयक्तिकता को स्वीकार किया है,लेकिन उस समय शायद मैं अपना मन्तव्य ठीक से व्यक्त न कर सका था, या वह मेरा अप्रौढ़ बोध रहा। अब मैं सोचता हूं कि निर्वैयक्तिकता के दो रूप होते हैं- कुशल शिल्पी की निर्वैयक्तिकता और वास्तविक सृष्टा की निर्वैयक्तिकता।'' तात्पर्य यह है कि एक निर्वैयक्तिकता शिल्प होती है और दूसरी सृजन। यह दूसरे प्रकार की निर्वैयक्तिकता उस सृष्टा की होती है, जो अपने तीव्र एवं वैयक्तिक अनुभवों के भीतर से सामान्य सत्य को उजागर करने में समर्थ होता है और साथ ही, अपने अनुभव की सम्पूर्ण विशिष्टता को भी बनाए रख सकता है। भारतीय पाठक को यह बतलाने की आवश्यकता नहीं है कि विशिष्ट को बनाये रखकर उसके द्वारा (तत्काल) सामान्य को प्रकाशित करने को ही 'साधारणीकरण' निरूपित किया गया है। जिसके पास वह विशिष्ट नहीं होगा और जिसमें उस विशिष्ट द्वारा सामान्य को प्रकाशित करने का सृजन-नैपुण्य नहीं होगा, वह सच्चे अर्थ में सृष्टा नहीं माना जा सकता। कहना न होगा कि इस विषय में इलियट और अभिनवगुप्त एकमत हैं।

- **स्व-मूल्यांकन (क)**

प्रिय विद्यार्थियो! इस पाठ से आपको टी.एस.इलियट की परम्परा और निर्वैयक्तिकता का जो ज्ञान प्राप्त हुआ है, उसका स्व-मूल्यांकन आप निम्नलिखित बहुविकल्पीय प्रश्नों द्वारा करें।

बहुविकल्पीय प्रश्न

1) इलियट के अनुसार किसका तात्पर्य एक समुदाय के व्यक्तियों के रक्त-सम्बन्ध में व्यक्त होने वाले सभी स्वाभाविक कार्यों एवं रीति-रिवाजों से है जो उसकी संस्कृति होते हैं।

क) परम्परा ख) निर्वैयक्तिकता

ग) दोनों घ) दोनों में से कोई नहीं

2) इलियट ने सृजन को कैसे निरुपित किया है?

क) वैयक्तिक ख) निर्वैयक्तिक

ग) दोनों घ) दोनों में से कोई नहीं

3) कवि के मस्तिष्क में क्या-क्या रहता है?

क) अनगिनत भाव ख) अनुभूतियाँ

ग) शब्दावलियाँ घ) उपर्युक्त सभी

4) कविता के माध्यम से हम भावों की अभिव्यक्ति नहीं करते, अपितु उनसे मुक्ति प्राप्त करते हैं या उनसे पलायन करते हैं, भाव ही नहीं कविता के माध्यम से कवि अपनी वैयक्तिकता की सीमाओं से भी मुक्त हो जाता है। उसका स्वर एक व्यक्ति का स्वर न रहकर विश्वमानव का सार्वजनीन स्वर बन जाता है।'' प्रस्तुत पंक्ति किस पाश्चात्य विचारक की है?

क) वड्स्वर्थ ख) इलियट

ग) कॉलेरिज घ) ड्राइडन

5) किस पाश्चात्य विचारक के अनुसार काव्य की चेतना व्यष्टिगत न होकर समष्टिगत है?

क) इलियट ख) ड्राइडन

ग) कॉलेरिज घ) वड्स्वर्थ

6) कवि का मस्तिष्क इस प्लेटिनम के टुकड़े की भांति होता है। व्यक्ति के अनुभव को यह पूर्णतः या अंशतः प्रभावित कर सकता है परन्तु कलाकर जितना सिद्धहस्त होगा, उतने ही उसमें भोक्ता-मानव और स्रष्टा-मस्तिष्क अलग रहेंगे।'' प्रस्तुत पंक्ति किस पाश्चात्य विचारक की है?

क) प्लेटो ख) अरस्तू

ग) इलियट घ) कॉलेरिज

9.4 वस्तुनिष्ठ सहसम्बन्धः

जब इलियट कवि-चेतना को व्यक्तित्व की अपेक्षा माध्यम की संज्ञा देते हैं, तो वे व्यक्ति और कवि के प्राक्कथन पर बल देते हैं । फलतः वे अनुभूति और कला के प्राक्कथन को आवश्यक मानते हैं, क्योंकि व्यक्ति और अनुभूति तो परम्परा के बिना भी अपना अस्तित्व रख सकते हैं, लेकिन कवि और कला नहीं। अनुभूति कला में प्रविष्ट होकर अपने वैयक्तिक अर्थ को खो बैठती है और अधिक व्यापक स्तर पर उसका स्वरूप बदल जाता है। यह कैसे घटित होता है, इसका पता कला से और उसका महत्त्व इतिहास से जाना जा सकता है। इस साध्य की पूर्ति के लिए कवि को मुखौटा पहनना होता है, जो उसकी चेतना में दबे बिम्बों को भी व्यक्त कर सकता है। इसलिए कविता एक व्यक्ति द्वारा दूसरे व्यक्ति के प्रति लिखी गयी कोई बात-मात्र नहीं है, बल्कि वह एक ऐसी संरचना है, जिससे कवि का अस्तित्व नहीं रहता, बल्कि कवि अनुभूति का ऐसा माध्यम बन जाता है जो सभी पाठकों से सम्बन्ध रखती है। इलियट के अनुसार, "शेक्सपियर भी इसी जीवन-सहेजक संघर्ष से जूझता रहा, ताकि वह अपनी वैयक्तिक और निजी पीड़ा को किसी समृद्ध, वैश्विक और निर्वैयक्तिक स्तर पर सम्प्रेषित कर सके।"

'हेमलेट' नाटक की समीक्षा करते हुए इलियट ने लिखा है कि "कला की दृष्टि से यह नाटक एक असफल कृति है। कृति है। यह नाटक माँ के अपराध का पुत्र पर पड़े प्रभाव का प्रदर्शन करता है। परन्तु नाटक की प्राचीन वस्तु को उपयुक्त रूप प्रदान करने में शेक्सपियर असफल रहा। कला में भाव (चित्तवृत्ति विशेष) के प्रकाशन का एक ही मार्ग है कि उसका उचित वस्तुनिष्ठ समीकरण प्रस्तुत कर दिया जाये। दूसरे शब्दों में, एक ऐसी वस्तु-संघटना, स्थिति या घटना-शृंखला सामने रखी जाये, जो उस भाव का सूत्र हो, ताकि ये बाह्य तथ्य, जिनका पर्यवसान मूर्त मानस-अनुभव में हो, जब प्रस्तुत किये जायें तो तुरन्त भावोद्रेक हो जाय। "भाव के इस बाह्य विधान की उपयुक्तता सृजन के सफल होने के लिए अनिवार्य है। 'हेमलेट' की विक्षुब्धि उसकी माँ के कर्मों के कारण है, किन्तु उसकी माँ उसकी विक्षुब्ध चित्तवृत्ति के लिए उपयुक्त 'समीकरण' नहीं है। उसकी वह चित्तवृत्ति माँ को लाँघकर आगे बढ़ जाती है। अतएव वह अपनी उस चित्तवृत्ति को स्वयं समझ नहीं पाता, उसे मूर्त नहीं कर पाता। परिणाम यह होता है कि क्रिया में अवरोध उत्पन्न हो जाता है और उसका जीवन विषाक्त बन जाता है।

इलियट के इस 'ऑब्जेक्टिव कोरिलेटिव' मत की काफी चर्चा हुई। विरोध में तो लिखा ही गया, पक्ष में लिखने वालों ने भी इसे पर्याप्त उलझनों में डाल दिया। परन्तु उपर्युक्त बातों पर विचार करने से यह स्पष्ट हो जाना चाहिए कि इलियट का अभिप्राय भारतीय आचार्यों द्वारा निरूपित विभाव-विधान के औचित्य से ही है। 'विभाव' के

अन्तर्गत उन सभी तत्वों का समावेश हो जाता है, जिनका उल्लेख इलियट ने उपर्युक्त उद्धरणों में किया है। यदि लेखक या कवि के शब्द अभीष्ट संवेदना को प्रति फलित करने में उपयुक्त नहीं है, तो आग्रहमुक्त समीक्षक उसकी सृजन-शक्ति को निर्बल ही घोषित करेगा।

- **स्व-मूल्यांकन (ख)**

प्रिय विद्यार्थियो! इस पाठ में अभी तक प्राप्त ज्ञान का मूल्यांकन आप निम्नलिखित रिक्त स्थान भरकर करें।

1. जब इलियट कवि-चेतना को व्यक्तित्व की अपेक्षा माध्यम की संज्ञा देते हैं, तो वे व्यक्ति और ------ के प्राक्कथन पर बल देते हैं।
2. अनुभूति ------ में प्रविष्ट होकर अपने वैयक्तिक अर्थ को खो बैठती है और अधिक व्यापक स्तर पर उसका स्वरूप बदल जाता है।
3. ------ नाटक की समीक्षा करते हुए इलियट ने लिखा है कि "कला की दृष्टि से यह नाटक एक असफल कृति है।"
4. इलियट के ------ मत की काफी चर्चा हुई।
5. ------ के अन्तर्गत उन सभी तत्वों का समावेश हो जाता है, जिनका उल्लेख इलियट ने उद्धरणों में किया है।

9.5 काव्य-भाषा

इलियट की मान्यता है कि कविता भाव-प्रधान होती है और गद्य विचार-प्रधान। हम विदेशी भाषा के गद्य को, उसकी कविता की अपेक्षा, अधिक अच्छी तरह समझ सकते हैं। विदेशी भाषा में विचार व्यक्त करना सरल है, पर उसमें महसूस करना कठिन है। प्रत्येक जाति और राष्ट्र की अनुभूति-शक्ति की निजी विशेषता होती है, जो उसकी निजी भाषा में ही व्यक्त की जा सकती है। संवेदनापरक सभी प्रकारों और कोटियों के विषय में यही बात चरितार्थ होती है। इसलिए इलियट का कहना है कि "कविता उन सभी तत्वों को उजागर करती है, जो केवल एक भाषा में व्यक्त किए जा सकते हैं और जिनका अनुवाद नहीं हो सकता।" प्रत्येक जाति की भाषा का सम्बन्ध उसकी संस्कृति से होता है और अपनी संस्कृति के वैशिष्ट्य की रक्षा होनी चाहिए। इस प्रकार संस्कृति, संवेदना और भाषा, तीनों की एकसूत्रता इलियट ने स्वीकार की है। उनका मत है कि जिस क्षण किसी भाषा में अनुभूति के प्रकाशन की प्रक्रिया खत्म हो जायेगी, उस क्षण उसे बोलने वालों का भविष्य भयावह माना जायेगा।

कवि-कर्म भाषा के माध्यम से होता है, इसलिए कवि को प्रायः भाषा-संघर्ष करना पड़ता है। वह भाषा को अपने अनुकूल बनाता है और नवीन संवेदनों की अभिव्यंजना के लिए भाषा को नई शक्ति प्रदान करता है। संवेदन-शक्ति तो स्वयं परिवर्तित हो जाती है, पर अभिव्यंजना को बदलना पड़ता है। अतएव "कवि का कर्त्तव्य है कि वह अभिव्यक्ति के नवीन माध्यम गढ़ता चले और ऐसा वह न-केवल अपने युग के लिए, वरन् अपने में होने वाले प्रत्येक परिवर्तन के लिए भी करे। भाषा का विकास करने और शब्दों को अर्थ-समृद्ध बनाने में, कवि, अन्यों के भाव और बोध की शक्तियों का विवर्धन कर देता है।...... भाषा का प्रत्येक सशक्त विकास अनुभूति का विकास है।" तात्पर्य यह है कि कवि भाषा को सशक्त बनाता है और उसके कारण अन्यों को भी अपनी संवेदनाओं की अभिव्यक्ति का रास्ता मिल जाता है। इसलिए इलियट के अनुसार, कवि का प्रत्यक्ष कर्म भाषा के प्रति होता है और अप्रत्यक्ष रूप से समाज के साथ। इसके लिए कवि को निरन्तर अभ्यास-प्रयोग करते रहना चाहिए। कविता की भाषा के विषय में उसका यह भी कहना है कि वास्तव में कविता की भाषा कवि की बोल-चाल या व्यवहार की हूबहू भाषा नहीं होती, पर उसे युगानुकूल भाषा के इतने निकट होना चाहिए कि पाठक कह सके कि यदि मैं कविता में बात करना जानता, तो इसी प्रकार करता। आधुनिक युग में अधिकांश कविता बोलने के लिए लिखी जाती है। इसलिए उसका सम्बन्ध बोलचाल की भाषा से होना ही चाहिए। परन्तु जीवन के समान साहित्य में भी निरन्तर विद्रोह की स्थिति ठीक नहीं होती। कविता का यही उद्देश्य नहीं है कि वह अपने युग की भाषा का संस्कार करे, वरन् यह भी कि वह उसे द्रुतगति से परिवर्तित होने में सहायता भी करे। क्योंकि भाषा में द्रुतगति से होने वाला परिवर्तन एक प्रकार से उसका ह्रास भी हो सकता है। यदि कविता (या सृजन) को विकास-पथ पर चलना है, तो उसके भाषा-प्रयोग का एक आदर्श निश्चित होना चाहिए। उसे यह समझना आवश्यक है कि काव्य-संगीत उस कविता में अधिक होता है, जो उपयुक्ततम शब्दों में निश्चित अर्थ व्यक्त करती है।

शिल्प को भावानुगामी होने के लिए, भाव-बोध के साथ प्रभावों की मानसिक स्थिति और उनकी परिपक्वता का अनुकरण करना होता है। इसके लिए पहले के कवियों का अनुकरण भी भाव और शिल्प के स्तरों पर हो सकता है, लेकिन वर्तमान कवि को सदैव अपनी चेतना के संघटन पर ध्यान देना होता है। इसलिए इलियट पूर्ववर्ती कवियों के अनुकरण के सम्बन्ध में आधुनिक कवि की उत्तमता के स्तरों के सम्बन्ध में कहता है कि "किसी कवि की सर्वाधिक विश्वसनीय परीक्षा उसके उधार-ग्रहण का ढंग ही है। अपरिपक्व कवि नकल करते हैं, परिपक्व कवि चोरी करते हैं, निकृष्ट कवि उधार को भी कुरूप बना देते हैं और श्रेष्ठ कवि इसमें भी सुधार लाते हैं या कम-से-कम इसे किसी

अन्य ढंग से प्रस्तुत करते हैं। श्रेष्ठ कवि अपनी चोरी को भावगत सार्वभौमता का रूप देता है, जो कि अद्‌वितीय होता है और यह अपने मूल रूप से नितान्त भिन्न प्रकार का हो जाता है।''

इलियट के अनुसार, शिल्प-पक्ष में बिम्ब-विधान का बहुत-अधिक महत्त्व है। यह बिम्ब-विधान उसी मूल बौद्‌धिक सक्रियता की अपेक्षा रखता है, जिसकी आवश्यकता किसी भी मत या विवाद को क्रम प्रदान करने के लिए रहती है। इस रूप में बिम्बों और विचार शृंखला के चुनाव में कोई विसंगति नहीं होती। कल्पना में भी अभिमतगत संगति रहती है। जो लोग कविता नहीं समझते, वे ही बिम्ब-विधान को लेकर क्रम और दयति क्रम को समझने में असमर्थ रहते हैं।

9.6 निष्कर्ष:

इलियट के मतानुसार, वही काव्य अथवा साहित्य श्रेष्ठ होगा, जिसमें धार्मिक प्रबुद्‌धता स्वतः स्फुरित रूप में आ जाए। विशेष रूप से प्रयत्न करके और निश्चित उद्‌देश्य लेकर धार्मिक प्रबुद्‌धता की अवधारणा सत्साहित्य का अंग नहीं बन सकती।

- **स्व-मूल्यांकन (ग)**

प्रिय विद्‌यार्थियो! निम्नलिखित प्रश्नों के उत्तर सही या गलत चिन्ह द्‌वारा देरक आप अभी तक प्राप्त ज्ञान का स्व-मूल्यांकन करें।

1. इलियट की मान्यता है कि कविता भाव-प्रधान होती है और गद्‌य विचार प्रदान।
2. विदेशी भाषा में विचार व्यक्त करना कठिन है, पर उसमें महसूस करना सरल है।
3. प्रत्येक जाति और राष्ट्र की अनुभूति शक्ति की निजी विशेषता होती है जो उसकी निजी भाषा में ही व्यक्त ही जा सकती है।
4. इलियट के अनुसार ''कविता उन सभी तत्वों को उजागर करती है, जो केवल एक भाषा में व्यक्त किए जा सकते हैं और जिनका अनुवाद नहीं हो सकता।
5. इलियट के अनुसार कवि का प्रत्यक्ष कर्म भाषा के प्रति होता है और प्रत्यक्ष रूप से समाज के साथ।

9.7 कठिन शब्द

1. अंतदृष्टि = अंतःज्ञान, अंतर्बोध।
2. निर्वैयक्तिक = जो व्यक्तिगत न हो।
3. संधान = अनुसंधान, निशाना लगाना।
4. अतिक्रमण = सीमा का अल्लंघन
5. उद्‌घोष = किसी सूचना की घोषणा करने वाला

6. परिहार = त्यागना, छोड़ना
7. अवलम्बित = आश्रित, सहारे पर स्थितःटिका हुआ।
8. निष्क्रिय = कोई काम-धाम न करने वाला।
9. समीकरण = संख्याओं या वस्तुओं को समान करने की क्रिया या भाव, बरबर करना
10. प्रबुद्धता = जागा हुआ, जागृत

9.8 अभ्यासार्थ प्रश्न:

1. टी. एस. इलियट के समीक्षा सिद्धांत पर प्रकाश डालिए ।

2. इलियट के निर्वैयक्तिकता सिद्धांत का विवेचन कीजिए ।

3. इलियट की परम्परा संबंधी अवधारणा पर प्रकाश डालिए ।

4. निम्नलिखित पर टिप्पणी लिखिए:

क. काव्य भाषा

ख. काव्य प्रयोजन

ग. कविता और नैतिकता

9.9 उत्तर कुंजी

स्व-मूल्यांकन (क)

1. परम्परा
2. निर्वैयक्तिक
3. उपर्युक्त सभी
4. इलियट
5. इलियट
6. इलियट

स्व-मूल्यांकन (ख)

1. कवि
2. कला
3. हेमलेट
4. ऑब्जेक्टिव कोरिलेटिव
5. विभाव

स्व-मूल्यांकन (ग)

1. सही
2. गलत
3. सही
4. सही
5. सही

9.10 पठनीय पुस्तकें

1. पाश्चात्य काव्य शास्त्र- देवेन्द्रनाथ शर्मा, नेशनल पेपरबैक्स, 2023
2. पाश्चात्य साहित्य चिंतन, प्रो. निर्मला जैन, राधाकृष्ण प्रकाशन, 2017

3 उदात्त के विषय में, -प्रो.नगेन्द्र जैन, वाणी प्रकाशन, दिल्ली, 2004

4 पाश्चात्य काव्य शास्त्र की परम्परा, सं. डॉ. नागेन्द्र और सावित्री सिन्हा

5 काव्य में उदात्त तत्व, डॉ. नगेन्द्र और नेमिचन्द्र जैन, राजपाल एवं संस, दिल्ली

टी.एस. इलियट- काव्य प्रयोजन और काव्य नैतिकता

रुपरेखा

10.1 उद्देश्य एवं अपेक्षित परिणाम
10.2 प्रस्तावना
10.3 काव्य प्रयोजन
स्व-मूल्यांकन (क)
10.4 काव्य और नैतिकता
स्व-मूल्यांकन (क)
स्व-मूल्यांकन (ख)
10.5 सारांश
10.6 कठिन शब्द
10.7 अभ्यासार्थ प्रश्न
10.8 उत्तर कुंजी
10.9 पठनीय पुस्तकें

10.1 उद्देश्य एवं अपेक्षित परिणाम

प्रिय विद्यार्थियों प्रस्तुत आलेख का उद्देश्य आप को टी.एस. इलियट के काव्य प्रयोजन से परिचित करवाते हुए कविता और नैतिकता की जानकारी देना है।
अपेक्षित परिणाम प्रस्तुत पाठ का विस्तृत अध्ययन करने के पश्चात आप टी.एस. इलियट के काव्य प्रयोजन को समझने के साथ ही कविता और नैतिकता को पूर्ण रुप से समझने में समक्षम होगें।

10.2 प्रस्तावना- प्रिय विद्यार्थियो इससे पूर्व अध्याय में आपने टी.एस इलियट के परम्परा और निर्वैयक्तिता से परिचित होते हुए वस्तुनिष्ठ सहसम्बंध तथा काव्य भाषा की जानकारी प्राप्त की। प्रस्तुत अध्याय में आप टी.एस. इलियट के काव्य प्रयोजन तथा कविता और नैतिकता को पूर्ण रुप से समझने में सक्षम होगें।

10.3 काव्य प्रयोजन

इलियट ने काव्य के तीन स्वर माने हैं-प्रथम स्वर वह है, जिसमें कवि अन्य किसी से नहीं, वरन् स्वयं से बात करता है। द्वितीय स्वर है, जिससे वह अन्यों (श्रोताओं) से

बात करता है, और तृतीय स्वर में कवि स्वयं वक्ता न होकर पात्रों के माध्यम से बोलता है। प्रथम प्रकार के स्वर में कवि का लक्ष्य समर्पण, अर्थात् दूसरों तक अपने भाव पहुँचाना नहीं होता। वह तो एक प्रकार के भार से व्यथित रहता है और अपनी बात कह उससे छुटकारा पाता है। दूसरे स्वर में कविता किसी सजग सामाजिक उद्देश्य के लिए लिखी जाती है। मनोरंजन या उपदेश के लिए लिखा गया साहित्य और व्यंग्य-काव्य इसी कोटि में आता है। महाकाव्य में भी वही स्वर प्रदान होता है। ऐसी कविताओं में कुछ अंश तक 'रूप' पूर्व-निर्धारित होता है। तीसरे स्वर के अन्तर्गत नाटक आते हैं। स्पष्ट है कि दूसरे और तीसरे स्वरों की कृतियों को इलियट कवि की अचेतावस्था से उद्भूत नहीं मानते, क्यकि इनमें वह पूर्ण सजग होकर अपने व्यक्तितत्व से कृति का निर्माण करता है।

वस्तुतः, किसी भी कविता में केवल एक स्वर मिलना कठिन है। इलियट के शब्दों में, ''यदि कवि ने निज से कभी कुछ नहीं कहा, तो उसकी कृति कविता नहीं होगी- शानदार वक्तृत्व भले ही हो। किन्तु यदि कवि ने नितान्त अपने लिए कविता लिखी है, तो वह एक व्यक्तिगत और अपरिचित भाषा में होगी। जो कविता केवल कवि के लिए होगी, वह कविता नहीं हो सकती।''

इस प्रकार समालोचक-इलियट सबसे पहले हमें यह बताता है कि वह हमारे काल का एक सचेत कवि है, जिसने कविता के स्वरूप और कार्य पर विचार किया है। उसकी कविता एक ऐसे कवि की कविता नहीं है जो कविता को तुरन्त की अनुभूति समझता हो, बल्कि वह तो उसकी सम्पूर्ण शक्ति के विनियोग से अंकुरित हुई है। इसलिए इलियट प्रकृत्या नैतिकता और मानव-इतिहास का कवि है, न कि भौतिक प्रकृति, सौन्दर्य अथवा केवल आत्मपरक जीवन का कवि।

'यूज़ ऑफ पोइट्री एण्ड द यूज़ ऑफ क्रिटिसिज़्म में इलियट काव्यार्थ को स्पष्ट करते हुए लिखते हैं कि ''सामान्यतः काव्यार्थ की मुख्य उपयोगिता पाठक को किसी आदत की संतुष्टि में अथवा उसके मस्तिष्क को स्व से परे और शान्त रखने में है।''

- **स्व-मूल्यांकन (क)**

प्रिय विद्यार्थियों। इस पाठ में अभी तक प्राप्त ज्ञान का मूल्यांकन आप निम्नलिखित रिक्त स्थान भरकर करे।

1) इलियट ने काव्य के .... स्वर माने है।
2) प्रथम स्वर वह है, जिसमें कवि अन्य से नहीं वरन .... से बात करता है।
3) दूसरे स्वर में कविता किसी ....सामाजिक उद्देश्य के लिए लिखी जाती है।

4) इलियट के अनुसार जो कविता केवल .... के लिए होगी, वह कविता नहीं हो सकती।

5) इलियट प्रकृत्या नैतिकता और .... का कवि है, न कि भौतिक प्रकृति, सौन्दर्य अथवा केवल आत्मपरक जीवन का कवि।

6) इलियट के अनुसार, द्वितीय वह स्वर है, जिससे वह अन्यों .... से बात करता है।

7) तृतीय स्वर में कवि स्वयं वक्ता न होकर .... के माध्यम से बोलता है।

8) प्रथम प्रकार के स्वर में कवि का लक्ष्य .... अर्थात दूसरों तक अपने भाव पहुँचाना नही होता।

9) दूसरे प्रकार के स्वर में मनोरंजन या .... के लिए लिखा गया साहित्य और व्यंग्य-काव्य इसी कोटि में आता है।

10) तीसरे स्वर के अंतर्गत .... आते है।

11) दूसरे और तीसरे स्वरों की कृतियों को इलियट कवि की .... से उद्धृत नहीं मानते, क्योंकि वह पूर्ण सजग होकर अपने व्यक्तित्व से कृति का निर्णाण करता है।

12) .... के शब्दों में यदि कवि ने निज से कभी कुछ नहीं कहा, तो उसकी कृति कविता नहीं होगी। शानदार वक्तृत्व भले ही हो।

13) यदि कवि ने नितान्त अपने लिए कविता लिखी है तो वह एक .... और अपरिचित भाषा में होगी।

14) .... सबसे पहले हमें यह बताता है कि वह हमारे काल का एक सचेत कवि है, जिसने कविता के स्वरुप और कार्य पर विचार किया है।

10.4 कविता और नैतिकता:

कविता और नैतिकता को लेकर पाश्चात्य साहित्य-जगत् के महानतम विचारकों ने अपने युग की नैतिक, धार्मिक और सामाजिक परिस्थितियों के परिप्रेक्ष्य में गम्भीर विवेचन किया है। यद्यपि आरम्भ में इलियट ने काव्य की स्वतंत्र सत्ता स्थापित की थी, किन्तु कालान्तर में उसके विचारों में पर्याप्त परिवर्तन हुआ और उसकी परिशोधित मान्यताएं सामने आईं। एक ऐसी स्थिति भी आई, जब इलियट ने यह कहा कि "नैतिक और धार्मिक दृष्टिकोण से साहित्यालोचन में पूर्णता ले आनी चाहिए। साहित्य की महानता केवल साहित्यिक प्रतिमानों द्वारा निर्धारित नहीं की जा सकती, लेकिन यह साहित्य है कि नहीं, इसकी जाँच साहित्यिक प्रतिमानों द्वारा ही हो सकती है।" इस

विवेचन से इतनी बात स्पष्ट है कि पहले तो साहित्य विशुद्ध रूप से साहित्य होना चाहिए और जब यह निश्चित हो जाए कि अमुक कृति साहित्य की श्रेणी में आ सकती है, तो उसका मूल्यांकन साहित्येतर प्रतिमानों द्वारा किया जाना चाहिए। ये साहित्येत्तर प्रतिमान क्या हैं? इस सम्बन्ध में स्वयं इलियट यह कहते हैं कि जब एक बार यह निश्चित हो जाए कि अमुक कृति साहित्य है तो "यह निश्चित करना भी आवश्यक है कि उसका नैतिक मूल्य क्या है।" इलियट के काव्य सम्बन्धी चिन्तन से यह स्पष्ट है कि यद्यपि आरम्भ में उन्होंने साहित्य को उसका नितान्त स्वतंत्र पद प्रदान किया था, किन्तु कालान्तर में उसकी मान्यताएं निरन्तर बदलती रही हैं। कदाचित् इसी कारण उनके परवर्ती चिन्तन को देखकर विंकलर और टेट, दोनों ने इलियट पर नैतिकता के प्रबल समर्थक होने का आरोप लगाया था। इसी सम्बन्ध में उनके 'साहित्य और धर्म' नामक लेख ने इस तथ्य की और अधिक पुष्टि कर दी कि काव्यपरक क्रमबद्धता का महान् समर्थक इलियट नैतिक और धार्मिक प्रतिमानों का पुजारी बन गया है।

इलियट ने धर्म और साहित्य के पारस्परिक सम्बन्धों का विश्लेषण करते हुए यह कहा है कि साहित्य में धर्म और नीति का समावेश तो होना चाहिए, किन्तु यह स्वतःस्फूर्त होना चाहिए। काव्य के माध्यम से नीति के उपदेश और धर्म के सिद्धान्तों की व्याख्या करना साहित्य के मूल स्वर का गला घोंटने जैसा है। इलियट अत्यन्त स्पष्ट शब्दों में कहता है कि "यह आवश्यक नहीं कि कवि अपनी कृति में नीति या धर्म का उपदेश दे, वैसा करना तो असाहित्यिक होगा। आवश्यक यह है कि उसकी धार्मिक प्रबुद्धता कृति में स्वतः स्फुरित रहे। जो साहित्य हमें जीने की कला सिखाए, वह महान् होगा, पर यह ज्ञान सजग प्रक्रिया द्वारा न होकर अप्रत्यक्ष रीति से किया जाना चाहिए और आनन्द उसका लक्ष्य होना चाहिए।" अपनी इसी मान्यता के आधार पर इलियट तीन प्रकार के काव्यों की चर्चा करता है। इलियट के इस काव्य-वर्गीकरण से यह भी पता चलता है कि धर्म और साहित्य के बीच किस प्रकार का सम्बन्ध होता है और इस सम्बन्ध का आदर्श रूप क्या होना चाहिए। इलियट के मतानुसार, एक तो विशुद्ध रूप से धार्मिक साहित्य होता है, जिसमें काव्योचित सौंदर्य होता भी है और नहीं भी। मूल बात यह है कि इस प्रकार के साहित्य का अध्ययन काव्यानन्द प्राप्त करने के लिए नहीं, अपितु धार्मिक जगत का अलौकिक सुख अनुभव करने के लिए किया जाता है। हिन्दी में गोस्वामी तुलसीदास का 'मानस' ऐसा ही महाकाव्य है, जो धार्मिक दृष्टि से हिन्दुओं का सर्वाधिक आदरपूर्ण ग्रन्थ होने के साथ-साथ काव्यानन्द की भी अक्षय
निधि है। उसमें केवल हिन्दुओं की भक्ति-पद्धति, धार्मिक विश्वासों एवं आस्थाओं की ही प्रतिष्ठा नहीं की गई है, अपितु काव्यगत सौन्दर्य की दृष्टि से भी वह हिन्दी का ही नहीं,

समूचे भारतवर्ष का एक कीर्तिस्तम्भ है। दूसरे प्रकार का साहित्य भक्तिमूलक साहित्य होता है, जिसमें जीवन की समग्रता सिमट कर नहीं आती। तीसरे प्रकार के साहित्य में ऐसी साहित्यिक कृतियां आती हैं, जिनमें काव्य के माध्यम से धर्म का प्रचार किया जाता है। इस प्रकार की कृतियों की रचना धर्म के अधिकाधिक प्रचार-प्रसार के निश्चित-उद्देश्य को लेकर की जाती है। निस्सन्देह, इस प्रकार का साहित्य प्रचार-साहित्य कहा जाएगा और, इस कारण, इस प्रकार के साहित्य को उच्च कोटि का काव्य नहीं कहा जा सकता।

- **स्व-मूल्यांकन (ख)**

1) किस रचनाओं के द्वारा इलियट काव्यार्थ को स्पष्ट करते हुए लिखते है कि 'सामान्यत' काव्यार्थ की मुख्य उपयोगिता पाठक को किसी आदत की संतुष्टि में अथवा उसके मस्तिष्क को स्व से परे और शांत रखने में है।

   (क) यूज़ ऑफ पोइट्री (ख) यूज़ ऑफ क्रिटिसिज्म
   (ग) दोनो (घ) दोनों में से कोई नहीं

2) कविता और नैतिकता को लेकर पाश्चात्य साहित्य-जगत के महानतम विचारकों ने अपने युग की कौन सी परिस्थितियों के परिप्रेक्ष्य में गंभीर विवेचन किया है।

   (क) नैतिक (ख) धार्मिक
   (ग) सामाजिक (घ) उपयुक्त सभी

3) पाश्चात्य काव्यशास्त्र के अंतर्गत किस आलोचक ने आरम्भ में काव्य की स्वतंत्र सत्ता स्थापित की थी, किन्तु कालान्तर में उसके विचारों में पर्याप्त परिवर्तन हुआ और उसकी परिशोधित मान्यताएं सामने आई।

   (क) टी.एस. इलियट (ख) मैथ्यू आर्नल्ड
   (ग) कॉलेरिज (घ) आई.ए. रिचर्ड

4) किस पाश्चात्य आलोचक के अनुसार, नैतिक और धार्मिक दृष्टिकोण से साहित्यालोचन में पूर्णता ले आनी चाहिए। साहित्य की महानता केवल साहित्यिक प्रति मानों द्वारा निर्धारित नहीं की जा सकती, लेकिन यह साहित्य है कि नही, इसकी जांच साहित्यिक प्रति मानों द्वारा ही हो सकती है।

   (क) ड्राइडन (ख) टी.एस. इलियट
   (ग) लोजाइनस (घ) वर्डस्वर्थ

5) इलियट के परवर्ती चिन्तन को देखकर किन आलोचकों ने इलियट पर नैतिकता के प्रक्रियाबल समर्थक होने का आरोप लगाया था।

   (क) विंकलर (ख) टेट
   (ग) दोनों (घ) दोनों में से कोई नहीं

6.) किस लेख ने इस लक्ष्य की और अधिक पुष्टि कर दी कि काव्यपरक क्रमबद्धता का महान समर्थक इलियट नैतिक और धार्मिक प्रति मानों को पुजारी बन गया है।

(क) साहित्य और कला (ख) साहित्य और धर्म

(ग) साहित्य और कर्म (घ) उपयुक्त सभी

7.) पाश्चात्य काव्यशास्त्र के किस आलोचक के अनुसार यह आवश्यक नहीं कि कवि अपनी कृति में नीतियां, धर्म का उपदेश दे, वैसा करना तो असाहित्यक होग। आवश्यक यह है कि उसकी धार्मिक प्रबुद्धता कृति में स्वत: स्फुरित रहे। जो साहित्य हमें जीनें की कला सिखाए, वह महान होगा, पर यह ज्ञान सजग प्रक्रिया द्वारा न होकर, अप्रत्यक्ष रीति से किया जाना चाहिए और आनंद उसका लक्ष्य होना चाहिए।

(क) मैथ्यू अर्नाल्ड (ख) वर्डसवर्थ

(ग) कॉलेरिज (घ) टी.एस. इलियट

8) इलियट के काव्य-वर्गीकरण से किसके सम्बन्ध के आदर्श रूप का पता चलता है?

(क) धर्म (ख) साहित्य

(ग) दोनों (घ) दोनों में से कोई नहीं

9) किसके मतानुसार, एक तो विशुद्ध रूप से धार्मिक साहित्य होता है, जिसमें काव्योचित सौंदर्य होता भी है और नहीं भी।

(क) अरस्तू (ख) प्लेटो

(ग) वडर्सवर्थ (घ) टी.एस. इलियट

10) हिंदी में गोस्वामी तुलसीदास की कौन-सी रचना ऐसी ही है, जो धार्मिक दृष्टि से हिन्दुओं का सर्वाधिक आदरपूर्ण ग्रन्थ होने के साथ-साथ काव्यानन्द की भी अक्षय निधि है।

(क) रामचरितमानस (ख) विनयपत्रिका

(ग) कवितावली (घ) जानकी मंगल

- **स्व-मूल्यांकन (ग)**

प्रिय विद्यार्थियो! निम्नलिखित प्रश्नों के उत्तर सही या गलत चिन्ह द्वारा देकर आप अभी तक प्राप्त ज्ञान का स्व-मूल्यांकन करें। ( )

1. इलियट ने धर्म और साहित्य के पारस्परिक सम्बन्धों का विश्लेषण करते हुए कहा है कि साहित्य में धर्म और नीति का समावेश तो होना चाहिए, किन्तु यह स्वतःस्फूर्त होना चाहिए। ( )

2. काव्य के माध्यम से नीति के उपदेश और धर्म के सिद्धान्तों की व्याख्या करना साहित्य के मूल स्वर का गला घोंटने जैसा है। ( )
3. इलियट चार प्रकार के काव्यों की चर्चा करता है। ( )
4. दूसरे प्रकार का साहित्य भक्तिमूलक साहित्य होता है जिसमें जीवन की समग्रता सिमट कर नहीं आती। ( )
5. तीसरे प्रकार के साहित्य में ऐसी साहित्यिक कृतियां आती हैं, जिनमें काव्य के माध्यम से धर्म का प्रचार किया जाता है। ( )

10.5 सारांश

इलियट की विचारधारा के अनुसार वही काव्य प्रयोजन तथा कविता और नैतिकता उत्तम होगी जिसके माध्यम से धार्मिक जागृति स्वतः स्फरणयुक्त हो।

10.6 कठिन शब्द

10.6 कठिन शब्द

1. अपेक्षा = आशा, उम्मीद।
2. अनुभूति = अनुभव, अहसास।
3. आदर्श = श्रेष्ठतम अवस्था
4. वैशिष्ट्य = विशेषता, श्रेष्ठता
5. प्रधान = मुख्य
6. निर्धारित = जिसका निर्धारण हो चुका हो।
7. सचेत = सजग, सतर्क।
8. वक्तृत्व = बोलने की क्षमता
9. गम्भीर। = गहरा।
10. परिप्रेक्ष्य = देखने अथवा सोचने की दृष्टि विशेष।
11. प्रतिमान = परछाई, प्रति मा।
12. प्रतिष्ठा = मान-मर्याया, सम्मान।
13. उद्देश्य = प्रयोजन, लक्ष्य।
14. पद्धति = प्रविधि, प्रणाली।
15. प्रक्रिया = प्रयास , कोशिश।

10.7 अभ्यासार्थ प्रश्न

1. टी.एस.इलियट के काव्य प्रयोजन पर प्रकाश डालें।

2. टी.एस.इलियट की कविता और नैतिकता का विवेचन कीजिए।

10.8 उत्तर कुंजी

स्व-मूल्यांकन (क)

1.	तीन	2.	स्वयं
3.	सजग	4.	कवि
5.	मानव-इतिहास	6.	श्रोताओं
7.	पात्रों	8.	समपर्ण
9.	उपदेश	10.	नाटक

11.	अचेतावस्था	12.	इलियट
13.	व्यक्तिगत	14.	इलियट

स्व-मूल्यांकन (ख)

1.	दोनों	2.	उपर्युक्त सभी
3.	टी.एस. इलियट	4.	टी.एस. इलियट
5.	दोनों	6.	साहित्य और धर्म
7.	टी.एस. इलियट	8.	दोनों
9.	टी.एस. इलियट	10.	रामचरितमानस

स्व-मूल्यांकन (ग)

1.	सही	2.	सही
3.	गलत	4.	सही
5.	सही		

10.9 पठनीय पुस्तकें

1. पाश्चात्य काव्य शास्त्र- देवेन्द्रनाथ शर्मा, नेशनल पेपरबैक्स, 2023
2. पाश्चात्य साहित्य चिंतन- प्रो. निर्मला जैन, राधाकृष्ण प्रकाशन, 2017
3. उदात्त के विषय में-प्रो. निर्मला जैन, वाणी प्रकाशन, दिल्ली, 2004
4. पाश्चात्य काव्य शास्त्र की परम्परा- सं. डॉ. नगेन्द्र और सावित्री सिन्हा
5. काव्य में उदात्त तत्व- डॉ. नगेन्द्र और नेमिचन्द्र जैन, राजपाल एवं संस, दिल्ली

आई.एस. रिचर्डस-सम्प्रेषण का सिद्धान्त

रूपरेखा

11.1 उद्देश्य एवं अपेक्षित परिणाम
11.2 प्रस्तावना
11.3 आई.एस. रिचर्डस: समीक्षा-सिद्धान्त
स्व-मूल्यांकन (क)
11.4 सम्प्रेषण का सिद्धान्त
स्व-मूल्यांकन (ख)
11.5 कविता और विज्ञान
स्व-मूल्यांकन (ग)
11.6 सारांश
11.7 कठिन शब्द
11.8 अभ्यासार्थ प्रश्न
11.9 उत्तर कुंजी
11.10 पठनीय पुस्तकें

11.1 उद्देश्य एवं अपेक्षित परिणाम

प्रस्तुत आलेख का उद्देश्य आपको

- आई.एस. रिचर्डस के समीक्षा सिद्धान्त से अवगत करवाना।
- सम्प्रेषण के सिद्धांत की जानकारी देना
- आई.एस. रिचर्डस के आलोचक व्यक्तित्व की जानकारी देना।

प्रस्तुत पाठ का विस्तृत अध्ययन करने के पश्चात् आप आई.एस. रिचर्डस के समीक्षा सिद्धान्त, सम्प्रेषण के सिद्धान्त को समझ सकेंगे। इसके साथ ही आई.एस. रिचर्डस के कविता और विज्ञान, संवेगों के संतुलन में काव्य मूल्य मनोवेगों का सामरस्य तथा कविता और नैतिकता को पूर्ण रूप से समझने में सक्षम होंगे।

11.2 प्रस्तावना:

आधुनिक युग के मौलिक चिन्तकों और सिद्धांतकारों में आई. ए. रिचर्डस का महत्वपूर्ण स्थान है। 'नयी समीक्षा' को सैद्धांतिक आधार प्रदान करने वाले आलोचकों

में वे अग्रणी माने जाते हैं। उन्होंने साहित्यिक चिंतन को नवीन आधार प्रदान करते हुए विज्ञान तथा मनोविज्ञान की सहायता से कविता की सार्थकता एवं महत्ता की महत्व-प्रतिष्ठा की है।

11.3 आई. ए. रिचर्ड्स: समीक्षा-सिद्धान्त

नयी समीक्षा के प्रसिद्ध सिद्धांतकार ईवर आर्मस्ट्रांग रिचर्ड्स (26 फरवरी, 1893 से 7 सितम्बर, 1979 तक), कॉलरिज के बाद, एक ऐसे समीक्षक हैं, जिन्होंने आलोचनाशास्त्र को व्यवस्थित रूप देने का प्रयास किया। रिचर्ड्स का रचना-काल पूरी आधी शताब्दी तक फैला है। सी. के. ऑग्डन और जेम्स वुड के साथ सहयोगी-लेखन के रूप में उनकी पहली कृति 'द फाउडेशंस ऑफ एस्थेटिक्स' 1922 ई0 में प्रकाशित हुई और मृत्यु से पांच वर्ष-पूर्व उनकी अन्तिम रचना 'बियोंड' 1974 में। बीच के अंतराल में उन्होंने एक काव्य-संग्रह के अलावा लगभग 12 ग्रंथ-और लिखे। यह बात अलग है कि उनकी ख्याति का आधार मुख्य रूप से तीसरे दशाब्द में रचित कृतियाँ ही रहीं। इनमें भी अधिक महत्त्व और प्रसिद्धि उन्हें 'प्रिंसिपल ऑफ लिटरेरी क्रिटिसिज्म' से मिली। बाद की रचनाओं में 'कॉलरिज ऑन इमेजिनेशन' (1934) विद्वानों के बीच चर्चा के केन्द्र में रही।

इसे विडम्बना ही कहा जाएगा कि उन्हें अपने प्रारंम्भिक लेखन से जो यश और प्रतिष्ठा मिली थी, पिछले दौर के लेखन की असंगतियों से उसकी क्षति ही हुई। इसके बावजूद, नयी समीक्षा में कविता के विश्लेषण की जो पद्धति विकसित हुई, उसके लिए सैद्धांतिक आधार प्रस्तुत करने का श्रेय रिचर्ड्स को ही दिया जाता है।

रिचर्ड्स का युग विज्ञान और भौतिकवादी जीवन-दृष्टि के चरम प्रकर्ष का समय था। ऐसे वातावरण में कविता की उपयोगिता और सार्थकता के विषय में उनकी चिंता स्वाभाविक थी। बहुत-सी बातों के अतिरिक्त रिचर्ड्स ने दो समस्याओं पर मुख्य रूप से विचार किया। इनमें से एक थी- काव्य के मनोवैज्ञानिक प्रभाव की मूल्यपरकता और दूसरी, काव्य-भाषा की प्रकृति की पहचान।

आई. ए. रिचर्ड्स ने कविता की सार्थकता पर विचार करते हुए टॉमस लव पीकॉक के वैज्ञानिक और दार्शनिक पद्धति द्वारा यथार्थ के तर्कपूर्ण और क्रमबद्ध विवेचन को प्रमुखता देते हुए सवाल उठाया था कि 'क्या कवि इस सभ्य समाज में अर्ध-बर्बर नहीं प्रतीत होता'? उन्हें कवि बीते हुए ज़माने का प्राणी नज़र आया। काव्य की उपयोगिता उन्हें नागरिक समाज की आदिम अवस्था में ही दिखायी पड़ी। जो लोग अच्छे काम कर सकते हैं, उन्हें 'लक्ष्यहीन बौद्धिक व्यायाम' करते देखकर उन्होंने खेद प्रकट किया।

रिचर्ड्स ने विचार करते हुए, पीकॉक के मत को उद्धृत करके, उसके विरोध में तर्क देने की आवश्यकता समझी। इससे यही सिद्ध होता है कि विज्ञान के समकक्ष काव्य की उपयोगिता की पड़ताल करना रिचर्ड्स को आवश्यक लगा।

रिचर्ड्स की विशिष्टता इस बात में थी कि उन्होंने काव्य की मूल्यवत्ता और उपयोगिता का केवल गुणानुवाद नहीं किया और न ही उसके पक्ष में भावोद्गारों की अभिव्यक्ति की। उन्होंने वैज्ञानिक आधार पर, वैज्ञानिक पद्धति से, उसकी व्याख्या करने का प्रयास किया। मनोवैज्ञानिक दृष्टि के प्रति रिचर्ड्स के आग्रह का अनुमान इस बात से लगाया जा सकता है कि उन्होंने अपने ग्रंथ 'प्रिंसिपल ऑफ लिटरेरी क्रिटिसिज़्म' में पांच अध्याय (11 से 14) मनोवैज्ञानिक सिद्धान्तों के विश्लेषण को समर्पित किये हैं।

- **स्व-मूल्यांकन (क)**

प्रिय विद्यार्थियो! इस पाठ में अभी तक प्राप्त ज्ञान का मूल्यांकन आप निम्नलिखित रिक्त स्थान भरकर करें।

1. नयी समीक्षा के प्रसिद्ध सिद्धांतकार ईवर आर्मस्ट्रांग रिचर्डस का जन्म -------- को हुआ।
2. ------- के बाद रिचर्डस एक ऐसे समीक्षक हैं, जिन्होंने आलोचनाशास्त्र को व्यस्थित रूप देने का प्रयास किया।
3. सी.के.ऑग्डन और जेम्स बुड के साथ सहयोगी-लेखन के रूप में उनकी पहली कृति ------- 1922 ई. में प्रकाशित हुई।
4. रिचर्डस की अन्तिम रचना -------1971 में प्रकाशित हुई।
5. रिचर्डस को अधिक महत्व और प्रसिद्धि -------- से मिली।
6. रिचर्डस का युग विज्ञान और -----जीवन-दृष्टि के चरम प्रकर्ष का समय था।

11.4 संप्रेषण का सिद्धान्त

रिचर्ड्स का काव्य-सम्बन्धी महत्त्वपूर्ण सिद्धान्त है- 'सम्प्रेषनीयता का सिद्धांत' (Theory of Communication)। रिचर्ड्स की मुख्य चिंता थी- कविता के संप्रेषण की परीक्षा। कविता और पाठक के सम्बन्ध पर विचार करते हुए उन्होंने पाठक पर कविता के संभावित प्रभाव की व्याख्या और उसका विश्लेषण किया। प्रभाव-विश्लेषण के आधार पर उन्होंने कविता का मूल्य-निर्णय भी किया। रिचर्ड्स के अनुसार, किसी भी काव्य की समीक्षा के लिए मूल्य के वैज्ञानिक आधार एवं सम्प्रेषनीयता, दोनों को आधार बनाना चाहिए। 'सम्प्रेषनीयता' शब्द का प्रचार समीक्षा के क्षेत्र में रिचर्ड्स से बहुत पहले हो

चुका था, किन्तु इसका अर्थ स्पष्ट नहीं था। इसके सम्बन्ध में अनेक रहस्यात्मक बातें प्रचलित थीं। कुछ लोग ऐसा समझते थे कि सम्प्रेषनीयता में कवि की अनुभूति पाठक के हृदय में इस प्रकार संक्रमित की जाती है, जैसे एक सिक्का एक जेब से दूसरी जेब में चला जाता है। रिचर्ड्स ने इन धारणाओं का विरोध करते हुए स्पष्ट रूप में प्रतिपादित किया कि सम्प्रेषनीयता कोई अद्भुत या रहस्यमय व्यापार नहीं है, अपितु मन की एक सामान्य क्रिया-मात्र है। उनके शब्दों में "All that occurs is that, under certain conditions, separate minds have closely similar experiences." अर्थात्,"सम्प्रेषनीयता में जो कुछ होता है, वह यह है कि कुछ विशेष परिस्थितियों में विभिन्न मस्तिष्क प्रायः एक-जैसी अनुभूति प्राप्त करते हैं।" यहाँ यह ध्यान देने की बात है कि रिचर्ड्स ने इन विभिन्न अनुभूतियों में आधार की ही एकता मानी है, उन अनुभूतियों का पारस्परिक ऐक्य उसने स्वीकार नहीं किया है। इसका और अधिक स्पष्टिकरण करते हुए उन्होंने लिखा है कि "जब किसी वातावरण-विशेष से एक व्यक्ति का मस्तिष्क प्रभावित होता है तथा दूसरा उस व्यक्ति की क्रिया के प्रभाव से ऐसी अनुभूति प्राप्त करता है कि जो पहले व्यक्ति की अनुभूति के समान होती है तो उसे सम्प्रेषनीयता कहते हैं।" "वस्तुतः किसी अन्य की अनुभूति को अनुभूत करना ही सम्प्रेषनीयता है।"

सम्प्रेषनीयता के आधारभूत तथ्यों की मीमांसा करते हुए रिचर्ड्स महोदय ने इसका श्रेय मुख्यतः कवि की वर्णन-क्षमता एवं श्रोता या पाठक की ग्रहण-शक्ति को दिया है। किन्तु इन दोनों के अतिरिक्त और-भी बहुत-से कारण हैं। "सामान्यतः (विषय का) दीर्घ एवं घनिष्ठ परिचय, व्यापक जानकारी, जीवन की परिस्थितियों एवं अनुभूतियों की समानता आदि के कारण भी सम्प्रेषनीयता सम्भव है। कुछ विशिष्ट एवं जटिल विषयों में सफल सम्प्रेषनीयता पर इस बात का भी गहरा प्रभाव पड़ता है कि उसे कौन से दूसरे विषयों एवं तत्वों के साथ समन्वित करके प्रस्तुत किया गया है।" इस प्रकार रिचर्ड्स के विचार से, विचारात्मक एवं विश्लेष्णात्मक निबन्धों में भावोद्दीप्ति का समन्वय नहीं होना चाहिए, अन्यथा वे अस्पष्ट हो जायेंगे।

कला के लिए सम्प्रेषनीयता अत्यन्त आवश्यक है, किन्तु क्या इसके लिए कलाकार को विशेष प्रक्रिया करना चाहिए? यदि कलाकार स्वयं अपनी कला को प्रेषणीय बनाने का प्रक्रिया करने लगेगा तो इससे सम्भव है कि उसकी रचना में कृत्रिमता आ जाए ; क्योंकि कला में स्वाभाविकता का गुण तभी सम्भव है, जब कलाकार उसमें किसी प्रकार का बाह्य प्रक्रिया न करे। अतः रिचर्ड्स महोदय ने यह माना है कि कला में सम्प्रेषनीयता आवश्यक है, किन्तु कलाकार को इसके लिए विशेष प्रक्रिया नहीं करना चाहिए। सही बात तो यह है कि यदि कलाकार तल्लीनतापूर्वक कला की रचना करता है, तो उसमें

सम्प्रेषनीयता स्वतः आ जायेगी। "कलाकार जितना अधिक सामान्य रूप से कार्य करेगा, अपनी अनुभूतियों के ठीक प्रकार से प्रस्तुतिकरण में वह उतना ही अधिक सफल होगा तथा उतने ही अधिक तद्नुकूल भाव पाठकों के मन में उत्पन्न होंगे।" संप्रेषण-प्रक्रिया की सफलता के लिए रिचर्ड्स कलाकार में कुछ गुणों की उपस्थिति अभीष्ट मानता है, जो निम्न प्रकार के हैं:

1. अनुभव की व्यापकता,
2. पूर्ण एवं स्पष्ट बोध की आवश्यकता,
3. जागरूक निरीक्षण-शक्ति,
4. कलाकार तथा पाठकों के आवेगों और विभावों में तादात्म्य की स्थापना।

रिचर्ड्स की मान्यता है कि सम्प्रेष्णनीयता की प्रक्रिया सच्ची कलात्मक प्रक्रिया है, जिसमें भाषा का विशिष्ट प्रयोग अभीष्ट है; क्योंकि भाषा ऐसे प्रतीकों का समूह है, जो पाठकों के मन में कलाकार की मानसिक अवस्था के अनुरूप अवस्था उत्पन्न कर देती है। भाषा दैनिक जीवन में सामान्य तथ्यों को व्यक्त करती है, किन्तु साहित्य में विशिष्ट प्रयोग से विशेष अर्थ की अभिव्यक्ति होती है। ऑग्डन के सहलेखन में रिचर्ड्स ने 'मीनिंग ऑफ मीनिंग' कृति में भाषा का विस्तृत विवेचन किया है, जिसके आधार पर इस कृति को आधुनिक भाषाशास्त्र का जनक कहा जाता है। इसमें तथा रिचर्ड्स की मुख्य कृति 'प्रिंसिपिल्स ऑफ लिटरेरी क्रिटिसिज्म' में प्रयोग की दृष्टि भाषा को दो वर्गों में रखा गया है: तथ्यात्मक प्रयोग और रागात्मक प्रयोग। वैज्ञानिकों तथा तार्किक दार्शनिकों की भाषा तथ्यात्मक प्रयोग से युक्त होती है, जबकि काव्य की भाषा रागात्मक प्रयोग से युक्त होती है।

भाषा में संकेतात्मक शक्ति होती है, जो कलाकार और पाठक के मध्य अखण्ड मानसिक सम्बन्ध की स्थापना करती है। भाषा की यह शक्ति इसके प्रतीकों में निहित होती है। 'प्रतीक' ऐसे शब्द होते हैं, जिनमें वस्तु-संकेत के साथ-साथ लेखक का भाव-संकेत भी निहित रहता है। प्रयोग की दृष्टि से इन प्रतीक-संकेतों के अनेक स्तर होते हैं। कुछ प्रतीक-संकेत केवल झंकार उत्पन्न कर पाते हैं, तो कुछ वस्तु, भाव आदि को एक ही साथ ध्वनित कर सकते हैं। कलाकार जब इन सब विशेषताओं को वहन करने की सामर्थ्य वाले उचित शब्दों के प्रयोग एवं उनके साहचर्य-विधान पर विशेष ध्यान देता है, तब उसकी कला में सार्थकता आती है।

भाषा का उपयोग मुख्यतः अर्थ को सूचित करने के लिए होता है। रिचर्ड्स ने अपनी प्रसिद्ध पुस्तक 'Practical criticism' में अर्थ के चार भेद किये हैं- (1) वाच्यार्थ (sense). (2) भाव (feeling), (3) वक्ता की वाणीगत चेष्टा (toe) और (4) अभिप्राय

(Intention)। इन चारों की क्रमश:, रिचर्ड्स के दृष्टिकोण से, व्याख्या करते हुए कहा जा सकता है कि सेन्स अर्थात् वाच्यार्थ में किसी वस्तु-विशेष या किसी विधेय को शब्दों के द्वारा सूचित किया जाता है। हम किसी वस्तु की सूचना इसलिए देते हैं कि उसका हमारे किसी-न-किसी भाव से सम्बन्ध होता है। केवल गणित जैसे कुछ विषयों को अपवाद-स्वरूप छोड़कर यह कहा जा सकता है कि भाषा का प्रयोग ही भावों की प्रेरणा से होता है। टोन या लहज़ा के द्वारा हम श्रोता के प्रति दृष्टिकोण व्यक्त करते हैं। किसी से सम्मानपूर्वक बात करते समय हमारा लहज़ा विनम्रतापूर्ण होगा, तो किसी को डाँटते समय वह दूसरे रूप में होगा। रिचर्ड्स के शब्दों में, "The tone of his utterance reflects his awareness of this relation" अर्थात्, उद्गारों का लहज़ा (वक्ता और श्रोता के पारस्परिक) सम्बन्ध का सूचक है। इन तीनों के अतिरिक्त चैथा भेद अभिप्राय (Intention) है। सामान्यतः कोई भी व्यक्ति किसी प्रयोजन से कुछ कहता है, अतः इसका भी भाषा से महत्त्वपूर्ण सम्बन्ध है।क्ति किसी प्रयोजन से कुछ कहता है, अतः इसका भी भाषा से महत्त्वपूर्ण सम्बन्ध है।

भाषा से सामान्यतः उपर्युक्त चारों प्रकार के अर्थ ही सूचित होते हैं, किन्तु विषय एवं परिस्थिति-भेद से इनका अनुपात बदलता रहता है। विज्ञान की पुस्तकों एवं चर्चा में यदि पहले रूप-वाच्यार्थ (Sense) का अधिक प्रयोग होता है, तो काव्य में दूसरे रूप या भाव की अतिशयता होती है। फिर भी ये अर्थ परस्पर सर्वथा-असम्बद्ध नहीं हैं, वे एक दूसरे से जुड़े हुए हैं। "काव्य में भाव (या भावार्थ) की इतनी अधिक महत्ता होती है कि वहाँ वाच्यार्थ या सूच्य तथ्य गौण हो जाता है। वहाँ तथ्य साधन होते हैं, साध्य नहीं। अतः जो लोग केवल तथ्यों अथवा विचारों के आधार पर ही कविता का मूल्याँकन करते हैं, वे काव्य के साथ न्याय नहीं करते।"

- **स्व-मूल्यांकन (ख)**

प्रिय विद्यार्थियो! इस पाठ से आपको रिचर्डस के सम्प्रेषण के सिद्धान्त का जो ज्ञान प्राप्त हुआ है उसका स्व मूल्यांकन आप निम्नलिखित बहुविकल्पीय प्रश्नों द्वारा करें।

बहुविकल्पीय प्रश्न:-

प्र1) रिचर्डस का काव्य-सम्बन्धी महत्वपूर्ण सिद्धान्त है-

क) प्रेषणीयता का सिद्धांत

ख) प्रिंसिपल ऑफ लिटरेरी क्रिटिसिज्म

ग) कॉलरिज ऑन इमेजिनेशन

घ) उपर्युक्त सभी

प्र2) आई.ए. रिचर्डस की मुख्य चिंता क्या थी?

क) कहानी के संप्रेषण की परीक्षा ख) कविता के संप्रेषण की परीक्षा

ग) उपन्यास के संप्रेषण की परीक्षा घ) उपर्युक्त सभी

प्र3) प्रेषणीयता के आधारभूत तथ्यों की मीमांसा करते हुए रिचर्डस महोदय ने इसका श्रेय किसको दिया है?

क) कवि की वर्णन क्षमता ख) श्रोता की ग्रहण शक्ति

ग) पाठक की ग्रहण शक्ति घ) उपर्युक्त सभी

प्र4) सम्प्रेषण-प्रक्रिया की सफलता के लिए रिचर्डस ने कौन-से गुणों की उपस्थिति को अभीष्ट माना है?

क) अनुभव की व्यापकता ख) पूर्ण एवं स्पष्ट बोध की आवश्यकता

ग) जागरुक निरीक्षण-शक्ति घ) उपर्युक्त सभी

प्र5) रिचर्डस ने किसके सहलेखन में 'मीनिंग ऑफ मीनिंग' कृति में भाषा का विस्तृत विवेचन प्रस्तुत किया है?

क) कॉलरिज ख) जेम्स बुड

ग) सीके ऑग्डन घ) प्लेटो

प्र6) रिचर्डस की मुख्य कृति प्रिंसिपिल्स ऑफ लिटरेरी क्रिटिसिज्म' में प्रयोग की दृष्टि भाषा को कितने वर्गों में रखा गया है?

क) दो ख) तीन

ग) चार घ) पांच

प्र7) रिचर्डस ने अपनी प्रसिद्ध पुस्तक प्रैक्टिकल क्रिटिसिज़्म में अर्थ के कितने भेद किये हैं?

क) दो ख) तीन

ग) चार घ) पांच

11.5 कविता और विज्ञान

विज्ञान एवं ललित कलाओं के पारस्परिक सम्बन्धों और भेदों पर काव्यशास्त्र के आरम्भिक काल से आज तक अनेक विद्वानों और आलोचकों ने प्रकाश डाला है। रिचर्ड्स ने भी अपनी पुस्तकों 'Principles of Literary Criticism" में इस प्रश्न पर विचार किया है। उनका मत है कि प्रत्येक वक्तव्य में वस्तु का निर्देश किया जाता है। जब वस्तुएँ सच्ची होती हैं और उनके बीच निर्दिष्ट सम्बन्ध भी सच्चे होते हैं, तो उस वक्तव्य को 'वैज्ञानिक कथन' कहते हैं। उदाहरण के लिए, जब हम किसी कथन में यह निर्देश करते हैं कि ताप से वायु हल्की होकर ऊपर की ओर उठती है, तो हम यहाँ दो सच्ची वस्तुओं

और उनके परस्पर सच्चे सम्बन्ध की ओर इंगित करते हैं। अतः यह कथन वैज्ञानिक माना जाएगा। इसके विपरीत किसी कथन में निर्दिष्ट वस्तुओं का सच्चा और झूठा होना महत्त्वपूर्ण न हो और न उन निर्दिष्ट वस्तुओं के बीच निर्दिष्ट सम्बन्ध ही महत्त्वपूर्ण हो, अपितु वह कथन हमारे भावों (Feelings) और अन्तर्वेगों (Emotions) को जाग्रत करे, तो ऐसे कथन को साहित्यिक कहा जायेगा।

रिचर्ड्स के अनुसार, मानव के मानसिक अनुभवों के दो स्रोत हैं-बाह्य जगत् और शारीरिक अवस्था। विज्ञान का सम्बन्ध बाह्य जगत् से है और साहित्य का शारीरिक अवस्था से। विज्ञान में निर्देशों का वास्तविक आधार होता है। साहित्य के लिए प्रथम तो यह आवश्यक नहीं कि उसके निर्देशों का आधार वास्तविक हो; यदि उनका आधार वास्तविक भी हो, तो भी उनका मूल्य वास्तविकता से नहीं, भावों और अन्तर्वेगों को जाग्रत करने की क्षमता से आंका जायेगा। कला के निर्देश बहुधा अवास्तविक होते हैं। पर चाहे वे वास्तविक हों या अवास्तविक, उनका आन्तरिक सम्बन्ध अंतर्वर्गीय होता है। कलाकार का तर्क भी अंतर्वर्गीय होता है। अन्तर्वेग मन की एक भावात्मक वृत्ति है। भाव कल्पना को जाग्रत करता है। अतः जैसे किसी वैज्ञानिक कृति को समझने के लिए न्यायात्मक बुद्धि की आवश्यकता पड़ती है, उसी प्रकार साहित्यिक कृति को समझने के लिए कल्पनात्मक बुद्धि की आवश्यकता पड़ती है। जिस भाव से आन्दोलित हो कवि ने किसी विशिष्ट स्थिति का चित्र अंकित किया है, उसे समझने के लिए हमें कल्पना का आश्रय लेना पड़ता है।

रिचर्ड्स का भाषायी अध्ययन भी उनके साहित्य और विज्ञान के अन्तर पर प्रकाश डालता है। रिचर्ड्स की भाषा सम्बंधी मान्यता का निष्कर्ष था कि विज्ञान में भाषा का तथ्यपरक उपयोग होता है और कविता में भावपरक। विज्ञान में ऐसे वक्तव्य होते हैं, जिनका सत्यापन किया जा सकता है। कविता में छद्म वक्तव्य होते हैं, जो न सत्य होते हैं, न असत्य। इन वक्तव्यों का मूल्य इनकी सत्यता में नहीं, बल्कि भावोद्रेक-क्षमता और भावों के पारितोष में होता है। इस मान्यता के अनुसार, कविता में विचारों का स्थान गौण हो जाता है और कवि के जीवन-दर्शन अथवा उसकी आस्था के साथ सहमत या असहमत होने का प्रश्न प्रासंगिक।

रिचर्ड्स के इस सिद्धांत का व्यापक रूप से खंडन किया गया। इसीलिए आगे चलकर उन्होंने 'द फिलोसोफी ऑफ रेटरिक' में अपनी मान्यता में संशोधन किया और कविता की भाषा में भावात्मकता के साथ विचारात्मकता को भी स्थान दिया। यहाँ तक कि वे कविता की ग्राह्यता के लिए संवेगों पर विवेक के नियंत्रण को अनिवार्य मानने लगे।

रिचर्ड्स के शिष्य विलियम एंपसन ने उनके विचारों में आने वाले परिवर्तन को रेखांकित करते हुए यह भी संकेत किया है कि रिचर्ड्स ने आगे चलकर अर्थ सम्बंधी संदर्भ-सिद्धांत (Context Theory of meaning) विकसित किया, जिससे कविता की भाषा में लाक्षणिकता और अनेकार्थता (metaphor and ambiguity) को समुचित महत्त्व प्राप्त हुआ। वे पहले कविता और विज्ञान की भाषा के शब्द-समूह में अंतर करके चलते थे। बाद में वे एक ही शब्द के सन्दर्भ-भेद से वैज्ञानिक और कलात्मक, दोनों प्रकार के अर्थों की संभावना को स्वीकार करने लगे। संक्षेप में, "रिचर्ड्स को इस बात का श्रेय देना ही होगा कि उन्होंने विज्ञान के युग में साहित्यालोचन को वैज्ञानिक निश्चिंतता और वस्तुनिष्ठता (Scientific acuracy and objectivity) प्रदान करने की दिशा में पहल की। साथ ही पाठक पर पड़ने वाले प्रभाव और प्रतिक्रिया को कमोबेश नापने का एक पैमाना रिचर्ड्स करने की कोशिश भी की।

- **स्व-मूल्यांकन (ग)**

प्रिय विद्यार्थियो! निम्नलिखित प्रश्नों के उत्तर सही या गलत चिन्ह द्वारा देकर आप अभी तक प्राप्त ज्ञान का स्व-मूल्यांकन करें।

1. रिचर्डस के अनुसार, मानव के मानसिक अनुभवों के दो स्त्रोत हैं- बाह्य जगत और शारीरिक अवस्था। ( )
2. विज्ञान का सम्बन्ध बाह्य जगत से है और साहित्य का शारीरिक अवस्था से। ( )
3. अन्तर्वेग मन की एक भावात्मक वृत्ति नहीं है। ( )
4. रिचर्डस का भाषायी अध्ययन उनके साहित्य और विज्ञान के अन्तर पर प्रकाश डालता है। ( )
5. रिचर्डस के शिष्य विलियन एंपसन ने उनके विचारों में आने वाले परिवर्तन को रेखांकित किया। ( )
6. रिचर्डस ने विज्ञान के युग में साहित्यालोचन को वैज्ञानिक निश्चिंतता और वस्तुनिष्ठता (Scientific accuracy and objectivity) प्रदान करने की दिशा में पहल की।( )

11.6 सारांश:-

संक्षेप में रिचर्डस को इस बात का श्रेय देना ही होगा कि उन्होंने विज्ञान के युग में साहित्यलोचन को वैज्ञानिक निश्चितता और वस्तुनिष्ठता प्रदान करने की दिशा में पहल की। साथ ही पाठ पर पड़ने वाले प्रभाव और प्रतिक्रिया को कमोवेश नापने का एक पैमाना प्रस्तावित करने की कोशिश भी की।

11.7 कठिन शब्द

1. प्रेषण = भेजना, भेजने योग्य।
2. अभीष्ट = चाहा हुआ, वांछित।
3. सहलेखन = = साथ में लिखना या सहयोग करके लिखना
4. सहचर्य = सहचारिता, संग-साथ
5. विधेय = प्राप्त करने योग्य, देने योग्य।
6. निर्दिष्ट = जिसका निर्देश हुआ हो, कहा हुआ।
7. अवरुद्ध = रूपका हुआ, गुप्त, छिपा।
8. उदवेगों =तेज गति, तीव्र वेग
9. अभिवृद्धि = विशेष वृद्धि, सफलता

11.8 अभ्यासार्थ प्रश्न:

प्र1. आई. ए. रिचर्ड्स के समीक्षा सिद्धान्त पर प्रकाश डालिए ।

प्र2. रिचर्ड्स के सम्प्रेषनीयता के सिद्धांत के महत्व पर विचार कीजिए ।

प्र3. निम्नलिखित पर टिप्पणी लिखिए ।

क. कविता और विज्ञान

ख. कविता और नैतिकता

11.9 उत्तर कुंजी

स्व-मूल्यांकन (क)

1. 26 जनवरी 1893
2. कॉलरिज
3. द फाउंडेशन ऑफ एस्पेटिक्स
4. वियोंड
5. प्रिंसिपल ऑफ लिटरेरी क्रिटिसिज्म
6. भौतिकवादी

स्व-मूल्यांकन (ख)

1. संप्रेषणीयता का सिद्धांत
2. कविता के संप्रेषण की परीक्षा
3. उपर्युक्त सभी
4. उपर्युक्त सभी
5. सी.के. ऑग्डन

6. दो

7. चार

स्व-मूल्यांकन (ग)

1.	सही	2.	सही
3.	गलत	4.	सही
5.	सही	6.	सही

11.10 पठनीय पुस्तकें

1. पाश्चात्य काव्य शास्त्र- देवेन्द्रनाथ शर्मा, नेशनल पेपरबैक्स, 2023
2. पाश्चात्य साहित्य चिंतन- प्रो. निर्मला जैन, राधाकृष्ण प्रकाशन, 2017
3. उदात्त के विषय में-प्रो. निर्मला जैन, वाणी प्रकाशन, दिल्ली, 2004
4. पाश्चात्य काव्य शास्त्र की परम्परा- सं. डॉ. नगेन्द्र और सावित्री सिन्हा
5. काव्य में उदात्त तत्व- डॉ. नगेन्द्र और नेमिचन्द्र जैन, राजपाल एवं संस, दिल्ली

आई.एस. रिचर्डस- संवेगों का सतुलन

रूपरेखा

12.1 उद्देश्य एवं अपेक्षित परिणाम
12.2 प्रस्तावना
12.3 काव्य-मूल्य मनोवेगों का सामरस्य
12.4 कविता और नैतिकता/मूल्य सिद्धान्त
- स्व-मूल्यांकन (क)

रिक्त स्थान
- स्व-मूल्यांकन (ख)

सही या गलत
- स्व-मूल्यांकन (ग)

बहुविकल्पीय प्रश्न

12.5 सारांश
12.6 कठिन शब्द
12.7 अभ्यासार्थ प्रश्न
12.8 उत्तर कुंजी
12.9 पठनीय पुस्तकें

12.1 उद्देश्य एवं अपेक्षित परिणाम

प्रिय विद्यार्थियो प्रस्तुत आलेख का उद्देश्य आपको आई.एस. रिचर्डस के संवेगों के संतुलन से परिचित करवाते हुए काव्य-मूल्य मनोवेगों के सामरस्य तथा कविता और नैतिकता/मूल्य सिद्धान्त से अवगत करवाना है।

प्रस्तुत पाठ का विस्तृत अध्ययन करने के पश्चात् आप रिचर्डस के काव्य-मूल्य के सामरस्य को समझने के साथ ही कविता और नैतिकता/मूल्य सिद्धान्त को पूर्ण रूप से समझने में सक्षम होंगे।

12.2 प्रस्तावना

प्रिय विद्यार्थियो इससे पूर्व अध्याय में आपने आई.एस. रिचर्डस संप्रेषण के सिद्धान्त से परिचित होते हुए कविता और विज्ञान विषय की जानकारी प्राप्त की।

प्रस्तुत अध्याय में आप आई.एस. रिचर्डस के संवेगों के संतुलन में काव्य-मूल्य मनोवेगों के सामरस्य तथा कविता और नैतिकता को पूर्ण रूप से समझने में सहायक होंगे।

12.3 संवेगों का संतुलन

12.3.1 काव्य-मूल्य मनोवेगों का सामरस्य

रिचर्डस ने संवेगों की व्यवस्था या समन्वय की जो बात की है, वह सहृदय-सापेक्ष है। विषयीगत प्रति मान की सीमाओं के प्रति वह सजग है। इसलिए उसने भाषा का विस्तृत विश्लेषण किया है तथा काव्यभाषा की समीक्षा में वस्तुगत गुणों के अन्तर्गत प्रतीक, बिंब, लय आदि का विवेचन किया है, जिसको पेटर के शैलीगत विवेचन की प्रवृत्ति के साथ जोड़ा जा सकता है। पेटर के समान रिचर्डस काव्यभाषा को मात्र-केन्द्र नहीं बनाता। उसने कल्पना के कार्यों पर भी वैज्ञानिक रीति से विचार किया है और उसे, कॉलरिज के समान, दर्शन के आधार पर प्रतिष्ठित न करके व्यावहारिकता के स्तर पर रखकर देखा है।

रिचर्डस ने अपने काव्यमूल्य के सिद्धांत के द्वारा उन्नीसवीं शती के आरंभ में व्यक्त किए गए टॉमस लव पीकॉक के इस मत का खंडन किया है कि बढ़ती हुई बौद्धिकता के युग में कविता के लिए कोई स्थान नहीं रहा। शैले ने 'दि डिफेंस ऑफ पोएट्री' में इस मत का खंडन किया था और आर्नल्ड ने कविता की सांस्कृतिक उपयोगिता के आधार पर कविता के व्यापक महत्त्व को स्थापित किया था, लेकिन रिचर्डस ने मनोविज्ञान के सहारे काव्य के स्वरूप एवं कार्य की व्याख्या करते हुए उसे वैज्ञानिक धरातल पर उपयोगी सिद्ध करने का प्रयास किया।

रिचर्डस ने मानव के संपूर्ण मनोवेगों को दो प्रमुख वर्गों में रखा- एक, आसक्तिमूलक मनोवेग (एप्रेटैंसीज़) और दूसरे विरक्तिमूलक मनोवेग। प्रत्येक व्यक्ति में दोनों प्रकार के मनोवेग होते हैं तथा जीवन के अनुभवों में, वस्तुतः, इन्हीं मनोवेगों का संचरण होता है। सरल अनुभवों में कम वृत्तियों का योग रहता है तथा जटिल अनुभवों में अधिक वृत्तियां सक्रिय होती हैं। सामान्य जीवन में प्रायः अनुभव सरल होते हैं तथा ये वृत्तियां सक्रिय होती हैं। असामान्य जीवन में प्रायः अनुभव जटिल होते हैं तथा ये वृत्तियां 'अव्यवस्थित' और 'अस्तव्यस्त' रहती हैं। मगर कवि के अनुभव में इन वृत्तियों की व्यवस्था होती है तथा कविता से उत्पन्न सहृदय का अनुभव भी इन वृत्तियों की व्यवस्थित अवस्था का नाम है। कविता से उत्पन्न मनोवेगों की इस व्यवस्था के लिए रिचर्ड्स ने पहले तो 'सिनिस्थीसिस' शब्द का प्रयोग किया, बाद में 'सिंथीसिस' का भी प्रयोग किया है। 'विरोधी मनोवेगों का संतुलन या समन्विति' यही काव्य का चरम मूल्य तथा काव्य के महत्त्व का आधार है।

आचार्य रामचंद्र शुक्ल ने भी सभी भावों का वर्गीकरण करते हुए उन्हें दो वर्गों में रखा है- दुःखमूलक भाव और सुखमूलक भाव। दोनों प्रकार के भाव काव्य का विषय बनते हैं तथा अपनी-अपनी विशेषताओं के अनुरूप सहृदय को प्रभावित करते हैं। जिस प्रकार आचार्य शुक्ल ने कविता के प्रभाव से भावों के व्यायाम और परिष्कार की बात की है, उसी प्रकार रिचर्ड्स भी यह मानता है कि काव्य के अध्ययन से सहृदय के राग-तत्त्व का परिमार्जन होता है।

मनोवेगों का संतुलन या सामरस्य तो जीवन में भी सिद्ध होता है, मगर काव्य के द्वारा जो सामरस्य पैदा होता है, वह अधिक जटिल एवं मूल्यवान होता है। इसकी एक विशेषता यह भी होती है कि इसमें यद्यपि विरोधी मनोवेगों में संतुलन की अवस्था पैदा होती है, मगर यह अवस्था ऐसी होती है जो कम-से-कम मनोवेगों को अवरुद्ध या कुंठित करती है। संतुलन की इस स्थिति का स्पष्टिकरण करते हुए रिचर्ड्स इस अवस्था को अनिर्णय की स्थिति से भिन्न रूप में प्रतिष्ठित करता है। अनिर्णय की स्थिति में दो विरोधी मनोवेग या विरोधी मनोवेगों के वर्ग सक्रिय रहते हैं, जिसका परिणाम यह होता है कि व्यक्ति कोई भी पथ निर्धारित नहीं कर सकता। यद्यपि अनिर्णय की अवस्था में भी विरोधी मनोवेगों का एक प्रकार का संतुलन रहता है, मगर वह काव्यजन्य संतुलन से भिन्न है। इसी प्रकार संतुलन की यह स्थिति अत्यधिक हर्ष और विषाद की अवस्था से भी भिन्न है-जहां चेतना किसी एक वर्ग के मनोवेगों से आविष्ट होती है।

मनोवेगों का यह संतुलन इस रूप में निष्प्रयोजन होता है कि वह कर्म में प्रेरित नहीं करता। इस प्रकार यहां रिचर्ड्स का निष्प्रयोजन ता से तात्पर्य है-कर्म में लीन होने की प्रक्रिया का अभाव। यद्यपि यह कहा गया है कि रिचर्ड्स द्वारा निष्प्रयोजनता का यह उल्लेख कांट के 'निष्प्रयोजन आनंद' का स्मरण कराता है, मगर दोनों में विवेचन के स्तर पर अंतर हैं। कांट का विवेचन दर्शन पर आश्रित है, जबकि रिचर्ड्स के विवेचन का आधार मनोविज्ञान है। उसने मनोवेगों के संतुलन की अवस्था की तुलना उस खिलाड़ी से की है, जो खेल में भाग लेने के लिए सन्नद्ध है। खिलाड़ी की सन्नद्धता से तुलना का अभिप्राय यह है कि मानसिक संतुलन की यह स्थिति कर्म से विच्छिन्न नहीं है जब उसमें कर्म के संस्कार विद्यमान रहते हैं, कर्म के प्रति आसक्ति होती है; मगर कर्म में प्रवृत्ति नहीं होती।

यहां यह सवाल पैदा होता है कि जब सभी सफल कविताओं के द्वारा मनोवेगों का संतुलन निष्पन्न होता है, तो क्या सभी सफल कविताएं समान रूप से श्रेष्ठ हैं या उन सबमें मनोवेगों के संतुलन की स्थिति समान होती है? इसका उत्तर यह दिया गया है कि मनोवेगों के संतुलन की अवस्था में अंतर होता है। रिचर्ड्स के अनुसार, मनोवेगों

के संतुलन के दो रूप हैं- पहला, मनोवेगों के समाहार के द्वारा (बाई इंक्लूशन)- जहाँ अनेक मनोवेगों का समाहार या समावेश होता है। दूसरा, मनोवेगों के बहिष्कार के द्वारा (बाई एक्सलूशन)-जहां कुछ सीमित मनोवेगों को स्वीकार किया जाता है तथा अधिकांश मनोवेगों का बहिष्कार या वर्जन किया जाता है। उदाहरण के लिए, प्रसाद के गीत 'बीती विभावरी जाग री', में रिचर्ड्स के अनुसार, बहिष्कार द्वारा मनोवेगों का संतुलन है और 'प्रक्रियालय की छाया में' समाहार के द्वारा संतुलन है।

मनोवेगों के संतुलन के बारे में रिचर्ड्स ने यह भी स्वीकार किया है कि इसकी सूक्ष्म एवं जटिल क्रिया के सभी पक्षों को पूरी तरह समझ पाना सम्भव नहीं है। कारण यह है कि मनोविज्ञान एवं मनोविश्लेषण के विकास के बावजूद मन की विविध क्रियाओं की, वृत्तियों एवं मनोवेगों के उदय, संघर्ष और समन्विति की पूर्ण, वैज्ञानिक एवं वस्तुपरक व्याख्या संभव नहीं है, क्योंकि अध्ययन के विषयीपरक क्षेत्र के अध्ययन की सीमाएं स्पष्ट हैं।

उपर्युक्त विवेचन से यह स्पष्ट है कि रिचर्ड्स की आलोचना का केंद्र, रूमानी आलोचकों के अनुरूप ही, अंतर्मन है, सहृदय या विषयी है। दोनों में अंतर यह है कि रूमानी आलोचक भाव, आवेग आदि शब्दों का प्रयोग तो करते हैं, मगर इससे आगे बढ़कर भाव या आवेग के विश्लेषण का प्रयास नहीं करते। रिचर्ड्स ने मनोविज्ञान की सहायता से भाव की स्थिति से आगे बढ़कर मनोवेगों के स्तर पर सहृदय के काव्यानुभव की समीक्षा की है।

12.4 कविता और नैतिकता/मूल्य सिद्धान्त

किसी भी वस्तु का मूल्याँकन करते समय, हमारे मन में पहले से ही, मूल्य के सम्बन्ध में एक निश्चित अवधारणा होती है, या यों कहिए कि हम किसी पूर्व-निश्चित मानदंड के आधार पर ही वस्तु का मूल्य निर्धारित करते हैं। हम किसी वस्तु को अच्छी कह देते हैं तो किसी को बुरी। प्रश्न है कि इस 'अच्छे होने' या 'बुरे होने' का मूलाधार क्या है? रिचर्ड्स ने इसी समस्या को उठाते हुए बताया है कि प्रायः लोग नैतिक दृष्टि से ही अच्छे-बुरे का निर्णय कर डालते हैं, किन्तु स्वयं नैतिक दृष्टि का मूलाधार क्या है? इस पर किसी ने स्पष्ट रूप में विचार नहीं किया। अतः सबसे पहले 'अच्छे-बुरे' की अवधारणा का, मनोविज्ञान के आधार पर, सामान्य रूप में विश्लेषण किया जाना चाहिए।

डॉ रिचर्ड्स के विचार से हमारी मूल्याँकन सम्बन्धी धारणाओं का सम्बन्ध मानसिक उद्वेगों से है। जो वस्तु हमारे उद्वेगों को संतुष्ट करती है, उसी को सामान्यतः मूल्यवान कहा जाता है। ये उद्वेग भी दो प्रकार के होते हैं- (1) प्रवृत्तिमूलक और (2) निवृत्तिमूलक। उदाहरण के लिए, प्रथम वर्ग में आकांक्षाएँ आती हैं तो दूसरे वर्ग में घृणा,

निर्वेद आदि को ले सकते हैं। इन उद्‌वेगों में परस्पर-संघर्ष भी हो सकता है। सम्भव है कि किसी एक उद्‌वेग की तुष्टि से दूसरे उद्‌वेग को ठेस पहुँचे। यदि हम अपना कीमती पैन किसी को दान कर दें तो इससे हमारी उदारता की भावना तो तुष्ट होगी, किन्तु साथ-ही हमारी अधिकार-भावना को ठेस भी लग सकती है। ऐसी स्थिति में हमारा प्रयास यह होता है कि हम अपने उद्‌वेगों को इस प्रकार शांत करें कि दूसरे उद्‌वेगों से उनका विरोध न हो। इस लक्ष्य की पूर्ति तभी हो सकती है, जब हम प्रमुख उद्‌वेगों को अधिक महत्त्व देते हुए गौण उद्‌वेगों की उपेक्षा करें। प्रश्न है कि प्रमुख उद्‌वेग कौन से हैं और क्यों? जिस उद्‌वेग की संतुष्टि करने पर अधिकाधिक उद्‌वेग तुष्ट होते हों तथा कम-से-कम उद्‌वेगों का विरोध होता हो, वही प्रमुख उद्‌वेग हैं। इन्हीं को अर्थशास्त्रियों ने मूलभूत आवश्यकताओं का नाम दिया है।

प्रेरणाओं की संतुष्टि में न-केवल व्यक्ति की दूसरी प्रवृत्तियाँ, अपितु अन्य व्यक्तियों की प्रेरणाएँ भी बाधक बन सकती हैं। इससे व्यक्तियों में विरोध एवं संघर्ष का आरम्भ होता है। इसी विरोध एवं संघर्ष से बचने के लिए समाज में ऐसे नीति-नियमों का विकास हुआ है, जिनसे बिना विरोध के ही अधिक-से-अधिक व्यक्तियों की संतुष्टि हो सके या उनकी आवश्यकताएँ पूरी हो सकें। अस्तु, जो नियम समाज के अधिकतर व्यक्तियों को, बिना किसी पारस्परिक विरोध के, उनकी प्रमुख प्रेरणाओं को तुष्ट करने का विधान करता है, वह सबसे अच्छा नियम है-उसी को हम नैतिक नियम कहते हैं। संक्षेप में, 'नैतिक' या 'अच्छा' या 'मूल्यवान्' का अर्थ है- जो हमारी प्रेरणाओं की तुष्टि में सर्वाधिक सहायक हो। रिचर्ड्स के शब्दों में, ''कोई भी वस्तु, जो किसी एक इच्छा को इस प्रकार शांत करती है कि उससे उसके समान या अधिक महत्त्वपूर्ण इच्छा का'' अवरोध नहीं होता, मूल्यवान होता है या, दूसरे शब्दों में, किसी इच्छा को यदि तुष्ट नहीं करने दिया जाता, तो उसका केवल यही आधार हो सकता है कि वैसा करने से उससे भी अधिक-महत्त्वपूर्ण इच्छाएँ कुण्ठित हो जाएंगी। इसी प्रकार व्यक्ति या जाति के द्‌वारा अनुमोदित (इच्छापूर्ति की) प्राथमिकता पर आधारित सामान्य योजना की ही अभिव्यक्ति नैतिकता या नियमों के रूप में होती है।''

इसी सिद्‌धान्त को डॉ रिचर्ड्स साहित्य पर भी लागू करते हैं। किन्तु, इसका यह तात्पर्य नहीं है कि वे सीधे नैतिकता के आधार पर साहित्य का मूल्यांकन करते हैं। उनके विचार से, समाज और धर्म के सभी नैतिक नियमों, प्रक्रियाओं, अंधविश्वासों आदि के पीछे मूलतः इच्छाओं की तुष्टि का लक्ष्य होता है। किन्तु इसका यह तात्पर्य नहीं है कि हमें सभी नैतिक नियमों, प्रक्रियाओं आदि को सर्वत्र महत्त्वपूर्ण समझना चाहिए। यद्यपि प्रारम्भ में इनका विकास समाज की किसी अवस्था एवं परिस्थिति की आवश्यकता के

अनुसार होता है, किन्तु समय के साथ-साथ वे परिस्थितियाँ बदल जाती हैं। ऐसी स्थिति में उन नियमों एवं प्रक्रियाओं को भी बदल जाना चाहिए, पर वास्तव में ऐसा नहीं होता। परिस्थितियाँ जिस तेज़ी से बदलती है, उस तेज़ी से हमारे नैतिक आदर्श एवं नियम नहीं बदलते। परिणाम यह होता है कि हम युग से पिछड़ जाते हैं; हमारी आन्तरिक एवं बाह्य व्यवस्था में व्याघात तथा हमारे जीवन में संतोष उत्पन्न होता है।

समाज को अव्यवस्था एवं संतोष की इस प्रचण्ड आग से बचाने के लिए परम्परागत आदर्शों एवं मान्यताओं में संशोधन तथा परिवर्तन की गहरी आवश्यकता का अनुभव होता है। यह परिवर्तन कैसे सम्भव है? इसका उत्तर है- "अन्य (महान्) व्यक्तियों के मस्तिष्क (या विचारों) के प्रभाव से।" कला और साहित्य के द्वारा ऐसे प्रभाव उत्पन्न किये जाते हैं, जिनसे हम अव्यवस्था से व्यवस्था की ओर अग्रसर होते हैं। इस प्रकार अप्रत्यक्ष रूप में साहित्य समाज की मान्यताओं के संशोधन में योग देता है। उनके शब्दों में, "कलाकार का काम तो उन अनुभूतियों को अंकित कर देना एवं चिरस्थायी बना देना होता है, जिन्हें वह सबसे अधिक मूल्यवान समझता है। कलाकार वह बिन्दु है, जहां मन का विकास सुव्यक्त हो उठता है। उसकी अनुभूतियों में........कम-से-कम उन अनुभूतियों में, जो उसकी कृति को मूल्यवान बनाती हैं, ऐसे आवेगों का सामंजस्य लक्षित होता है जो अधिकतर लोगों के मन में अस्त-व्यस्त, परस्पर-अन्तर्भूत तथा द्वन्द्वरत हुआ करते हैं। जो कुछ अधिकतर लोगों के मन में अव्यवस्थित रूप में विद्यमान होता है, साहित्यकार की कृति उसी को व्यवस्था देती है।"

'कविता कविता के लिए' सिद्धान्त के समर्थक ब्रैडले की युक्तियों का खण्डन करते हुए भी रिचर्ड्स ने कला और नीति का परस्पर-सम्बन्ध स्वीकार किया है। उनका दृढ़ मत है कि सत्कला की मूलभूत शर्तें पूरी करने के उपरान्त कला को मानवसुख की अभिवृद्धि में निरत होना चाहिए, पीड़ितों का उद्धार करना चाहिए तथा पारस्परिक सहानुभूति के विस्तार में संलग्न होना चाहिए।

ब्रैडले के अनुसार, सौन्दर्यानुभूति विशिष्ट, स्वतःपूर्ण और अपने-आप में साध्य होती है, अतः उसके मूल्यांकन के लिए अन्य परोक्ष मूल्य अनावश्यक और घातक हैं। संस्कृति, धर्म, शिक्षा, भाव-मार्दव आदि का कला से सीधा सम्बंध है। अन्यथा काव्य अर्थहीन शब्द-मात्र रह जाएगा।

ब्रैडले का मत है कि कल्पनापरक अनुभूति की परख उसके भीतर से ही हो सकती है। रिचर्ड्स इसका विरोध करते हुए कहते हैं कि उसकी परख भीतर से नहीं होती, उसे परखने के लिए स्मृति का आधार लेना पड़ता है। हमें यह ध्यान रखना पड़ता है कि मानव-जीवन की महान् संघटना में उसका क्या स्थान है? उसी स्थान के आधार पर हम उसका मूल्य आंकेंगे।

ब्रैडले की तीसरी स्थापना यह थी कि सृजन-प्रक्रिया में कवि को तथा अनुभव-प्रक्रिया में पाठक को परोक्ष साक्ष्यों को महत्त्व नहीं देना चाहिए, क्योंकि ऐसा करने से काव्य-मूल्य का क्षय होता है। रिचर्ड्स के अनुसार, यह बात अंशतः सत्य है क्योंकि सब-कुछ इस बात पर निर्भर करेगा कि वे परोक्ष साक्ष्य क्या हैं और कविता किस प्रकार की है? कुछ काव्य-प्रकारों में परोक्ष मूल्यों के घुस आने से काव्य का मूल्य कम हो जाएगा, पर कुछ में काव्य का मूल्य परोक्ष साक्ष्यों पर निर्भर करेगा।

ब्रैडले ने लिखा है, ''काव्य की प्रकृति यह नहीं कि वह वस्तुजगत् का अंग अथवा प्रति रूप हो, उसकी निजता इस बात में है कि वह एक स्वतंत्र, स्वतःपूर्ण, निरपेक्ष एवं स्वायत्ता जगत् हो।'' उनके अनुसार, कविता की प्रकृति को आत्मसात् करने के लिए हमें उसी जगत् में प्रवेश करना होगा, उसी के नियम मानने होंगे और इस भौतिक जगत् को कुछ समय के लिए भूल जाना होगा। इस प्रकार ब्रैडले कविता और जीवन में विरोध मानता है। पर रिचर्ड्स के अनुसार', वस्तुतः, ब्रैडले का मत ठीक नहीं है। काव्य-जगत् की शेष जगत् से पृथक् सत्ता हो ही नहीं सकती। उसका आनन्द लोकोत्तर कहलाते हुए भी लोक से असम्बद्ध नहीं होता। काव्यानुभूति जगत् के माध्यम से ही उपलब्ध होती है और वह जगत् की अनुभूतियों से एकदम कटी हुई नहीं होती। अन्तर केवल इतना है कि काव्य के अनुभव सीमित अनुभव-खण्ड होते हैं तथा साधारण अनुभवों की अपेक्षा वे अधिक भव्य और सुकुमार होते हैं। वे प्रेषणीय भी होते हैं, क्योंकि थोड़े-बहुत भेद के रहते भी, वे अनेक मानसों के अनुभव हो सकते हैं।

- **स्व-मूल्यांकन (क)**

प्रिय विद्यार्थियो! इस पाठ में अभी तक प्राप्त ज्ञान का मूल्यांकन आप निम्नलिखित स्थान भरकर करें।

रिक्त स्थान

1. रिचर्डस ने संवेगों की व्यवस्था या समन्वय की जो बात की है, वह ------ सापेक्ष है।
2. काव्यभाषा की समीक्षा में वस्तुगत गुणों के अन्तर्गत प्रतीक, बिंब, ------ आदि का विवेचन किया है।
3. ------ के समान रिचर्डस काव्यभाषा को मात्र-केंद्र नहीं बनाता।
4. रिचर्डस ने मानव के संपूर्ण मनोवेगों को दो प्रमुख वर्गों में रखा- एक आसक्तिमूलक मनोवेग और दूसरे --------- (एवर्शस)।
5. कविता से उत्पन्न मनोवेगों की इस व्यवस्था के लिए रिचर्डस ने पहले तो ------ शब्द का प्रयोग किया बाद में ------ का भी प्रयोग किया है।

6. आचार्य रामचंद्र शुक्ल ने भी सभी भावों का वर्गीकरण करते हुए उन्हें दो वर्गों में रखा है- दुःखमूलक भाव और ------- भाव।
7. ------ ने कल्पना के कार्यों पर भी वैज्ञानिक रीति से विचार किया है और उसे कॉलरिज समान, दर्शन के आधार पर प्रतिष्ठित न करके व्यावहारिक के स्तर पर स्पष्ट देखा है।
8. रिचर्डस ने अपने ------- के सिद्धांत के द्वारा उन्नीसवीं शती के आरंभ में व्यक्त किए गए टॉम लव पीकॉक के इस मत का खंडन है कि बढ़ती हुई बौद्धिकता के युग में कविता के लिए कोई स्थान नहीं रहा।
9. सरल अनुभवों में कम वृत्तियों का योग रहता है तथा जटिल अनुभवों में अधिक वृत्तियाँ ----- होती हैं।
10. सामान्य जीवन में प्रायः अनुभव ------ होते हैं, तथा ये वृत्तियां सक्रिय होती हैं।
11. असामान्य जीवन में प्रायः अनुभव जटिल होते हैं तथा ये वृत्तियां 'अव्यवस्थित' और ----- रहती है।
12. विरोधी मनोवेगों का संतुलन या ----- काव्य का चरम मूल्य तथा काव्य के महत्व का आधार है।

- **स्व-मूल्यांकन (ख)**

सही या गलत

प्रिय विद्यार्थियो! निम्नलिखित प्रश्नों के उत्तर सही या गलत चिन्ह द्वारा देकर आप अभी तक प्राप्त ज्ञान का स्व-मूल्यांकन करें।

1. जिस प्रकार आचार्य शुक्ल ने कविता के प्रभाव से भावों के व्यायाम और परिष्कार की बात की है उसी प्रकार रिचर्डस भी यह मानता है कि काव्य के अध्ययन से सहृदय के राग-तत्व का परिमार्जन होता है। ( )
2. मनोवेगों का संतुलन या सामरस्य तो जीवन में भी सिद्ध होता है, मगर काव्य के द्वारा जो सामरस्य पैदा होता है, वह सरल एवं मूल्यज्ञान नहीं होता है। ( )
3. अनिर्णय की स्थिति में दो विरोधी मनोवेग या विरोधी मनोवेशों के वर्ग सक्रिय रहते हैं, जिसका परिणाम यह होता है कि व्यक्ति कोई भी पथ निर्धारित नहीं कर सकता। ( )
4. रिचर्डस का निष्प्रयोजनता से तात्पर्य है- कर्म में लीन होने की प्रक्रिया का अभाव। ( )

5. कांट का विवेचन दर्शन पर आश्रित है, जबकि रिचर्डस के विवेचन का आधार मनोविज्ञान है। ( )
6. रिचर्डस के अनुसार मनोवेगों के संतुलन के दो रूप हैं- पहला, मनोवेगों के समाहार के द्वारा (वाई इंक्लूशन) यहाँ अनेक मनोवेगों का समाहार या समावेश होता है। ( )
7. मनोवेगों के संतुलन के बारे में रिचर्डस ने यह भी स्वीकार किया है कि इसकी सूक्ष्म एंव जटिल क्रिया के सभी पक्षों को पूरी तरह समझ पाना संभव नहीं है। ( )
8. स्पष्ट है कि रिचर्डस की आलोचना का केंद्र, रुमानी आलोचकों के अनुरूप ही अंतर्मन है, सहृदय या विषयी है। ( )
9. रुमानी आलोचक भाव, आवेग आदि शब्दों का प्रयोग तो करते है।, मगर इससे आगे बढ़कर भाव या आवेग के विश्लेषण का प्रयास नहीं करते। ( )
10. रिचर्डस ने मनोविज्ञान की सहायता से भाव की स्थिति से आगे बढ़कर मनोवेगों के स्तर पर सहृदय के काव्यानुभव की समीक्षा की है। ( )

- **स्व-मूल्यांकन (ग)**

प्रिय विद्यार्थियो! इस पाठ से आपको रिचर्डस की कविता और नैतिकता। मूल्य सिद्धान्त का जो ज्ञान प्राप्त हुआ है उसका स्व मूल्यांकन आप निम्नलिखित बहुविकल्पीय प्रश्नों द्वारा करें।

बहुविकल्पीय प्रश्न:-

1) डॉ. रिचर्डस के अनुसार उद्वेग कितने प्रकार के होते हैं?
   क) दो   ख) तीन
   ग) चार   घ) पाँच
2) दो प्रकार के उद्वेगों के नाम हैं-
   क) प्रवृत्तिमूलक   ख) निवृत्तिमूलक
   ग) दोनों   घ) दोनों में से कोई नहीं
3) 'कविता कविता के लिए' किसकी युक्तियों का खण्डन करते हुए रिचर्डस ने कला और नीति का परस्पर-सम्बन्ध स्वीकार किया है।
   क) वड्सवर्थ   ख) ब्रैडले
   ग) लोजाइनस   घ) उपर्युक्त सभी

4) किसके मत के अनुसार कल्पनापरक अनुभूति की परख उसके भीतर से ही हो सकती है?

क) अरस्तू ख) प्लेटो

ग) ब्रैडले घ) वड्स्वर्थ

5) 'काव्य की प्रकृति यह नहीं कि वह वस्तुजगत का अंग अथवा प्रति रूप हो, उसकी निजता इस बात में है कि वह एक स्वतंत्र, स्वतःपूर्ण, निरपेक्ष एवं स्वायत्त जगत हो।'' प्रस्तुत पंक्ति किसकी है?

क) प्लेटो ख) अरस्तू

ग) वड्स्वर्थ घ) ब्रैडले

6) किस पाश्चात्य आलोचक की धारणा के अनुसार ''कोई भी वस्तु जो किसी एक इच्छा को इस प्रकार शांत करती है कि उससे उसके समान या अधिक महत्वपूर्ण इच्छा का अवरोध नहीं होता, मूल्यवान होता है या, दूसरे शब्दों में किसी इच्छा को यदि तुष्ट नहीं करने दिया जाता, तो उसका केवल यही आधार हो सकती है कि वैसा करने से उससे भी अधिक महत्वपूर्ण इच्छाएँ कुण्ठित हो जाएंगी।''

क) रिचर्डस ख) वड्स्वर्थ

ग) कॉलेरिज घ) मैथ्यू अर्नाल्ड

7) किस पाश्चात्य विचारक के अनुसार, ''सौन्दर्यानुभूति विशिष्ट, स्वतःपूर्ण और अपने-आप में साध्य होती है, अतः उसके मूल्यांकन के लिए अन्य परोक्ष मूल्य अनावश्यक और घातक है।''

क) टी.एस.इलियट ख) ब्रैडले

ग) ड्राइडन घ) कॉलरिज

8) किस पाश्चात्य विचारक के अनुसार, यह बात अरांतः सत्य है क्योंकि सब-कुछ इस बात पर निर्भर करेगा कि वे परोक्ष साक्ष्य क्या हैं और कविता किस प्रकार की है। कुछ काव्य-प्रकारों में परोक्ष मूल्यों के घुस आने से कथ्य का मूल्य कम हो जाएगा, पर कुछ में काव्य का मूल्य परोक्ष साक्ष्यों पं. निर्भर करेगा।''

क) ब्रैडले ख) रिचर्डस

ग) ड्राइडन घ) कॉलरिज

12.5 सारांश

कवि का कर्तव्य है कि वह अपने अनुभवों को दूषित न होने दे, उन्हें साधारणीकृत कर अन्यों के आस्वाद का विषय बनायें। ''इस प्रकार उन्होंने समीक्षा-क्षेत्र में चले आते

रूढ़ धार्मिक व नैतिक मतों के विरोध में शुद्ध मनोवैज्ञानिक मत प्रस्तुत किया। उनका मनोवैज्ञानिक, आदर्शवादी, मानवतावादी दृष्टिकोण ही उनकी सबसे बड़ी देन है।

12.6 कठिन शब्द

1. मूल्यांकन = किसी वस्तु या मूल्य निर्धारित या निश्चित करने की क्रिया।
2. मानदंड = मानक, पैमाना
3. उद्वेग = तेज गति, तीव्र वेग
4. घृणा = नफरत
5. निर्वेद = उदासीनता, वैराग्य
6. प्राथमिकता = किसी भी चीज को महत्व या वरीपता में पहले रखना।
7. अभिव्यक्ति = अभिव्यंजना, प्रकट या प्रकाशित करने की क्रिया।
8. अग्रसर = आगे बढ़ना
9. असंतोष = अतृप्ति
10. सिद्धान्त = निश्चित मत
11. साक्ष्य = गवाही, प्रमाण
12. घातक = घात या प्रहार करने वाला।
13. निर्भर = आश्रित।
14. पृथक = अलग, भिन्न
15. स्वायत्त = स्वतंत्र

12.7 अभ्यासार्थ प्रश्न

1) आई.ए. रिचडर्स के संवेगों के संतुलन में काव्य-मूल्य मनोवेगों को सामजस्य पर विवेचन कीजिए।

____

____

____

____

____

____

2) आई.ए.रिचडर्स के मूल्य सिद्धान्त पर प्रकाश डालिए।

____

____

12.8 उत्तर कुंजी

स्व-मूल्यांकन (क)

1.	सहृदय	2.	लय
3.	पेंटर	4.	विरक्तिमूलक
5.	सिविस्थीसिस, सिंधीसिस	6.	सुखमूलक
7.	रिचर्डस	8.	काव्यमूल्य
9.	सक्रिय	10.	सरल
11.	अस्तव्यस्त	12.	समन्विति

स्व-मूल्यांकन (ख)

1.	सही	2.	गलत
3.	सही	4.	सही
5.	सही	6.	सही
7.	सही	8.	सही
9.	सही	10.	सही

स्व-मूल्यांकन (ग)

1.	दो	2.	दोनों
3.	ब्रैडले	4.	ब्रैडले
5.	ब्रैडले	6.	रिचर्डस
7.	ब्रैडले	8.	रिचर्डस

12.9 पठनीय पुस्तकें

1. पाश्चात्य काव्य शास्त्र- देवेन्द्रनाथ शर्मा, नेशनल पेपरबैक्स, 2023
2. पाश्चात्य साहित्य चिंतन- प्रो. निर्मला जैन, राधाकृष्ण प्रकाशन, 2017
3. उदात्त के विषय में-प्रो. निर्मला जैन, वाणी प्रकाशन, दिल्ली, 2004
4. पाश्चात्य काव्य शास्त्र की परम्परा- सं. डॉ. नगेन्द्र और सावित्री सिन्हा
5. काव्य में उदात्त तत्व- डॉ. नगेन्द्र और नेमिचन्द्र जैन, राजपाल एवं संस, दिल्ली

क्रोचे का अभिव्यंजनावाद

रूपरेखा

13.1 उद्देश्य एवं अपेक्षित परिणाम

13.2 प्रस्तावना

13.3 अभिव्यंजनावाद

स्व-मूल्यांकन (क)

स्व-मूल्यांकन (ख)

13.4 अभिव्यंजनावाद की आलोचना

स्व-मूल्यांकन (ग)

13.5 सारांश

13.6 कठिन शब्द

13.7 अभ्यासार्थ प्रश्न

13.8 उत्तर कुंजी

13.9 पठनीय पुस्तकें

13.1 उद्देश्य एवं अपेक्षित परिणाम

- प्रिय विद्यार्थियो! प्रस्तुत आलेख का उद्देश्य आपको
- अभिव्यंजनावाद के विषय में जानकारी देना।
- अभिव्यंजना के आलोचना बिन्दुओं की जानकारी देना।
- अभिव्यंजना समीक्षा पद्धति के विषय से अवगत करवाना।
- इस पाठ का विस्तृत अध्ययन करने के पश्चात् आप क्रोचे के अभिव्यंजनावाद को समझ सकेंगे इसके साथ ही अभिव्यंजनावाद की आलोचना को पूर्ण रूप से समझने में सक्षम होंगे।

13.2 प्रस्तावना:

'अभिव्यंजना का शाब्दिक अर्थ है-अभिव्यक्ति। प्रकाशन, संप्रेषण आदि इसके अन्य पर्यायवाची शब्द हैं। एक वाद के रूप में अभिव्यंजनावाद अंग्रेज़ी शब्द एक्स्प्रेशनिज़्म का अनुवाद है। एक्सप्रेशन (Expression) के पर्याय हैंः Locution, manifestation, speech, ulterance

13.3 अभिव्यजंनावाद:

कविता तथा कला द्वारा मनुष्य क्या व्यक्त करना चाहता है, कैसे व्यक्त करना चाहता है-इन्हीं प्रश्नों से जूझते आए हैं कवि, आचार्य और आलोचक। इटली के दार्शनिक बेनदेत्तो क्रोचे ने इस संदर्भ में एक नया सिद्धान्त प्रस्थापित किया जिसे अभिव्यंजनावाद या अन्तःप्रज्ञावाद का नाम दिया जाता है। अंतः प्रज्ञा अंग्रेजी शब्द Intution का अनुवाद है। इसे मनुष्य की छठी संज्ञानात्मक शक्ति (sixth sense) माना जाता है। इसका संबंध आंतरिक प्रेरणा से है; यह पूरी तरह से मन और आत्मा से संबंधित है। इस स्रोत तक मनुष्य अपनी ज्ञानात्मक इन्द्रियों यथा नाक, कान, चक्षु, जिह्वा, त्वचा के आश्रय नहीं पहुँच सकता। भौतिक अनुभवों को विज्ञान द्वारा प्रदत्त उपकरणों से जांचा परखा जा सकता है। किन्तु एक विशाल क्षेत्र ऐसा है जहां विज्ञान की पहुंच नहीं हो पाती। अभिव्यंजनावाद या अन्तःप्रज्ञावाद के केन्द्र में यही अलौकिक क्षेत्र है। इसका संबंध अध्यात्म से है। वैज्ञानिक चिन्तन, औद्योगिक प्रगति तथा भौतिकता के प्रति अंध मोह ने ईश्वर मन और आत्मा जैसी इकाइयों के अस्तित्व से इन्कार कर दिया। भौतिकतावादी (Materialistic) दृष्टि मनुष्य को आज तक अपने चंगुल में कसे हुए है। सोलहवीं शताब्दी में इस प्रवृत्ति को विशेष बल प्राप्त हुआ। उन्नीसवीं शताब्दी तक पहुंचते मनुष्य आध्यात्मिकता से विमुख होने लगा। योरुप को इस भौतिकतावादी प्रवृत्ति ने विशेष रूप से आक्रांत किया। बेनेदेत्तो क्रोचे ने भौतिकता की अपेक्षा आध्यात्मिकता और बाहरी तथ्यों की अपेक्षा अन्तः सत्ता और अंतः प्रज्ञा को महत्त्व दिया। क्रोचे के, इस अंतः प्रज्ञावाद को अभिव्यंजनावाद कहा जाता है।

क्रोचे की मान्यता थी कि कला का सम्बन्ध मानव की सहज अनुभूति से है। यह अनुभूति मानव की आत्मा में ऐसे आकार और चित्र उत्पन्न करती है जो अमूर्त (Abstract) होते हैं। इसीलिए जब कलाकार इन्हें चित्रित करता है, तो ये चित्र अमूर्त होते हैं। "किसी वस्तु के संसर्ग से आत्मा में अनेक झंकृतियाँ जन्म लेती हैं। कलाकार इन अमूर्त छवियों को सहज प्रतिभा 'कल्पना' के आशय एक पूर्ण बिम्ब के रूप में प्रस्तुत करता है।" स्पष्टतः ये चित्रण अरूप या अमूर्त (abstract) होते हैं। इनका बौद्धिक ज्ञान से कोई सम्बन्ध नहीं होता। इस प्रकार की अभिव्यक्ति हमें किसी वस्तु या क्रिया की सहज अनुभूति करवाती है। यहाँ याद रखना होगा कि क्रोचे की अवधारणा के अनुसार सहज अनुभूति एवं अभिव्यक्ति एक सहज प्रक्रिया है जिसे विज्ञान न स्वीकारे तो इसकी महत्ता कम नहीं होती। अभिव्यंजनावादी कलाकार और कवि अध्यात्म और अन्तः प्रज्ञा (intution) को ही महत्त्वपूर्ण मानते हैं। सहजानुभूति और अभिव्यंजना अलग नहीं हैं। ये दोनों एक हैं, अविभाज्य हैं, स्वाभाविक या सहज हैं और अभिव्यंजना की यही शक्ति

कलाकार को अन्य मनुष्यों से अलग करती है। Intution के लिए हिन्दी में अन्य शब्द हैः सहजानुभूति, स्वयं प्रकाश ज्ञान। क्रोचे के अनुसार आत्मा की दो क्रियाएं हैं:

1. विचारात्मक
2. व्यवहारात्मक

विचारात्मक पक्ष तर्क प्रदान भी हो सकता है; सहजानुभूति प्रदान भी। पहला पक्ष कला के सृजन में सहायक नहीं होता सहजानुभूति ही कला का कारण है। यही कला के रूप में व्यक्त होती है।

व्यवहारात्मक क्रिया के भी दो पक्ष हैं:

1. आर्थिक या अर्थ से संबंधित
2. नैतिक व्यवहार से संबंधित।

व्यवहारात्मक क्रिया सहज नहीं होती। इस क्रिया के लिए मनुष्य को प्रयास करना पड़ता है। यह मनुष्य की इच्छा और उससे जुड़े प्रक्रिया पर अवलंबित होती है। 'सहजानुभूति' सहज है इस पर मनुष्य का कोई वश नहीं होता; इसके लिए कलाकार या कवि कोई योजना नहीं बनाते।

इस प्रकार सहजानुभूति और अभिव्यंजना में कोई भेद नहीं है। सहजानुभूति ही सहज अभिव्यंजना है। सामान्य कलाकार के लिए अनुभूति अलग क्रिया है, अभिव्यक्ति अलग। दूसरी ओर 'अन्तः प्रज्ञा' द्वारा प्रेरित कलाकार के लिए इनकी अलग-अलग स्थिति नहीं होती।

इन्द्रियों (नाक, कान आदि) द्वारा अनुभूत ज्ञान और अन्तःप्रज्ञा द्वारा स्फुरित ज्ञान में मुख्य भेद यही है कि पहले प्रकार का ज्ञान बाहरी अनुभवों पर आधारित होता है जब कि अन्तःप्रज्ञा से जुड़ा ज्ञान आत्मा में स्फुरित होता है। अन्तःप्रज्ञा में इस तर्क के लिए कोई स्थान नहीं होता कि वास्तविक क्या है और काल्पनिक क्या है। अन्तःप्रज्ञा देश और काल की सीमाओं से परे होती है। अमूर्त (abstracct) कलाकृति सभी भौगोलिक क्षेत्रों और विभिन्न कालों में रहने वाले मनुष्यों के लिए एक समान ग्राह्य होती है।

अन्तःप्रज्ञा 'कुरूप या' 'सुरूप' जैसे भेद नहीं करती। जो भी स्वयं स्फुरित होता है, वह कला और कविता का सहज विषय बन जाता है। क्रोचे के अनुसार सौन्दर्य बाहरी अनुभव का नाम नहीं है। वह आत्मा में उपजा एक बिम्ब है। क्रोचे के अभिव्यंजना सिद्धान्त के विषय में निम्नलिखित निष्कर्ष विचारणीय हैं:

1. अभिव्यंजना एक सहज, आध्यात्मिक प्रक्रिया है। इस का मूल आधार है- सहज कल्पना।

2. सौन्दर्य को सुन्दर-असुन्दर जैसी कोटियों में नहीं बांटा जा सकता। सौंदर्य सफल अभिव्यंजना का ही दूसरा नाम है। यदि अभिव्यंजना सफल नहीं है तो इसे अभिव्यंजना माना ही नहीं जा सकता।
3. अभिव्यंजना अमूर्त होती है। इसमें शैली और शिल्प से जुड़े तत्वों यथा अलंकार, छन्द का कोई महत्त्व नहीं होता।

- **स्व-मूल्यांकन (क)**

प्रिय विद्यार्थियो! इस पाठ से आपको क्रोचे के अभिव्यंजनावाद का जो ज्ञान प्राप्त हुआ है उसका स्व मूल्यांकन आप निम्नलिखित बहुविकल्पीय प्रश्नों द्वारा करें।

बहुविकल्पीय प्रश्न:-

1) बेनदेत्तो क्रोचे कहां के दार्शनिक थे?

क) इटली	ख) फ्रांस
ग) अमेरिका	घ) उपर्युक्त सभी

2) अंतः प्रज्ञा को मनुष्य की कौन-सी संज्ञानात्मक शक्ति माना जाता है?

क) पांचवी	ख) छठी
ग) सातवीं	घ) आठवीं

3) किस शताब्दी तक पहुचते मनुष्य आध्यात्मिकता से विमुख होने लगा।

क) आठवीं	ख) दसवीं
ग) उन्नीसवीं	घ) उपर्युक्त सभी

4) क्रोचे की मान्यता के अनुसार कला का सम्बन्ध किससे है?

क) मानव की सहज अनुभूति से	ख) ईश्वर की सहज अनुभूति से
ग) दोनों	घ) दोनों में से कोई नहीं

5) क्रोचे के अनुसार आत्मा की कितनी क्रियाएं हैं?

क) तीन	ख) चार
ग) दो	घ) पांच

- **स्व-मूल्यांकन (ख)**

प्रिय विद्यार्थियो! इस पाठ में अभी तक प्राप्त ज्ञान का मूल्यांकन आप निम्नलिखित रिक्त स्थान भरकर करें।

1. व्यवहारात्मक क्रिया के ------- पक्ष है।
2. व्यवहारात्मक क्रिया ------- नहीं होती।
3. अन्तप्रज्ञा से जुड़ा ज्ञान ------- में स्फुटित होता है।

4. क्रोचे के अनुसार सौन्दर्य बाहरी अनुभव का नाम नहीं है। वह ------- में अपना बिम्ब है।
5. अभिव्यंजना एक सहज, आध्यात्मिक प्रक्रिया है। इसका मूल आधार है -------।
6. सौन्दर्य सफल ------- का ही दूसरा नाम है।
7. अभिव्यंजना ------- होती है। इसमें शैली और शिल्प से जुड़े तत्वों यथा अलंकार, छन्द का कोई महत्व नहीं होता।

13.4 अभिव्यंजनावाद की आलोचना:

1. शिल्प, अलंकार, आकार आदि को नकारता हुआ अभिव्यंजनावाद, कवि और कलाकार को इतनी स्वतंत्रता दे देता है कि कृति प्रायः दर्शक-पाठक की सहज समझ से बाहर हो जाती है। कलाकार स्वयं भी अपनी कृति को समझना या समझाना कर्त्तव्य नहीं समझता। यह कह कर कि अभिव्यंजना अन्तः प्रज्ञा से संबद्ध है, वह सभी जिम्मेदारियों से मुक्त हो जाता है।
2. अभिव्यंजनावादी कलाकृति या कविता इतनी अमूर्त हो जाती है कि वह दर्शक-पाठक की समझ में नहीं आ पाती। प्रत्येक व्यक्ति की अन्तःप्रज्ञा (Intution) अलग होती है। इस प्रकार अभिव्यंजना का सामाजिक महत्त्व समाप्त हो जाता है।
3. अभिव्यंजना का मूल उद्देश्य प्रकाशन ही नहीं, संप्रेषण भी है। घोर अभिव्यंजनावादी इस वास्तविकता की ओर ध्यान नहीं देते।

- **स्व-मूल्यांकन (ग)**

प्रिय विद्यार्थियो! निम्नलिखित प्रश्नों के उत्तर सही या गलत चिन्ह द्वारा देकर आप अभी तक प्राप्त ज्ञान का स्व-मूल्यांकन करें।

1. कलाकार स्वयं भी अपनी कृति को समझना या समझाना कर्तव्य नहीं समझता। ( )
2. अभिव्यंजना अन्तःप्रज्ञा से संबद्ध है, वह सभी जिम्मेदारियों से मुक्त हो जाता है। ( )
3. प्रत्येक व्यक्ति की अन्तः प्रज्ञा अलग नहीं होती है।( )
4. अभिव्यंजना का मूल उद्देश्य प्रकाशन ही नहीं संप्रेषण भी है। ( )
5. धीरे-धीरे अभिव्यंजनाकार अमूर्तकार बन गया और अध्यात्म से इसका संबंध टूट गया। ( )

13.5 सारांश :

प्रतीकवाद के साथ जुड़ कर अभिव्यंजनावादी कृतियाँ इतनी अमूर्त हो गईं कि ये व्यक्ति का निजी खिलवाड़ बन कर रह गईं। धीरे-धीरे अभिव्यंजनावाद अमूर्तवाद बन गया और अध्यात्म से इसका संबंध टूट गया। वर्ष और सदियाँ बीतने के साथ भौतिकता का आग्रह बढ़ता गया। वर्तमान परिदृश्य में बाज़ारवादी और उपभोक्तावादी सभ्यता का बोलबाला है। कभी-कभी आध्यात्मिक स्वर भी सुनाई पड़ते हैं। किन्तु समग्रतः विश्व की प्रवृत्ति भौतिकतावादी है। इस प्रकार के वातावरण में अन्तःप्रज्ञा और अध्यात्म की बातें बेसुरी लगने लगी हैं। अभिव्यंजनावाद अपने विशुद्ध, मूल रूप को बनाए रखने में असमर्थ हो गया है।

13.6 कठिन शब्द

1. प्रदत्त = जो दिया जा चुका हो या दिया हुआ।
2. संसर्ग = साथ रहने से उत्पन्न लगाव या संबंध।
3. अविभाज्य = विभाजित न हो सकने का गुण-धर्म।
4. स्फुरित = अस्थिर।
5. विशुद्ध = शुद्धता, परित्रता

13.7 अभ्यासार्थ प्रश्न:

1. क्रोंचे द्वारा स्थापित अभिव्यंजनावाद सिद्धांत पर प्रकाश डालिए।

2. अभिव्यंजनावाद के आलोचना बिदुंओं को स्पष्ट करें।

13.8 उत्तर कुंजी

स्व-मूल्यांकन (क)

1. इटली 2.छठी 3. उन्नीस 4. मानव कि सहज अनुभूति से 5.दो

स्व-मूल्यांकन (ख)

1.दो 2.सहज 3.आत्मा 4.आत्मा 5.सहज कल्पना 6.अभिव्यंजना 7.अमूर्त

स्व-मूल्यांकन (ग)

1.सही 2.सही 3.गलत 4.सही 5.सही 6.सही

13.9 पठनीय पुस्तकें

1. पाश्चात्य काव्य शास्त्र- देवेन्द्रनाथ शर्मा, नेशनल पेपरबैक्स, 2023
2. पाश्चात्य साहित्य चिंतन- प्रो. निर्मला जैन, राधाकृष्ण प्रकाशन, 2017
3. उदात्त के विषय में-प्रो. निर्मला जैन, वाणी प्रकाशन, दिल्ली, 2004
4. पाश्चात्य काव्य शास्त्र की परम्परा- सं. डॉ. नगेन्द्र और सावित्री सिन्हा
5. काव्य में उदात्त तत्व- डॉ. नगेन्द्र और नेमिचन्द्र जैन, राजपाल एवं संस, दिल्ली

अस्तित्ववाद

रूपरेखा

14.1 उद्देश्य एवं अपेक्षित परिणाम
14.2 प्रस्तावना
14.3 अस्तित्वाद का अर्थ
- स्व-मूल्यांकन (क)

रिक्त स्थान
- स्व-मूल्यांकन (ख)

सही या गलत

14.4 अस्तित्ववादी दर्शन के प्रमुख सिद्धांत
- स्व-मूल्यांकन (ग)

बहुविकल्पीय प्रश्न

14.5 सारांश
14.6 कठिन शब्द
14.7 अभ्यासार्थ प्रश्न
14.8 उत्तर कुंजी
14.9 पठनीय पुस्तकें

14.1 उद्देश्य एवं अपेक्षित परिणाम

- प्रिय विद्यार्थियो! प्रस्तुत आलेख का उद्देश्य आपको
- अस्तित्ववाद का अर्थ की जानकारी देना।
- अस्तित्ववाद दर्शन के प्रमुख सिद्धांतों की जानकारी देना।
- इस पाठ का विस्तृत अध्ययन करने के पश्चात् आप अस्तित्ववाद के अर्थ को समझ सकेंगे इसके साथ ही अस्तित्ववाद दर्शन के प्रमुख सिद्धांतों को पूर्ण रूप से समझने में सक्षम होंगे।

14.2 प्रस्तावना:

'अस्तित्व' का सामान्य कोशगत अर्थ है- जीवन, मौजूदगी, वजूद, विद्यमानता, सत्ता, हस्ती।

'अस्तित्व' शब्द अंग्रेजी शब्द 'Existence' का हिन्दी पर्याय है। इस शब्द के अंग्रेज़ी अर्थ हैं-

To be, Have one's being, Live Occur, The state or fact of existence.

इस सृष्टि में पृथ्वी पर ही जीवन है। अब तक की वैज्ञानिक खोज किसी अन्य ग्रह पर जीवन के चिह्न देख नहीं पाई है। पृथ्वी पर अनेक जीवधारी हैं किन्तु मनुष्य ही ऐसा प्राणी है जिसे अपने अस्तित्व की चेतना है। मनुष्य ने अपने प्रयत्नों से अपने अस्तित्व को, अपने जीवन के महत्त्व को पहचाना है। इस प्रकार 'अस्तित्ववाद' का अध्ययन करते समय हम मनुष्य के अस्तित्व और इस अस्तित्व से जुड़ी हुई समस्याओं पर विचार करते हैं।

इस धरती पर मनुष्य का अस्तित्व है; इसीलिए सृष्टि और यहाँ तक कि ईश्वर के विषय में भी विचार हुआ है। यदि मनुष्य का अस्तित्व न होता, तो सृष्टि और पृथ्वी के किसी पदार्थ या प्राणी के विषय में कोई चिन्तन न हुआ होता। मनुष्य कर्म करता है, चिन्तन करता है और ऐसा करने में वह स्वतन्त्र है- यही अस्तित्ववाद का मूल मंत्र है।

इस प्रकार हमें भली भांति समझ लेना चाहिए कि अस्तित्ववाद के संदर्भ में अस्तित्व का अर्थ है- मनुष्य का अस्तित्व। मनुष्य ही सृष्टि के तत्वों की पहचान करता है; वह अपनी भी पहचान करने की कोशिश करता है; वह अपना विकास करता है और इस विकास के प्रति सजग रहता है। वह जानता है कि वह क्या कर रहा है, क्या बन रहा है। यही चेतना उसे अन्य प्राणियों से अलग, विलक्षण बना देती है।

14.3 अस्तित्ववाद का अर्थ:

अस्तित्ववादी चिन्तन को समझने के लिए इस सूत्र को समझना आवश्यक है- अस्तित्व सार से पूर्ववर्ती है।

Existence precedes essena

अस्तित्व का अर्थ है - मनुष्य का होना और 'सार' वह गुण या विशेषता है जो मनुष्य द्वारा सृष्टि के तत्वों के लिए निश्चित की गई है। मनुष्य के 'अस्तित्व' से पहले कुछ नहीं होता। अर्थात् मनुष्य ही सभी तत्वों की पहचान करता है। हम विभिन्न पदार्थों को उसी रूप में पहचानते हैं, जिस रूप में मनुष्य ने उन्हें जाना-पहचाना है। मनुष्य के बिना कुछ भी नहीं होता। ईश्वर की संकल्पना भी मनुष्य ने की है। वैसे, अस्तित्ववाद यह मान कर चलता है कि मनुष्य कर्म करने में स्वतंत्र है और इस स्वतंत्रता पर ईश्वर-नामी सत्ता का कोई अंकुश नहीं है। विश्व के दर्शन या तो पदार्थ (Matter) को महत्त्व देते हैं; या विचार (Idea) को। पहले दर्शन भौतिकवादी हैं। वे मनुष्य को अन्य पदार्थों से

अलग नहीं मानते। दूसरी कोटि के दर्शन मनुष्य के कर्मों का नियमन करने वाली किसी अदृश्य सत्ता में विश्वास करते हैं। इन दोनों दर्शनों के विपरीत अस्तित्ववाद मनुष्य को महत्त्वपूर्ण घोषित करता है।

दो महायुद्धों से उपजी त्रासदी ने मनुष्य को नए सिरे से सोचने को विवश किया। मनुष्य के पास दो विकल्प हैं: एक ओर संपूर्ण विनाश है तो दूसरी ओर नवनिर्माण की असीम संभावनाएँ हैं। मनुष्य को अपने अस्तित्व के पक्ष में निर्णय लेना है। यह उसका मानवीय दायित्व है।

अस्तित्ववादी चिन्तकों के दो वर्ग रहे हैं:

1. ईश्वरवादी **2. अनीश्वरवादी**

ईश्वरवादी चिन्तकों में कार्ल यास्पर्स, पास्कल, कीर्केगार्द, मार्सल आदि दार्शनिकों की गणना होती है। इस प्रकार के लोगों की अवधारणा है कि ईश्वर ने ही मनुष्य को अपने विकास की चेतना और शक्ति प्रदान की। यदि मनुष्य इस शक्ति का दुरुपयोग करता है तो वह ईश्वरीय इच्छा के विरोध में खड़ा होता है।

अनीश्वरवादी दार्शनिकों में हाइडेगर तथा सात्र जैसे मनीषियों की गणना होती है। फ्रांसीसी दार्शनिक नीत्शे ने तो घोशणा कर दी कि ईश्वर मर चुका है।

लोकतंत्र के प्रति बढ़ती आस्था ने भी अस्तित्ववादी दर्शन को महत्त्व प्रदान किया। समस्त विश्व के मनुष्यों में मानवीय संवेदना अवस्थित है। मनुष्य अमीर हो या गरीब; वे भूगोल के किसी भी प्रदेश के निवासी हों, मानवीय संवेदना उन्हें एक-दूसरे से जोड़ती है।

- **स्व-मूल्यांकन (क)**

रिक्त स्थान

प्रिय विद्यार्थियो! इस पाठ में अभी तक प्राप्त ज्ञान का स्व-मूल्यांकन आप निम्नलिखित रिक्त स्थान भरकर करें।

1. अस्तित्व का अर्थ है- ------- का होना।
2. मनुष्य के ------- से पहले कुछ नहीं होता।
3. ईश्वर की ------- भी मनुष्य ने की है।
4. दो महायुद्धों से उपजी ------- ने मनुष्य को नए सिरे से सोचने को विवश किया।
5. मनुष्य के पास दो विकल्प हैं एक ओर संपूर्ण विनाश है तो दूसरी ओर ---- की असीम संभावनाएँ हैं।

- **स्व-मूल्यांकन (ख)**

सही या गलत

प्रिय विद्यार्थियो! निम्नलिखित प्रश्नों के उत्तर सही या गलत चिन्ह देकर आप अभी तक प्राप्त ज्ञान का मूल्यांकन करें।

1. मनुष्य को अपने अस्तित्व के पक्ष में निर्णय लेना है। यह उसका मानवीय दायित्व है।( )
2. अस्तित्ववादी चिन्तकों के दो वर्ग रहे हैं। ईश्वरवादी, अनीश्वरवादी। ( )
3. ईश्वरवादी चिन्तकों में हाइडेगर तथा सात्र जैसे मनीषियों की गणना होती है। ( )
4. अनीश्वरवादी चिन्तकों कार्ल यास्पर्स, पास्कल, कीर्केगार्द, मार्सल आदि दार्शनिकों की गणना होती है। ( )
5. लोकतंत्र के प्रति बढ़ती आस्था ने ही अस्तित्ववादी दर्शन को महत्व प्रदान किया। ( )

14.4 अस्तित्ववादी दर्शन के प्रमुख सिद्धान्त

1. **मानवीय निष्ठा:**

   अस्तित्ववादियों को मनुष्य की शक्ति और विकास के प्रति निष्ठा पर अगाध विश्वास है। यहाँ मनुष्य का अर्थ है- पृथ्वी पर रहने वाले सभी मनुष्य। जब मनुष्य कुछ करना चाहता है तो वह मानव मात्र के लिए शुभ का चयन करता है। मनुष्य के लिए इस मानवीय निष्ठा का अतिक्रमण संभव नहीं है।

2. **उत्तरदायित्व:**

   प्रत्येक मनुष्य अपने आपको सारी मानवता के प्रति उत्तारदायी मानता है। जो मनुष्य इस उत्तारदायित्व को स्वीकार नहीं कर पाता, वह अपनी मानवता को अस्वीकार कर देता है; उसके लिए अस्तित्व का कोई अर्थ नहीं है।

3. **चयन का सिद्धान्त:**

   मनुष्य कर्म के लिए स्वतन्त्र है। वह बहुत-से विकल्पों में से अपने लिए श्रेष्ठ विकल्प चुन सकता है। लक्ष्य और इस लक्ष्य की प्राप्ति के लिए साधन के चुनाव की स्वतंत्रता का बोध मनुष्य को विकास और प्रगति के प्रति आष्वस्त करता है।

4. **एकाकीपन का बोध:**

मनुष्य की विडंबना यह है कि एक ओर वह प्राणियों तथा सृष्टि के तत्वों के बीच रहता है और दूसरी ओर महसूस करता है कि सारी सृष्टि में वह अकेला है। संकट के समय उसकी कोई सहायता नहीं करता। यदि ईश्वर की सत्ता है, तो ईश्वर भी संकट के समय मनुष्य की सहायता नहीं करता।

5. **चिन्ता और पीड़ा:**

चिन्ताहीन रहना मनुष्य की प्रवृत्ति में नहीं है। मनुष्य जो कुछ करता है, वह उसे चिन्ता प्रदान करता है; मनुष्य जो कुछ कर नहीं पाता, वह भी उसे चिन्ताग्रस्त करता है। वह जिसे सत्य मानता है, उसे प्राप्त करके उसे संतुष्टि नहीं मिलती। असफलता और एकाकीपन उसे निराशा से भर देते हैं। वह अनुभव करता है कि उसकी रचना के पीछे कोई प्रयोजन नहीं है। मनुष्य को इस सृष्टि में उसकी इच्छा के बिना आना पड़ा है। वह अपने आपको कर्म करने में स्वतंत्र मानता है, उसकी इच्छाओं तथा आकांक्षाओं की कोई सीमा नहीं है; किन्तु वह स्पष्ट देखता है कि परिस्थितियों पर उसका कोई वश नहीं है। यह चिन्ता, पीड़ा और निराशा मनुष्य की नियति है। मनुष्य को जन्म मिला है तो उसकी मृत्यु भी अवश्यंभावी है। उसे जो कुछ करना है जन्म और मृत्यु के ध्रुवों के बीच कर लेना है। मनुष्य को असीम उत्तरदायित्वों के साथ असहाय छोड़ दिया गया है।

- **स्व-मूल्यांकन (ग)**

प्रिय विद्यार्थियो! इस पाठ से आपको अस्तित्ववादी दर्शन के प्रमुख सिद्धान्तों का जो ज्ञान प्राप्त हुआ है उसका स्व-मूल्यांकन आप निम्नलिखित बहुविकल्पीय प्रश्नों द्वारा करें।

बहुविकल्पीय प्रश्न:-

1) किसको मनुष्य की शक्ति और विकास के प्रति निष्ठा पर अगाथ विश्वास है?

क) अस्तित्ववादियों को ख) यथार्थवादियों को

ग) आदर्शवादियों को घ) उपर्युक्त सभी

2) प्रत्येक मनुष्य अपने आपको किसके लिए उत्तरदायी मानता है?

क) मानवता के प्रति ख) आधुनिकता के प्रति

ग) यथार्थता के प्रति घ) उपर्युक्त सभी

3) मनुष्य किसके लिए स्वतन्त्र है?

क) धर्म ख) कर्म

ग) अर्थ घ) मोक्ष

4) मनुष्य की प्रवृत्ति में क्या है?

क) चिन्ता ख) पीड़ा

ग) दोनों घ) दोनों नहीं

5) मनुष्य में किसकी कोई सीमा नहीं है?

क) इच्छाओं ख) आकांक्षाओं

ग) दोनों घ) दोनों में नहीं

14.5 सारांश:

उपर्युक्त विवेचन से स्पष्ट है कि अस्तित्ववाद मनुष्य की गरिमा का दर्शन है। इस दर्शन के अनुसार मनुष्य अपना और सृष्टि का प्रारूप निश्चित करता है, विकास करता है। किन्तु अपनी असफलताओं और सीमाओं के कारण वह असंतुष्ट रहता है। यह पीड़ा उसके विकास में सहायक होती है। विडम्बना यह है कि वैश्वीकरण के इस युग में भी विभिन्न राष्ट्रों की आकांक्षाएं परस्पर विरोधी हैं। मनुष्य युद्धों से मुक्ति प्राप्त नहीं कर पा रहा है। आणविक तथा अन्य विनाशक अस्त्र शस्त्र मानव-अस्तित्व के लिए खतरा बने हुए हैं। इन्हीं विरोधों के बीच जीना आधुनिक मनुष्य की नियति है।

14.6 कठिन शब्द:

1. अस्तित्व =वजूद, विद्‌यमानता
2. अतिक्रमण = सीमा का उल्लंघन
3. संकल्पना = विचार, धारणा
4. प्रारूप = प्राथमिक रूप
5. त्रासदी = दुखांत रचना
6. आणविक = सबसे छोटी इकाई

14.7 अभ्यासार्थ प्रश्न:

स्व-मूल्यांकन (क)

1. मनुष्य 2. अस्तित्व

3. संकल्पना 4. त्रासदी

5. नवनिर्माण

स्व-मूल्यांकन (ख)

1. सही
2. सही
3. गलत
4. गलत
5. सही

स्व-मूल्यांकन (ग)

1. अस्तित्ववादियों को
2. मानवता के प्रति
3. कर्म
4. दोनों
5. दोनों

14.8 अभ्यासार्थ प्रश्न:

1. अस्तित्ववाद का अर्थ स्पष्ट करते हुए इसके प्रमुख सिद्धान्तों पर प्रकाश डालिए।

2. "अस्तित्व सार से पूर्ववर्ती है" सूत्र को स्पष्ट करते हुए संक्षिप्त टिप्पणी लिखिए ।

14.9 उत्तर कुंजी

स्व-मूल्यांकन (क)

1. मनुष्य
2. अस्तित्व
3. संकल्पना
4. त्रासदी
5. नवनिर्माण

स्व-मूल्यांकन (ख)

1. सही
2. सही
3. गलत
4. गलत
5. सही

स्व-मूल्यांकन (ग)

1. अस्तित्ववादियों को
2. मानवता के प्रति
3. कर्म
4. दोनों
5. दोनों

14.10 पठनीय पुस्तकें

1. पाश्चात्य काव्य शास्त्र- देवेन्द्रनाथ शर्मा, नेशनल पेपरबैक्स, 2023
2. पाश्चात्य साहित्य चिंतन- प्रो. निर्मला जैन, राधाकृष्ण प्रकाशन, 2017
3. उदात्त के विषय में-प्रो. निर्मला जैन, वाणी प्रकाशन, दिल्ली, 2004
4. पाश्चात्य काव्य शास्त्र की परम्परा- सं. डॉ. नगेन्द्र और सावित्री सिन्हा
5. काव्य में उदात्त तत्व- डॉ. नगेन्द्र और नेमिचन्द्र जैन, राजपाल एवं संस, दिल्ली

मनोविश्लेषणवाद

रूपरेखा

15.1 उद्देश्य एवं अपेक्षित परिणाम
15.2 प्रस्तावना
15.3 मनोविश्लेषणावाद
- स्व-मूल्यांकन (क)
रिक्त स्थान
- स्व-मूल्यांकन (ख)
बहुविकल्पीय प्रश्न
- स्व-मूल्यांकन (ग)
सही या गलत
15.4 सारांश
15.5 कठिन शब्द
15.6 अभ्यासार्थ प्रश्न
15.7 उत्तर कुंजी
15.8 पठनीय पुस्तकें

15.1 उद्देश्य एवं अपेक्षित परिणाम

प्रिय विद्यार्थियो! प्रस्तुत आलेख का उद्देश्य आपको मनोविश्लेषणावाद के विषय में जानकारी देना।

- मनोविश्लेषण को लेकर फ्रायड की स्थापनाओं से अवगत करवाना।
  प्रस्तुत पाठ का विस्तृत अध्ययन के मनोविश्लेषणवाद को पूर्ण रूप से समझने में सक्षम होंगे।

15.2 प्रस्तावना:

मनुष्य एक व्यक्ति या समाज के सदस्य के रूप में जो भूमिका निभाता है, उसके कारणों और स्रोतों को जानने का प्रक्रिया दार्शनिक सदा से करते आए हैं। उन्नीसवीं सदी के दार्शनिक सिगमंड फ्रायड का नाम इस संदर्भ में विशेष रूप से उल्लेखनीय है। वैज्ञानिक प्रवृत्ति ने आत्मा और मन जैसी इकाइयों की अवस्थिति से इनकार कर दिया था किन्तु

मनुष्य के कुछ व्यवहार इतने विचित्र होते हैं कि विज्ञान उनके कारणों का निदान और उनसे उपजने वाले रोगों का उपचार नहीं कर पाता। यहीं मनोविज्ञान और मनोविश्लेषण की भूमिका महत्त्वपूर्ण हो जाती है।

15.3 मनोविश्लेषणवाद:

मनोविज्ञान मनुष्य के चिन्तन और व्यवहार का अध्ययन करता है और मनोविश्लेषण इनके कारणों को पहचानकर मनोरोगी का उपचार करता है।

सिग्मंड फ्रायड (1856-1939) विकासवादी वैज्ञानिक डार्विन से प्रभावित थे। डार्विन ने स्थापना की थी मनुष्य किसी दैवी इच्छा से अवतरित प्राणी नहीं है। इसका विकास हुआ है। यह सिद्धान्त मनुष्य को अन्य पशुओं के समकक्ष ला कर खड़ा कर देता है।

दूसरी और मनुष्य के बहुत-से व्यवहार ऐसे होते हैं जिनके कारण तक पहुंच पाना कठिन होता है। फ्रायड एक चिकित्सक थे। उन्हें महसूस होता कि मनोरोगियों के असामान्य व्यवहारों का चिकित्सा के नियमों का पालन करते हुए निदान नहीं किया जा सकता।

फ्रायड के अनुसार मनोविश्लेषण की दो मूलभूत स्थापनाएं हैं:-

1. मानसिक प्रक्रम अचेतन (Unconsious) अर्थात् अज्ञात होते हैं। जो प्रक्रम या चिह्न चेतन (Conscious) या ज्ञात होते हैं, वे भी पूर्ण मानसिक सत्ता के हिस्से होते हैं।
2. स्नायु और मानसिक गड़बड़ें पैदा करने वाले आवेगों में काम (sex) का बहुत बड़ा हाथ होता है।

   फ्रायड ने 'मन' के तीन मुख्य भाग माने चेतन (conscious) अवचेतन (sub-conscious) और अचेतन (unconsious)

सामाजिक जीवन को निभाने की चिन्ता में मनुष्य को ऐसे असंख्य आवेगों और दबावों से समझौता करना पड़ता है जिन्हें वह बिल्कुल पसन्द नहीं करता। मनुष्य बहुत-से व्यवहार करना चाहता है किन्तु सामाजिक आग्रहों के कारण कर नहीं सकता। वह बहुत-सी इच्छाओं की पूर्ति करना चाहता है किन्तु उसकी विवशताएँ आड़े आ जाती हैं। फलस्वरूप वह इच्छाओं का दमन करता है। ये दमित इच्छाएँ उसके अवचेतन और अचेतन में फेंक दी जाती है। ये दबी हुई इच्छाएँ लगातार 'चेतन' स्तर पर आने का करती रहती हैं और 'चेतन' उन्हें निचले स्तरों पर फेंकता रहता है। इस प्रकार, एक ओर चेतन तथा दूसरी ओर अवचेतन तथा अचेतन की सांझी प्रक्रिया के बीच संघर्ष चलता रहता है। दमित इच्छाएं और प्रवृत्तियाँ मनुष्य के व्यवहार को असामान्य बना देती हैं;

वह एक मनोरोगी बन जाता है। अपने व्यवहार का कारण रोगी स्वयं तो जानता ही नहीं; उसके चिकित्सकों के लिए भी यह अज्ञात रहता है। मनोविश्लेषण की सारी प्रक्रिया इन्हीं रहस्यों को खोजने के प्रयास का दूसरा नाम है।

फ्रायड के मनोविश्लेष्णात्मक सिद्धान्तों के निम्नलिखित प्रमुख बिन्दु थे:

1. सभी मस्तिष्क खोखले हैं। चेतन की अपेक्षा अवचेतन और अचेतन कहीं अधिक महत्त्वपूर्ण हैं।
2. सभी क्रियाओं का मूल 'काम' है।
3. प्रवृत्तियों पर अंकुश रखने से व्यक्तित्व में अनेक अस्वाभाविक प्रवृत्तियाँ विकसित हो जाती हैं।
4. मनुष्य जो कुछ करता है, वह अकारण नहीं करता, उसका कोई-न-कोई कारण अवचेतन या फिर अचेतन में स्थित होता है।

   बार-बार की दमन, क्रिया से हीन भावना जन्म लेती है, एक मानसिक ग्रन्थि (Complex) बन जाती है। अब व्यक्ति का सारा व्यवहार इसी ग्रन्थि या कुण्ठा द्वारा परिचालित होता है।

फ्रायड का मानना था कि व्यक्ति की ग्रंथियाँ (Complexes) शैशव अवस्था में ही बन जाती है। फ्रायड ने स्वप्नों, दिवास्वप्नों, लेखन और वाचन में होने वाली अलक्षित गलतियों आदि का भी अध्ययन किया और स्थापना की कि इन सब में दमित इच्छाओं की अभिव्यक्ति होती है।

पुनः याद रखना होगा कि असामान्य व्यवहारों का मनोविज्ञान ही मनोविश्लेषणवाद का रूप ग्रहण करता है। मनोविज्ञान में सामान्य तथा असामान्य दोनों प्रकार के व्यवहारों का अध्ययन किया जाता है।

फ्रायड के मनोविश्लेषण सम्बन्धी सिद्धान्तों को ऐडलर (Adler) ने विकसित किया। मानसिक ग्रंथि या कांप्लेक्स को ऐडलर भी बहुत महत्त्व देता है किन्तु वह फ्रायड की इस मान्यता को स्वीकार नहीं करता कि सभी कुंठाओं का जन्म शैशवकाल में हो जाता है। ऐडलर काम (Sex) को इतना महत्त्व नहीं देता। उसके अनुसार मनुष्य की स्वप्रकाशन (Self-assertion) की भावना उसके व्यवहार को विशेष रूप से परिचालित करती है। मनुष्य को समाज में समायोजन (adjustment) की आवश्यकता होती है और इसी प्रयास में उसका व्यवहार असामान्य हो जाता है। व्यक्ति के आदर्श , मैत्री संबंध तथा यौन सम्बन्ध मिलकर उसका सामाजिक व्यवहार निर्धारित करते हैं। ऐडलर मानता था कि स्वप्नों में व्यक्ति की विश्य-विषयक चिन्ताएँ भी अभिव्यक्ति पाती हैं।

फ्रायड को ही मनोविश्लेषण का जनक माना जाता है किन्तु इस संदर्भ में एक अन्य वैज्ञानिक कार्ल युंग (Jung) की चर्चा आवश्यक है। कार्ल जंग ने फ्रायड की भांति मन की प्रकल्पना में अचेतन का महत्त्व माना। उसने मन के दो भाग किए: चेतन तथा अचेतन। अचेतन के उसने पुनः दो भाग किए व्यक्ति-अर्जित या वैयक्तिक तथा सामूहिक। सामूहिक (collective) अचेतन में उसने मनुष्य के पैतृक दाय को भी सम्मिलित किया। मनुष्य को बहुत कुछ अपने पूर्वजों से प्राप्त होता है। पैतृक, आनुवंषिक, जातिगत विशेषताएँ अचेतन का अनिवार्य भाग होती हैं तथा समय पर ये चेतन में आने का प्रयास करती रहती हैं। कार्ल जंग ने मनुष्यों में व्यक्ति के दो भेद किए नारी-गुण-प्रदान तथा पुरुष-गुण-प्रदान। प्रत्येक मनुष्य, चाहे वह पुरुष हो या नारी, उसमें कुछ गुण नारी के होते हैं; कुछ गुण नर के। व्यक्तित्व की पुनः दो अन्य कोटियाँ है: अन्तर्मुखी (Introvert) तथा बहिर्मुखी (Introvest)। विचार, भाव, संवेदन तथा सहजज्ञान या इंट्यूशन मनुष्य की चार शक्तियाँ हैं जो उसके व्यवहारों को रूप देती हैं।

जब कोई भी नया विचार मानव-समाज में प्रचार पाता है, विश्व भर में उसके प्रति आकर्शण बढ़ता है। मनोविश्लेषकों ने अवचेतन और अचेतन में विद्यमान एक विस्तृत और विराट लेकिन अदृश्य संसार की ओर चिन्तकों को आकृष्ट किया।

- **स्व-मूल्यांकन (क)**

रिक्त स्थान

प्रिय विद्यार्थियो! इस पाठ में अभी तक प्राप्त ज्ञान का मूल्यांकन आप निम्नलिखित रिक्त स्थान भरकर करें।

1. मनोविज्ञान मनुष्य के चिन्तन और -------- का अध्ययन करता है।
2. मनोविश्लेषण मनुष्य के कारणों को पहचानकर -------- का उपचार करता है।
3. सिग्मंड फ्रायड विकासवादी वैज्ञानिक -------- से प्रभावित थे।
4. डार्विन ने स्थापना की थी मनुष्य किसी -------- इच्छा से अवतरित प्राणी नहीं है।
5. फ्रायड के अनुसार मनोविश्लेषण की -------- मूलभूत स्थापनाएं हैं।
6. मानसिक प्रक्रम अचेतन अर्थात -------- होते हैं।

- **स्व-मूल्यांकन (ख)**

प्रिय विद्यार्थियो! इस पाठ से आपको मनोविश्लेषणवाद का जो ज्ञान प्राप्त हुआ है उसका स्व-मूल्यांकन आप निम्नलिखित बहुविकल्पीय प्रश्नों द्वारा करें।

बहुविकल्पीय प्रश्न:-

1) फ्रायड के अनुसार 'मन' के तीन मुख्य भाग माने गए हैं।

   क) चेतन (conscious)   ख) अवचेतन (Sub-conscious)

   ग) अचेतन (Un-conscious)   घ) उपर्युक्त सभी

2) सामाजिक जीवन को निभाने की चिन्ता में सामाजिक जीवन को समझौता करना पड़ता है।

   क) आवेगों   ख) दबावों

   ग) दोनों   घ) दोनों में से कोई नहीं

3) मनुष्य की दमित इच्छाएँ कहां जाती हैं?

   क) अवचेतन   ख) अचेतन

   ग) दोनों   घ) दोनों में से कोई नहीं

4) फ्रायड के अनुसार मनुष्य जो कुछ करता है वह अकारण नहीं करता, उसका कोई न कोई कारण किसमें स्थित होता है?

   क) अवचेतन   ख) अचेतन

   ग) दोनों   घ) दोनों में से कोई नहीं

5) फ्रायड की मान्यता के अनुसार व्यक्ति की ग्रंथियाँ किस अवस्था में ही बन जाती है?

   क) शैशव अवस्था   ख) यौवन अवस्था

   ग) प्रौढ़ अवस्था   घ) उपर्युक्त सभी

6) मनोविज्ञान में किस प्रकार के व्यवहारों का अध्ययन किया जाता है?

   क) सामान्य   ख) असामान्य

   ग) दोनों   घ) दोनों में से कोई नहीं

- **स्व-मूल्यांकन (ग)**

सही या गलत

प्रिय विद्यार्थियो! निम्नलिखित प्रश्नों के उत्तर सही या गलत चिन्ह देकर आप अभी तक प्राप्त ज्ञान का मूल्यांकन करें।

1. फ्रायड के मनोविश्लेषण सम्बन्धी सिद्धान्तों को ऐडलर ने विकसित किया। ( )
2. ऐडलर फ्रायड की इस मान्यता को स्वीकार नहीं करता कि सभी कुंठाओं का जन्म शैशवकाल में हो जाता है। ( )

3. ऐडलर मानता था कि स्वप्नों में व्यक्ति की विषय-विषयक चिन्ताएँ अभिव्यक्ति नहीं पाती हैं। ( )
4. कार्ल युंग ने फ्रायड की भांति मन की प्रकल्पना में अचेतन का महत्व माना। ( )
5. कार्ल युंग ने मन के दो भाग किए चेतन तथा अचेतन। ( )
6. अचेतन के कार्ल जंग ने पुनः दो भाग किए व्यक्ति-अर्जित या वैयक्तिक तथा सामूहिक। ( )

15.4 सारांश :

फ्रायड के सिद्धान्तों से प्रभावित होकर साहित्यकार ऐसा साहित्य रचने लगे जिसमें असामान्य व्यवहार करने वाले चरित्रों की भरमार थी। काम-सम्बन्धों को भी महत्त्व मिला। इस प्रकार मनोविश्लेषण, जिसका मूल सम्बन्ध चिकित्सा और मनोविज्ञान से था, साहित्य में एक वाद के रूप में प्रस्तुत हुआ। साहित्यकार मन में अवस्थित दमित इच्छाओं और कुंठाओं का चित्रण करने लगे। साहित्य में असामान्य व्यवहार करने वाले चरित्रों की रचना होने लगी। विशेष पात्र के व्यवहार की पृश्ठभूमि में विद्यमान, संभावित कारणों को प्रस्तुत किया जाने लगा। दमित इच्छाओं को महत्त्वपूर्ण माना जाने लगा। इसीलिए माना गया कि मनोविश्लेषणवादी साहित्य मानसिक रूप से रुग्न व्यक्तियों का चिकित्साल्य बन कर रह गया। सामाजिक आंदोलनों और सामाजिक समस्याओं के आग्रह ने साहित्यकारों को मनोविश्लेषणवाद के घेरे से शीघ्र मुक्ति प्रदान कर दी। इसमें सन्देह नहीं कि चिकित्सा शास्त्र तथा मनोविज्ञान में मनोविश्लेषण का महत्त्व बना हुआ है। ऐलिस हैवलाक जैसे मनोविश्लेषकों ने इस क्षेत्र में नई स्थापनाएँ की जिससे साहित्य सामाजिक उत्तरदायित्वों से निरपेक्ष होने लगा। यथार्थवाद के साथ मिलकर मनोविश्लेषणवाद मन की अंध गुहाओं में झांकने का बहाना करके अश्लीलता की ओर बढ़ने लगा। इसी कारण इसे साहित्यिक वाद के रूप में चिरस्थायित्व नहीं मिल सका।

15.5 कठिन शब्द:

1. अवस्थिति = ठहरे-टिके होने की स्थिति।
2. अवतरित = नीचे उतरा हुआ।
3. निदान = कारण
4. अलक्षित = स्पष्ट न दिखने वाला।
5. अनतर्मुखी = जो अपने ही विचारों में सुख-संतोष का अनुभव करता हो।
6. परिचालित = चलाया हुआ।

7. आनुवंशिक = वंशानुगत या विरासत में मिलने योग्य

15.6 अभ्यासार्थ प्रश्न:

1. मनोविश्लेषणवाद से आप क्या समझते हैं । स्पष्ट करें ।

2. फ्रायड के मनोविश्लेष्णात्मक सिद्धान्तों पर प्रकाश डालिए ।

15.7 उत्तर कुंजी

स्व-मूल्यांकन (क)

1.व्यवहार 2.मनोरोगी 3. डार्विन 4.दैवी 5.दो 6.अज्ञात

स्व-मूल्यांकन (ख)

1.उपर्युक्त सभी 2.दोनों 3. दोनों 4. दोनों 5. शैशव अवस्था 6. दोनों

स्व-मूल्यांकन (ग)

1.सही 2.सही 3. गलत 4. सही 5. सही 6. सही

15.8 पठनीय पुस्तकें

1. पाश्चात्य काव्य शास्त्र- देवेन्द्रनाथ शर्मा, नेशनल पेपरबैक्स, 2023
2. पाश्चात्य साहित्य चिंतन- प्रो. निर्मला जैन, राधाकृष्ण प्रकाशन, 2017
3 उदात्त के विषय में-प्रो. निर्मला जैन, वाणी प्रकाशन, दिल्ली, 2004
4 पाश्चात्य काव्य शास्त्र की परम्परा- सं. डॉ. नगेन्द्र और सावित्री सिन्हा
5 काव्य में उदात्त तत्व- डॉ. नगेन्द्र और नेमिचन्द्र जैन, राजपाल एवं संस, दिल्ली

यथार्थवाद

रूपरेखा

16.1 उद्देश्य एवं अपेक्षित परिणाम
16.2 प्रस्तावना
16.3 यथार्थवाद
स्व-मूल्यांकन (क)
स्व-मूल्यांकन (ख)
स्व-मूल्यांकन (ग)
16.4 सारांश
16.5 कठिन शब्द
16.6 अभ्यासार्थ प्रश्न
16.7 उत्तर कुंजी
16.8 पठनीय पुस्तकें

16.1 उद्देश्य एवं अपेक्षित परिणाम

प्रिय विद्यार्थियो! प्रस्तुत आलेख का उद्देश्य आपको

- यथार्थ एवं यथार्थवाद के अन्तर की जानकारी देना।
- यथार्थवाद के आरंभ के विषय में जानकारी हासिल करना।
- यथार्थवाद के रूपों से अवगत करवाना।
- प्रस्तुत पाठ का विस्तृत अध्ययन करने के पश्चात् आप यथार्थवाद को पूर्ण रूप से समझने में सक्षम होंगे।

16.2 प्रस्तावना:

यथार्थ एक ऐसा तत्व है जिसका अर्थ सत्य और वास्तविकता से जोड़ा जा सकता है। जिसका स्थान कला में निश्चित है यह चिरकाल से साहित्य में समाहित होकर हमें अतीत की परिस्थितियों की जानकारी देता है। यथार्थ के बारे में शिव कुमार कहते हैं- ''कला के अन्तर्गत स्थान पाने वाला यथार्थ, बाह्य यथार्थ से विशिष्ट होते हुए भी अंततः उसी का अविछिन्न अंग है।'' (शिव कुमार मिश्र, यथार्थवाद, पृ. 3) यथार्थवाद का सम्बन्ध आधुनिक विचारधारा से है जिसने अलौकिकता को छोड़ इहलौकिक अर्थात्

वस्तुगत यथार्थ को विशेष रूप से चुना। भौतिकता एक विशेष गुण होने के कारण इसे 'भौतिक यथार्थवाद' भी कहा जाता है।

यथार्थवाद और आदर्शवाद दो विरोधी विचारधाराएं हैं। जो वस्तु जैसी है, उसका उसी रूप में वर्णन करना 'यथार्थवाद' है जबकि आदर्श के अनुरूप वस्तु को मनोनुकूल रूप में प्रस्तुत करना आदर्शवाद है। यथार्थवादिता का विश्वास है कि:

1. यथार्थ को देखा-परखा जा सकता है तथा उसका निरपेक्ष एवं तटस्थ अध्ययन किया जा सकता है।
2. हमारे चारों ओर जो यथार्थ जगत् है, उसमें परिवर्तन करने या विकृत करके प्रस्तुत करने का हमें कोई अधिकार नहीं है।
3. बुद्धि का प्राप्त ज्ञान ही मनुष्य की सभी प्रतिक्रियाओं में सहायक होता है।

16.3 यर्थाथवाद:

यूरोप में 'यथार्थवाद' का आरंभ एक प्रकार से 'स्वच्छन्दतावाद' के विरोध में हुआ था। स्वच्छन्दतावादी रचनाकार वास्तविक जगत् से परे कल्पनालोक में विचरण करते थे। उनकी रचनाओं में आलौकिक तत्व अधिक होते थे। उनके पात्र महिमामंडित होते थे। उनके कार्यकलाप अविश्वसनीय, अवास्तविक और स्वच्छन्द होते थे। इसकी प्रतिक्रिया में इस भौतिक जगत् के वास्तविक जीवन के चित्रण की प्रवृत्ति ने 'यथार्थवाद' को जन्म दिया।

डार्विन का विकासवाद, मार्क्स का वर्ग संघर्ष सिद्धान्त एवं फ्रायड का मनोविश्लेषणवाद वस्तुतः यथार्थवाद की पृष्ठभूमि में माने जा सकते हैं। यथार्थवादियों ने साहित्य को आदर्श रूप में प्रस्तुत किए जाने का विरोध किया और जो जैसा है, उसका वैसा ही चित्रण करने पर बल दिया।

ऐसा माना जाता है कि यथार्थवादी कला का आरम्भ 1856 ई. में फ्रेंच लेखक फ्लावेयर (Flaubert) की प्रसिद्ध रचना 'मादाम बावेरी' के प्रकाशन से हुआ। यद्यपि फ्लावेयर स्वयं अपनी रचना पर ऐसा कोई लेबुल लगाने के पक्ष में नहीं थे। इसके बाद बाल्जाक (Balzac) और जोला (Zola) ने इस आन्दोलन को आगे बढ़ाया। इन लोगों ने जिस 'यथार्थवाद' को प्रश्रय दिया वह 'प्रकृतवाद' कहा गया है। ये लोग प्रकृति के सत्य को विशेष महत्व देते थे। इसलिए इन लोगों ने मानव-जीवन को भी उसकी नग्न वास्तविकता में चित्रित किया। उन्नीसवीं शती के अंतिम चरण में फ्रांस में ही 'यथार्थवाद' की इस प्रवृत्ति का विरोध होने लगा। इसके बाद यथार्थवादी कला का विकास रूस में लक्षित होता है। दास्तोवस्की (Dostoevsky) के प्रथम उपन्यास 'पुअर पिपुल' को यथार्थवादी उपन्यास

माना गया है। इसके बाद रूस में ही टालस्टाय (Tolstoy)] 'गेगोल' (Gogal) और गोर्की (Gorky) ने यथार्थवादी कला को विकसित किया। गोर्की की कृतियों में 'यथार्थवाद' का वह रूप लक्षित हुआ जिसे 'सामाजिक यथार्थवाद' कहा जाता है। जोला, विक्टर ह्यूगो की रचनाएं भी 'यथार्थवादी' हैं।

यथार्थवाद संसार में व्याप्त कलुष और मलिनता पर पर्दा नहीं डालता, अपितु उसका यथार्थ चित्रण करता है। वह मानसिक सत्य को यथार्थ नहीं मानता, अपितु जगत में व्याप्त कुण्ठा, निराशा, वर्जना, अनास्था का ही यथार्थ चित्रण करने में विश्वास करता है।

'यथार्थवाद' के अनेक रूप हैं। प्रकृतवादी यथार्थ और सामाजिक यथार्थ के साथ ही 'अतियथार्थवाद' (Suffealis) की चर्चा की जाती है। अतियथार्थ, प्रकृतवादी यथार्थ की बाह्य और सतही वास्तविकता की प्रतिक्रिया में आया था। यह आन्दोलन भी फ्रांस में ही अधिक लोकप्रिय हुआ। ऐसा समझा जाता है कि इस आन्दोलन का सूत्रपात चार्ल्स बोदेलेयर (1821.1876 ई.) ने किया था किन्तु द्वितीय महायुद्ध के बाद इसे विशेष महत्त्व प्राप्त हुआ। 'अतियथार्थवाद' मनोजगत् की विकृतियों को चित्रित करता है। इसे फ्रांस के प्रसिद्ध कवि आंद्रे ब्रेतन (Andre Breton) ने पूरा समर्थन दिया। उसने 1924 ई. में इसका मैनीफेस्टो प्रस्तुत किया। यह आन्दोलन कविता के साथ ही चित्रकला के क्षेत्र में भी लोकप्रिय हुआ। 'अतियथार्थवादी' यह मानते हैं कि वास्तविक यथार्थ वह है जो अवचेतन में विद्यमान होता है। इस पर नैतिक मूल्यों का कोई दबाव नहीं होता। स्वप्नावस्था में इसे लक्षित किया जा सकता है। इसे व्यक्त करने के लिए चेतना-प्रवाह शैली (Stream of cousciousness) का प्रयोग किया जाता है। हिन्दी-साहित्य में 'अतियथार्थवाद' का विशेष प्रभाव नहीं पड़ा है।

हिन्दी-साहित्य में 'यथार्थवाद' तो नहीं किन्तु यथार्थ-चित्रण का आरंभ भारतेन्दु के नाटकों से ही लक्षित किया जाता है किन्तु आगे चलकर 'प्रगतिवादी' और 'प्रयोगवादी' काव्यान्दोलनों में इसका पूर्ण विकास लक्षित होता है। प्रेमचन्द के उपन्यासों में भी यथार्थवादी कला का रूप क्रमशः निखरता गया है। उसके बाद उपेन्द्रनाथ 'अश्क' और यशपाल के उपन्यासों में भी इसका रंग और गहरा हुआ है। इलाचन्द्र जोशी के उपन्यासों में मनोवैज्ञानिक यथार्थ का प्रभाव लक्षित किया जा सकता है। छायावादी युग के कवियों में 'निराला' की रचनाओं में 'सामाजिक यथार्थ' के अत्यन्त प्रभावी चित्र देखे जा सकते हैं। प्रगतिवादी काव्यधारा में यथार्थ पर विशेष बल दिया गया है। प्रगतिवादी काव्य अपने श्रेष्ठ और सशक्त रूप में 'यथार्थवादी' काव्य है। यह प्रवृत्ति 'प्रयोगवाद' में भी कुछ विशिष्ट बौद्धिक जटिलता के साथ बनी हुई है और इसका अविच्छिन्न प्रवाह 'नयी कविता' तथा उससे जुड़े हुए परवर्ती काव्यान्दोलनों में भी देखा जा सकता है। इस संदर्भ में डॉ.

रामस्वरूप चतुर्वेदी का निम्नलिखित कथन ध्यान देने योग्य है - "प्रगतिवाद के उपरान्त प्रयोगवाद को भी यथार्थवाद का दाय मिला। एक प्रकार से प्रयोगवाद में यथार्थवादी प्रवृत्ति कुछ और गहरी हुई। जीवन की तुच्छ से तुच्छ परिस्थिति को भी साहित्य में चित्रित करने योग्य समझा गया। द्वितीय महायुद्ध ने यथार्थवाद को साहित्य में और अधिक ग्राह्य बनाया और इस प्रकार 'प्रयोगवाद' ने इस मौलिक प्रवृत्ति को अपनी आधारशिला के रूप में स्वीकार किया।" (हिन्दी साहित्यकोश, भाग 1, पृ. 511)

हिन्दी के प्रमुख उपन्यासकार मुंशी प्रेमचन्द के अनुसार, "यथार्थवाद चरित्रों को पाठक के सामने उनके यथार्थ नग्न रूप में रख देता है। यथार्थवादी रचनाकार का उद्देश्य यह नहीं होता कि वह अपनी रचनाओं में नेकी का फल नेक और बदी का फल बद दिखाए। चूंकि समाज में इसके विपरीत उदाहरण मिलते हैं इसलिए यथार्थवादी अपनी रचना में भी इस सच्चाई को उजागर करता है।"

वस्तुतः 'यथार्थवाद' साहित्य की एक व्यापक प्रवृत्ति है। इसे सीमित दायरे में बांधा नहीं जा सकता। इसीलिए इसकी न तो कोई नपी-तुली परिभाषा दी जा सकती है, न इसका कोई एक निश्चित स्वरूप ही निर्धारित किया जा सकता है। इसके सम्बन्ध में निश्चयपूर्वक इतना ही कहा जा सकता है कि यह अलौकिक, काल्पनिक, और संभाव्य अवधारणा-मूलक जीवन-स्थितियों, पात्रों और घटनाओं का रंगीन चित्र न होकर सहज, परिचित, वास्तविक एवं नित्यप्रति के जीवन में अनुभूत होने वाली स्थितियों और घटनाओं का चित्रण होता है। जो कुछ हमारे दैनन्दिन जीवन में हमारे आस-पास नित्यप्रति घटित होता है, वही हमारा यथार्थ है। यों तो जिसे हम आदर्श कहते हैं, वह भी अयथार्थ नहीं होता फर्क इतना ही है कि वह कभी-कभी और कहीं-कहीं बहुत सीमित रूप में घटित होता है। यहाँ यह भी ध्यान देने की बात है कि यथार्थ-चित्रण की प्रवृत्ति रोमैंटिक साहित्य की प्रतिक्रिया के रूप में प्रचलित एवं ग्राह्य हुई। इसलिए इसकी मूल प्रकृति गैर-रोमैंटिक होती है। नयी-कविता के यथार्थ को जटिल इसलिए कहा गया है कि उसका मूल स्वर गैर-रोमैंटिक था। यथार्थवाद में न तो गलदश्रु भावुकता होती है, न इन्द्रधनुषी कल्पना। इसमें धरती का ठोस और खुरदुरा जीवन ही उभर कर सामने आता है। आवश्यक नहीं है कि हम यथार्थ के नाम पर कुत्सित, अश्लील, और वीभत्स जीवन-स्थितियों का ही चित्रण करें। यह भी आवश्यक नहीं है कि हम यथार्थ को कुछ अविचल नियमों में बाँधकर संकीर्ण और यांत्रिक बना दें। वाद-मुक्त ठोस वास्तविकता का चित्रण ही साहित्य में यथार्थ के रूप में स्वीकार्य है।

राल्फ फाक्स का मत है कि सच्चा यथार्थवादी बाह्य जगत् के चित्रण के साथ-साथ मानव की मानसिक वृत्तियों का भी उद्घाटन करता है। वह आदर्श को भी साथ

लेकर चलता है। बालजक आदि का दृष्टिकोण एकांगी ही है, क्योंकि उन्होंने युगीन परिवेश का घृणित रूप ही प्रस्तुत किया है। सच्चा यथार्थवादी मानव को निराशावादी नहीं अपितु आशावादी बनाता है। सम्भवतः इसी कारण प्रेमचन्द की कृतियों में आदर्शोन्मुखी यथार्थवाद का चित्रण अधिक हुआ है। यथार्थवाद उच्चतर आदर्शों की ओर प्रेरित करने वाला होना चाहिए, न कि मन को निराश एवं कुण्ठित करने वाला।

आधुनिक वैज्ञानिक दृष्टि ने 'यथार्थवाद' को प्रेरित और प्रभावित किया। वैज्ञानिकों के अनुसार यह दृश्यमान जगत् भौतिक कार्य-कारण का परिणाम है। इसकी स्थिति और गति में किसी परोक्ष और दिव्य सत्ता का कोई योगदान नहीं है। इस मान्यता ने साहित्य के क्षेत्र को भी प्रभावित किया।

- **स्व-मूल्यांकन (क)**

रिक्त स्थान

प्रिय विद्यार्थियो! इस पाठ में अभी तक प्राप्त ज्ञान का मूल्यांकन आप निम्नलिखित रिक्त स्थान भरकर करें।

1. यूरोप में यथार्थवाद का आरम्भ एक प्रकार से ------- के विरोध में हुआ था।
2. स्वच्छन्दतावादी रचनाकार जगत से परे ------- में विचरण करते थे।
3. उनकी रचनाओं में ------- तत्व अधिक होते थे।
4. डार्विन का ------- मार्क्स का ------- एवं फ्रायड का ------- वस्तुतः यथार्थवाद की पृष्ठभूमि में माने जा सकते हैं।
5. ------- ने साहित्य को आदर्श रूप में प्रस्तुत किए जाने का विरोध किया और जैसा है उसका वैसा ही चित्रण करने पर बल दिया।

- **स्व-मूल्यांकन (ख)**

बहुविकल्पीय प्रश्न

प्रिय विद्यार्थियो! इस पाठ से आपको यथार्थवाद का जो ज्ञान प्राप्त हुआ है उसका स्व-मूल्यांकन आप निम्नलिखित बहुविकल्पीय प्रश्नों द्वारा करें।

1) यथार्थवादी कला का आरम्भ कब से माना जाता है?

क) 1856 ई. ख) 1938 ई.

ग) 1945 ई. घ) 1445 ई.

2) यथार्थवादी कला का आरम्भ किस लेखक से माना जाता है?

क) रूसी लेखक ख) फ्रेंच लेखक

ग) अमेरिकी लेखक घ) उपर्युक्त सभी

3) फ्रेंच लेखक फ्लावेयर के बाद किसने इस आंदोलन को आगे बढ़ाया।

क) बाल्जाक(Balzac) ख) जोला (ज़ोला)

ग) दोनों घ) दोनों में से कोई नहीं

4) बाल्जाक और जोला ने जिस आन्दोलन को बढ़ाया उसे क्या नाम दिया?

क) यथार्थवाद ख) आदर्शवाद

ग) प्रकृतवाद घ) उपर्युक्त सभी

5) किस आन्दोलन में प्रकृति के सत्य को विशेष महत्व देते थे।

क) यथार्थवाद ख) आदर्शवाद

ग) प्रकृतवाद घ) उपर्युक्त सभी

6) किसके प्रथम उपन्यास 'पुअर पिपल' को यथार्थवादी उपन्यास माना गया है?

क) दोस्तोवस्की (Dostovsky) ख) टालस्टाय (TOLSTOY)

ग) गेगोल (Gogol) घ) गोर्की (Gorky)

7) रूस में किसने यथार्थवादी कला को विकसित किया?

क) गेगोल (Gogol) ख) गोर्की (Gorky)

ग) टालस्टाय (TOLSTOY) घ) उपर्युक्त सभी

8) कौन सा यथार्थवाद प्रकृतिवादी यथार्थ की बाह्य और सतही वास्तविकता की प्रतिक्रिया में आया था?

क) अतियथार्थवाद ख) सामाजिक यथार्थवाद

ग) प्रकृतवादी यथार्थ घ) उपर्युक्त सभी

9) अतियथार्थवाद कहां अधिक लोकप्रिय हुआ?

क) रूस ख) फ्रांस

ग) लंदन घ) जापान

10) फ्रांस के प्रसिद्ध कवि आंद्रे ब्रेतन ने अतियथार्थवाद का मैनीफेस्टो कब प्रस्तुत किया?

क) 1922 ख) 1923

ग) 1924 घ) 1925

- **स्व-मूल्यांकन (ग)**

सही या गलत

प्रिय विद्‌यार्थियो! निम्नलिखित प्रश्नों के उत्तर सही या गलत चिन्ह देकर आप अभी तक प्राप्त ज्ञान का मूल्यांकन करें।

1. प्रेमचन्द के उपन्यासों में भी यथार्थवादी कला का रूप क्रमशः निखरता गया है। ( )
2. इलाचन्द्र जोशी के उपन्यासों में मनोवैज्ञानिक यथार्थ का प्रभाव लक्षित किया जा सकता है। ( )
3. छायावादी युग के कवियों में निराला की रचनाओं में 'सामाजिक यथार्थ के अत्यन्त प्रभावी चित्र नहीं देखे जा सकते हैं। ( )
4. रामस्वरूप चतुर्वेदी के अनुसार प्रगतिवाद के उपरान्त प्रयोगवाद को भी यथार्थवाद का छाप मिला। ( )
5. राल्फ फाम्स का मत है कि सच्चा यथार्थवादी बाह्य जगत के चित्रण के साथ-साथ मानव की मानसिक वृत्तियों का भी उद्‌घाटन करता है। ( )
6. यथार्थवाद उच्चतर आदर्शों की ओर प्रेरित करने वाला होना चाहिए, न कि मन को निराश एवं कुण्ठित करने वाला। ( )

16.4 सारांश :

यथार्थवाद यथार्थ चित्रण पर बल देता है लेकिन इसमें बाहरी यथार्थ चित्रण के साथ लेखक की अनुभूति भी शामिल है क्योंकि अनुकरण के साथ लेखक की स्वः अनुभूति भी रचना में शामिल है और यथार्थ आन्तरिक अर्थात भावजगत और वस्तुजगत दोनों हैं। इस प्रकार यथार्थ और यथार्थवाद दोनों में अन्तर है। यथार्थ में अनुभवों, भाव विचारों की स्वतन्त्र सत्ता है। यह साहित्य में वास्तविकता का रूप लिए हुए विद्‌यमान है जबकि यथार्थवाद इन्हें बाह्य जगत के अनुकरण के साथ जोड़कर देखता है। यथार्थवाद, यथार्थ परक साहित्य पर विशेष बल देता है। यह एक विशेष विचारधारा है।

16.5 कठिन शब्द

1. चिरकाल = बहुत समय या दीर्घकाल
2. इहलौकिक = इस संसार या दुनिया का।
3. वर्जना = निषेध, मनाही
4. अविच्छिन्न = अटूट, अखंडित
5. गलदश्रु = रोता हुआ, भावुक
6. कुण्ठा = हताशा, जटिल

16.6 उत्तर कुंजी

स्व-मूल्यांकन (क)

1. स्वच्छन्दतावाद
2. कल्पनालोक
3. आलौकिक
4. विकासवाद, वर्ग, संघर्ष, मनोविश्लेषणवाद
5. यथार्थवादियों

स्व-मूल्यांकन (ख)

1.	1856 ई.	2.	फ्रेंच लेखक
3.	दोनों	4.	प्रकृतवाद
5.	प्रकृतवाद	6.	दोस्तोवस्की
7.	उपर्युक्त सभी	8.	अतियथार्थवाद
9.	फ्रांस	10.	1924

स्व-मूल्यांकन (ग)

1.	सही	2.	सही
3.	गलत	4.	सही
5.	सही	6.	सही

16.7 अभ्यासार्थ प्रश्न:

1. यथार्थवाद से आप क्या समझते हैं ? इसके आरंभ पर प्रकाश डालिए ।

2. यथार्थवाद के रूपों को स्पष्ट करें ।

3. अतियथार्थवाद पर एक संक्षिप्त टिप्पणी लिखिए ।

4. सामाजिक यथार्थवाद से आप क्या समझते हैं। स्पष्ट कीजिए।

16.8 पठनीय पुस्तकें

1. पाश्चात्य काव्य शास्त्र- देवेन्द्रनाथ शर्मा, नेशनल पेपरबैक्स, 2023
2. पाश्चात्य साहित्य चिंतन, प्रो. निर्मला जैन, राधाकृष्ण प्रकाशन, 2017
3. उदात्त के विषय में, -प्रो. निर्मला जैन, वाणी प्रकाशन, दिल्ली, 2004
4. पाश्चात्य काव्य शास्त्र की परम्परा- सं. डॉ. नगेन्द्र और सावित्री सिन्हा
5. काव्य में उदात्त तत्व- डॉ. नगेन्द्र और नेमिचन्द्र जैन, राजपाल एवं संस, दिल्ली
7. हिंदी उपन्यास और यथार्थवाद -डॉ. त्रिभुवन सिंह
8. यथार्थवाद- डॉ. त्रिभुवन सिंह
9. पाश्चात्य काव्य शास्त्र-सिद्धांत और वाद - (सं.) डॉ. नगेन्द्र

उत्तर आधुनिकता

रूपरेखा

17.1 उद्देश्य एवं अपेक्षित परिणाम
17.2 प्रस्तावना
17.3 उत्तर आधुनिकता
- स्व-मूल्यांकन (क)
  रिक्त स्थान
- स्व-मूल्यांकन (ख)
  बहुविकल्पीय प्रश्न
- स्व-मूल्यांकन (ग)
  सही या गलत

17.4 सारांश
17.5 कठिन शब्द
17.6 अभ्यासार्थ प्रश्न
17.7 उत्तर कुंजी
17.8 पठनीय पुस्तकें

17.1 उद्देश्य एवं अपेक्षित परिणाम

- प्रिय विद्यार्थियो! प्रस्तुत आलेख का उद्देश्य आपको
- उत्तर आधुनिकता के विषय की जानकारी देना।
- उत्तर आधुनिकता के संदर्भ में साहित्य की मृत्यु, लेखक की मृत्यु और विचार से अवगत करवाना।
- प्रस्तुत अध्याय के अध्ययन के पश्चात् आप उत्तर आधुनिकता के संदर्भ में साहित्य की मृत्यु, लेखक की मृत्यु और विचार की मृत्यु को पूर्ण रूप से समझने में सक्षम होंगे।

17.2 प्रस्तावना:

उत्तर आधुनिकता शब्द का प्रथमत: प्रयोग 1926 में बर्नाड इडिंग्सबेल की पुस्तक "Postmodernism and other Essays" में हुआ है।

उसके बाद यह शब्द 1948 ई॰ के बाद से नृत्य, शैली चित्रकला, भवन निर्माण, फिल्म निर्माण, राजनीति, समाजशास्त्र, कविता, कहानी, संगीत आदि सब विधाओं में तरह तरह से प्रयुक्त हुआ है। उत्तर आधुनिकता के तत्वों को वादले या मलार्मे की कविताओं में तलाषा गया। सेमुअल बेकट के नाटकों और उपन्यासों में इसकी झलक देखी गई। मार्टिन हाइडेगा और सार्ग के चिन्तन में अंकित किया गया। चित्रकला में दादावादियों और अतियथार्थवादियों के अंतर्गत रखा गया। कहने का अभिप्राय यह है कि आधुनिकतावादी सोच और मानसिकता के विकास के उपरान्त विकसित हुई नयी सोच और मानसिकता के रूप में उत्तर- आधुनिकतावाद शब्द का उपयोग होने लगा।

बीसवीं शताब्दी के उत्तरार्ध (1950 ई॰ के बाद) उत्तर औद्योगिक क्रान्ति का अद्भुत युग है जिसमें समाज, संस्कृति, राजनीति, कला, साहित्य, दर्शन, संगीत, अर्थव्यवस्था और पूरे मानव चिंतन में जो परिवर्तन चक्र तीव्र गति से घूमा है, उस स्थिति परिस्थिति की ओर ध्यान दिलाने वाला नाम है उत्तर आधुनिकतावाद परन्तु इसे परिभाषा में नहीं बांधा जा सकता।

तकनीकी क्रान्ति के भीतर से उपजे परिवर्तन की गति इतनी तीव्र है कि उसने समाज, संस्कृति इतिहास के चिंतन को पूरी तरह रूपांतरित कर दिया है, जिसमें जीवन यापन के सभी पुराने पैटर्न पूरी तरह से चरमरा गए हैं। एक ग्लोबल पावर स्ट्रकचर हमारी अभ्यस्त जीवन शैलियों को पूरी तरह बदल रहा है।

कृषि क्रान्ति के बाद औद्योगिक क्रान्ति आई और फिर 1950 ई॰ के आसपास तीसरी क्रान्ति 'टैक्नोलोजिकल एण्ड सोशल चेंज' - आई।

इस तीसरी क्रान्ति में ज्ञान, धन, हिंसा तीनों से मिलकर एक नया विश्व साम्राज्यवाद खड़ा हो रहा है जो तीसरी दुनिया के देशों को अपना स्थायी उपनिवेश बना रहा है प्रचार माध्यमों द्वारा बाजारवाद पैदा किया जा रहा है। यह बाजारवाद मानव को ठगने और पागलपन का रूप धारण करता जा रहा है। विश्व बाजारवाद की नयी ताकतों ने अपनी योजनाओं और पैटर्नों, तौर तरीकों द्वारा उपभोगवादी संस्कृति पैदा कर दी है जिसके कारण पुरानी सभ्यता संस्कृति के मूल्य अपर्याप्त घोषित किए जा रहे हैं और उसके स्थान पर नई सभ्यता संस्कृति का तंत्र जाल बिछाया जा रहा है। इस नए ग्लोबल पावर स्टूगल की अगुवाई में समाज में तकनीकी क्रान्ति द्वारा हर पुराने विचार को उत्तर (पोस्ट) घोषित किया जा रहा है ताकि नया तकनीकी शैतान अपना तंत्र आरंभ कर सके।

पश्चिम ने उत्तर आधुनिकतावाद की आड़ में "न्युथियरी आफ सोशल चेंज" तैयार की है जिसमें क्रय-विक्रय की राजनीति है। द्वितीय विश्वयुद्ध के बाद एक नव साम्राज्यवादी का एक नव्य सांस्कृतिक राजनीतिक साम्राज्यवाद के रूप में आगमन हो

गया जिसने सैक्स, राजनीति और बाजार का चेहरा बदल दिया जिससे जीवन के सभी क्षत्रों में ज्ञान, धन और हिंसा के उपयोग से नवीन शक्तिवाद का जन्म हो गया।

17.3 उत्तर आधुनिकता

उत्तर आधुनिकतावाद की एक महत्त्वपूर्ण विशेषता है- बहुलतावाद एक नव्य संस्कृतिवाद। यह विशेषता अभिजात्यवादी वर्चस्व के अधिनायकवादी तेज को चुनौती देती है और एकलवाद के विरुद्ध बहुलतावाद का समर्थन करती है। यह बहुलतावाद नयी सूचना, संचार क्रान्ति के सहारे पुराने केन्द्रों यानी केन्द्रवाद को सभी क्षेत्र में तोड़ रहा है और समूचे विश्व को बाजार बना रहा है। अब व्यक्ति, समूह अपने सामान को विश्व के किसी भी कोने में बेच रहा है और किसी भी कोने से खरीद रहा है। कंप्यूटर के जरिए वह अपने सामान का प्रदर्शन करके अपनी दुकान चला रहा है। सामान की तरह ही कला, संस्कृति, सभ्यता आदि का क्रय-विक्रय हो रहा है और इससे हमारी अभ्यस्त जीवन , हमारे पुराने सोच-विचार, हमारा पुराना व्यक्ति-मानस बदल रहा है। कहा जा सकता है पुराना व्यक्ति मर गया है। इस नये तंत्र में शब्दों के पुराने अर्थ मर गए है। जब पुराना व्यक्ति यानी उसके सोच-विचार, उनका दर्शन, संस्कृति, समाज की आदर्श परिकल्पना जो उसे व्यक्ति बनाती है, मर चुका घोषित हो चुकी है। पुराने विचार की भी मृत्यु हो चुकी है क्योंकि नये स्थापित हो रहे तंत्र में पुराने विचार, पुराने अर्थ अप्रासंगिक हो गए हैं। नये पैदा हो रहे तंत्र में पुराना कुछ भी, व्यतीत या मरा हुआ, अप्रासंगिक घोषित हो रहा है।

प्रथम विश्वयुद्ध के उपरान्त इंग्लैंड आदि पश्चिमी देशों में परिस्थितियाँ बदलीं जिससे एक नए तंत्र का उदय होने लगा जिसमें व्यक्ति स्व-रक्षा और स्व-प्रतिभा, स्व वर्चस्व के लिए सचेत हुआ इससे पुरानी सभ्यता और संस्कृति व्यतीत उत्तर होने लगी और व्यक्तिवाद को महत्त्व मिलने लगा, पुरानी सभी सामाजिक परम्पराओं, मर्यादाओं और आस्थाओं को व्यतीत घोषित किया जाने लगा यानि व्यक्ति के व्यक्तिवादी सोच-विचार के समक्ष पुराने कृषि काल, विचार, जीवन मूल्यों संस्थाओं को अप्रासंगिक घोषित करने लगा, इस नये औद्यागिक क्रान्ति के बाद पैदा हुए तंत्र में पुराने कृषिकाल के तंत्र का व्यक्ति मर गया, साहित्य मर गया, विचार मर गया और साहित्य, सभ्यता, संस्कृति चित्र कला में व्यक्ति महत्वपूर्ण हो गया बल्कि नया व्यक्ति जीवित हो गया। इससे व्यक्ति आधारित अर्थात् व्यक्तिवादी कला आंदोलनों काव्य आंदोलनों (नव क्लासिकवाद, स्वछन्दतावाद, प्रकृतवाद, यथार्थवाद, अति यथार्थवाद प्रतीकवाद, बिम्बवाद आदि अनेक आंदोलन चले) में व्यक्ति और उसकी व्यक्तिवादी चिंताएं और आकांक्षाएं और महत्वपूर्ण हो गए, अपनी इन नयी कल्पनाओं और सपनों से उसने नया शब्द शिल्प गढ़ा। उस

आधुनिकतावादी व्यक्तिवाद ने अपने से पहले के सामंतवादी सोच-विचार और सामंतवादी तंत्र के प्रतीकों को धर्म को मर्यादाओं को, वर्जनाओं को अतीत, व्यतीत, बीता हुआ (पोस्ट) घोषित कर दिया और औद्योगिक क्रान्ति के कारण देष विदेष में आधुनिकीकरण होता चला गया जिसमें सड़कों का जाल बिछा रेलगाड़ियों से आने जाने के साधन काम में आने लगे, वाणिज्य व्यापार की वस्तुएं एक स्थान से दूजे स्थान मण्डियों में जाने लगी परन्तु यह सारा व्यापार राष्ट्र, देश क्षेत्र में क्षेत्रीय तंत्र से संचालित होता था, उस तंत्र के अपने नियम कानून थे जिसके अन्तर्गत लोगों को व्यापार करने की छूट दी जाती थी, यह व्यापार राज्य सरकारों से नियंत्रित था। राज्य स्तर की व्यापारिक संधियों के अन्तर्गत होता था। ऐसा व्यापार आदि सामंत काल यानी कृषिकाल में भी होता था परन्तु कृषिकाल में सामन्ती समाज धार्मिक समाज था अन्य अनेक प्रकार की संस्थाएं और गिल्डों के नियंत्रण में होता था, उस काल में व्यक्ति नहीं समाज, संस्था, धर्म, जाति, गोत्र का महत्व था। व्यक्ति इन्हीं संस्थाओं के अधीन था और इन्हीं संस्थाओं के तंत्र उस तंत्र द्वारा निर्धारित शब्दों के अर्थ के अन्तर्गत बंधा हुआ काम करता जीवन जीता था। औद्योगिक क्रान्ति के पैदा हुए व्यक्तिवाद ने उस पुराने तंत्र को व्यतीत मरा हुआ घोषित किया जीवन के पुराने तौर तरीके इस नये पैदा हुए व्यक्ति यानि व्यक्तिवादी व्यक्ति ने अतीत हो चुके, मर चुके घोषित कर दिया और एक नयाआधुनिकतावादी सोच विचार मानसिकता पैदा हुई। व्यक्ति के मनोविश्लेषण और व्यक्ति की व्यक्तिगत चिंताओं को बल मिला और व्यक्ति भी आधुनिकतावादी हो गया। इस आधुनिकतावाद में जातिभेद, वर्णभेद नसलभेद, देश देशान्तर से जुड़े विचार, मर्यादा, आदि व्यतीत पोस्ट कर चुके घोषित हो गए और व्यक्ति व्यक्ति को समान घोषित किया जाने लगा। समानता के आधार पर तंत्र बने, संविधान बने, कानून बने, व्यक्ति स्वतंत्र बनता गया। उसका निजत्व महत्वपूर्ण हो गया। कानून बनाने वाली संस्थाओं को उसके निजत्व को ध्यान में रखना जरूरी हो गया इससे सामंतवादी व्यक्ति की मृत्यु हुई, सामंतवादी साहित्य की मृत्यु हो, सामंतवादी लेखक की मृत्यु हुई और व्यक्तिवादी आधुनिकतावादी तंत्र के उदयकाल में नया व्यक्ति पैदा हुआ, नया साहित्य जीवित हो उठा नया विचार जीवित हुआ नया साहित्य शास्त्र, कला शास्त्र तथा शिल्प शास्त्र, वास्तु शास्त्र पैदा हो।

- **स्व-मूल्यांकन (क)**

रिक्त स्थान

प्रिय विद्यार्थियो! इस पाठ में अभी तक प्राप्त ज्ञान का मूल्यांकन आप निम्नलिखित रिक्त स्थान भरकर करें।

1. उत्तर आधुनिकतावाद की एक महत्वपूर्ण विशेषता है ------- एवं नव्य संस्कृतिवाद।
2. यह विशेषता अभिजात्यवादी वर्चस्व के ------- तेज को चुनौती देती और एकलवाद के विरुद्ध ------- का समर्थन करती है।
3. यह बहुलतावाद नयी सूचना, ------- के सहारे पुराने केन्द्रों यानी केन्द्रवाद को सभी क्षेत्र में तोड़ रहा है और समूचे विश्व को बाजार बना रहा है।
4. सामाज की तरह ही कला, -------, सभ्यता आदि का क्रय-विक्रय हो रहा है।
5. हमारी अध्यस्त जीवन शैलियां, हमारे पुराने सोच-विचार, हमारा पुराना ------- बदल रहा है।

- **स्व-मूल्यांकन (ख)**

बहुविकल्पीय प्रश्न

प्रिय विद्यार्थियो ! इस पाठ से आपको अभी तक जो ज्ञान प्राप्त हुआ उसका आप निम्नलिखित बहुविकल्पीय प्रश्नों द्वारा करें।

1) प्रथम विश्वयुद्ध के उपरान्त किन देशों में परिस्थितियाँ बदलीं?

    क) इंग्लैंड   ख) पश्चिमी देश
    ग) दोनों   घ) दोनों में से कोई नहीं

2) नए तंत्र के उदय के साथ व्यक्ति किसके लिए सचेत हुआ?

    क) स्व-रक्षा   ख) स्व-प्रतिभा
    ग) स्व-वर्चस्व   घ) उपर्युक्त सभी

3) व्यक्ति आधारित अर्थात् व्यक्तिवादी कला आंदोलनों ने कौन से काव्य आन्दोलनों को जन्म दिया?

    क) स्वच्छन्दतावाद   ख) प्रकृतवाद
    ग) यथार्थवाद   घ) उपर्युक्त सभी

4) इन नवीन काव्य आन्दोलनों के कारण व्यक्ति के लिए क्या महत्वपूर्ण हो गया?

    क) व्यक्तिवादी चिंताएं   ख) आकांक्षाएं
    ग) दोनों   घ) दोनों में से कोई नहीं

5) किस क्रान्ति के कारण देश विदेश में आधुनिकीकरण होता चला गया?

    क) औद्योगिक क्रान्ति   ख) फ्रांसीसी क्रांति
    ग) रूसी क्रांति   घ) उपर्युक्त सभी

- **स्व-मूल्यांकन (ग)**

सही या गलत

प्रिय विद्यार्थियो! निम्नलिखित प्रश्नों के उत्तर सही या गलत चिन्ह द्वारा देकर अभी तक प्राप्त ज्ञान का स्व-मूल्यांकन करें।

1. औद्योगिक क्रान्ति के पैदा हुए व्यक्तिवाद ने उस पुराने तंत्र को व्यतीत मरा हुआ घोषित किया। ( )
2. आधुनिकतावादी सोच विचार मानसिकता के कारण व्यक्ति के मनोविश्लेषण और व्यक्ति की व्यक्तिगत चिंताओं को बल मिल और व्यक्ति भी आधुनिकतावादी हो गया। ( )
3. समानता के आधार पर तंत्र बने, संविधान को, कानून बने, व्यक्ति स्वतंत्र नहीं बनता गया। ( )
4. समानता के आधार पर बने कानून द्वारा व्यक्ति स्वतंत्र बनता गया। ( )
5. स्वतंत्रता के कारण व्यक्ति का निजत्व महत्वपूर्ण हो गया। ( )

17.4 सारांश

उत्तर आधुनिकतावाद में यह औद्योगिककालीन, आधुनिकतावाद का साहित्य, व्यक्ति, विचार करने लगा, मृत घोषित होने लगा उत्तर घोषित हाने लगा और तकनीकी सूचना तंत्र में हुए सामाजिक परिवर्तन में बहुलतावाद (भूमण्डलीकृत बाजारवाद में भूमण्डलीकृत बाजारवाद ही उत्तरआधुनिकतावाद है) दिन-प्रति दिन बढ़ने लगा। स्काई शास्त्र के जरिए, क्रैडिट कार्ड के जरिए चीजे खरीदी बेची जाने लगी, क्षेत्रीय तंत्रों का देष के राज्यों और राज्यतंत्रों से लाईसैंस लेने की जरूरतें खत्म हो गई, समूचा भूमण्डल कला बाज़ार मुक्त दावत के लिए बाजार मिल गया अब जो उत्तर आधुनिकतावाद यानी भूमण्डलीकृत बाजारवाद आरम्भ हुआ है इसमें पुराना व्यक्ति मर रहा है, पुराना साहित्य, साहित्य शास्त्र, कला शास्त्र, विचार और भिन्न-भिन्न जीवन प्रणालियों में जीया जाने वाला जीवन तथा वह पुराना व्यक्ति मर रहा है बल्कि कहना चाहिए कि विकसित देशों में तो ये सभी मर ही चुके हैं और उन देशों में चारों और अराजकता है। कला, साहित्य, व्यक्ति और विचार सभी कुछ अराजक हो उठा है।

17.5 कठिन शब्द:

1. अभिजात्यवाद = किसी चुनिंदा समूह के लोगों को अधिकार या प्रभाव देने का सिद्धांत।
2. वर्जना = निषेध, मनाही

3. वाणिज्य = व्यापार
4. संचालित = संचालन किया हुआ
5. निजत्व = निज का भाव, अपनापन
6. बहुलतावाद = विविधता को पहचानना

17.6 अभ्यासार्थ प्रश्न:

1. उत्तर आधुनिकता से आपका क्या अभिप्राय है। स्पष्ट करें।

2. उत्तर आधुनिकता के संदर्भ में साहित्य और लेखक की मृत्यु पर विचार व्यक्त करें।

3. उत्तर आधुनिकता की प्रमुख विशेषताएं कौन-कौन सी हैं ?

17.7 उत्तर कुंजी

स्व-मूल्यांकन (क)

1. बहुलतावाद
2. अधिनायकवाद, बहुलतावाद
3. संचार क्रांति
4. संस्कृति
5. व्यक्ति-मानस

स्व-मूल्यांकन (ख)

1. दोनों
2. उपर्युक्त सभी
3. उपर्युक्त सभी
4. दोनों
5. आद्योगिक क्रान्ति

स्व-मूल्यांकन (ग)

1. सही
2. सही
3. गलत
4. सही
5. सही

17.8 पठनीय पुस्तकें

1. पाश्चात्य काव्य शास्त्र- देवेन्द्रनाथ शर्मा, नेशनल पेपरबैक्स, 2023
2. पाश्चात्य साहित्य चिंतन-प्रो. निर्मला जैन, राधाकृष्ण प्रकाशन, 2017
3. उदात्त के विषय में, डॉ. निर्मला जैन, वाणी प्रकाशन, दिल्ली, 2004
4. पाश्चात्य काव्य शास्त्र की परम्परा- सं. डॉ. नगेन्द्र और सावित्री सिन्हा
5. काव्य में उदात्त तत्व- डॉ. नगेन्द्र और नेमिचन्द्र जैन, राजपाल एवं संस, दिल्ली
6. उत्तर आधुनिकतावाद : साहित्य और संस्कृति की नयी सोच - देवेंदर इस्सर
7. उत्तर आधुनिकता और उत्तर संरचनावाद- सुधीर पचौरी

संरचनावाद

रुपरेखा

18.1 उद्देश्य एवं अपेक्षित परिणाम

18.2 प्रस्तावना

18.3 संरचनावाद अर्थ, परिभाषा एवं स्वरुप

स्व-मूल्यांकन (क)

18.4 सरचनावाद: उदभव तथा विकास

स्व-मूल्यांकन (ख)

18.5 सरचनावाद: प्रयोग क्षेत्र

स्व-मूल्यांकन (ग)

18.6 सरचनावाद के प्रमुख निकाय

स्व-मूल्यांकन (घ)

18.7 सारांश

18.8 कठिन शब्द

18.9 अभ्यासार्थ प्रश्न

18.10 उत्तर कुंजी

18.11 पठनीय पुस्तकें

18.1 उद्देश्य एवं अपेक्षित परिणाम

प्रिय विद्यार्थियों। प्रस्तुत आलेख का उद्देश्य आपको संरचनावाद के अर्थ, परिभाषा एवं स्वरुप से अवगत करवाना।

- संरचनावाद के उद्देश्य एवं विकास से सम्बधित जानकारी देना।
- संरचनावाद के प्रमुख निकायों की जानकारी देना।
- सॉस्यूर के संरचनावादी विश्लेषण से अवगत करवाना।
- संरचनावादी विचारक एवं साहित्यिक आलोचक रोलाँ बार्थ से सम्बंधित जानकारी देना।

प्रस्तुत पाठ का विस्तृत अध्ययन करने के पश्चात् आप संरचनावाद के अर्थ, परिभाषा एवं स्वरुप, उद्भव तथा विकास को समझने के साथ ही संरचनावाद के प्रयोग क्षेत्र तथा उसके प्रमुख निकायों को समझ सकेंगे। पूर्ण रुप से समझने में सक्षम होंगे।

18.2 प्रस्तावना:

संरचना शब्द मूलतः फ्रेंच भाषा के 'स्त्रेक्तर' और लातीनी शब्द 'स्त्राऐर' से विकसित अंग्रेज़ी भाषा के 'स्ट्रक्चर' का हिन्दी अनुवाद है। हिन्दी में संरचना शब्द की व्युत्पत्ति संस्कृत के 'रच्' धातु से 'सम्' उपसर्गक 'पुच' प्रत्यय से हुई है जिसका अर्थ है- 'रचने की प्रक्रिया'। संरचना शब्द का प्रयोग-निर्माण, पद्धति,, प्रणाली, रचना, संगठन, मिश्रण, व्यवस्था, जोड़, विन्यास, साहित्य और भाषा के अर्थ में किया जाता है। साहित्य के क्षेत्र में संरचना से अभिप्राय है- कृति में निहित पूर्णता, रूपांतरण एवं स्वायतत्ता के भावों को समझना। जबकि भाषा शास्त्र में संरचना का अर्थ है भाषा की विभिन्न इकाइयों ध्वनि रूप, शब्द, वाक्य, प्रोक्ति आदि की पारस्परिक निर्भरता। नोउम चामस्की ने भाषिक संरचना के दो स्तर माने हैंः कंपीटेंस (कथ्य) और परफार्मेंस (अभिव्यक्ति)। उच्चरित रूप में भाषा की अभिव्यक्ति को चामस्की परफार्मेंस कहते हैं जबकि मस्तिष्क में रहने वाली भाषिक व्यवस्था उनके अनुसार कंपीटेंस है।

अतः संरचना एक सावयव या संगतिनिष्ठ साकल्य है। वह किसी वस्तु, व्यवस्था अथवा साहित्यिक कृति की हो सकती है। साहित्यिक संरचना की प्रकृति अमूर्त और संकल्पनात्मक होती है। संरचना के कारण ही कृति में साकल्य का गुण होता है जिससे वह विशिष्ट और अधिक अर्थ देने में समर्थ होती है। साहित्यिक संरचना निरन्तर गतिशील एवं परिवर्तनशील होने के साथ-साथ सार्वभौम और सार्थक होती है।

18.3 संरचनावाद अर्थ, परिभाषा एवं स्वरूप:

संरचनावाद दो शब्दों के सुमेल से बना हैः संरचना वाद। जिसमें संरचना का अर्थ है 'बनावट' या 'ढाँचा' तथा वाद का अर्थ है- 'तर्क' अथवा 'विचारधारा'। संरचनावाद को जानने से पूर्व संरचना का अर्थ जानना अपेक्षित है।

संरचनावाद कोई आंदोलन या अनुशासन नहीं बल्कि एक अन्वेषण पद्धति है। यह किसी क्षेत्र से संबधित सामग्री को देखने और उसके तर्कसंगत व्याख्या प्रस्तुत करने का दृष्टिकोण है।

संरचनावाद मूलतः यथार्थता-बोध का सिद्धांत है, अर्थात् यथार्थता या विश्व हमारी चेतना एवं बोध का हिस्सा किस प्रकार बनते हैं? हम वस्तुओं के सत्य को उदबुद्ध किस प्रकार करते हैं, या अर्थोत्पत्ति किन आधारों पर है? तथा अर्थोत्पत्ति की प्रक्रिया किस प्रकार संभव होती है और कैसे जारी रहती है? इस सब पर विचार किया जाता है। संरचनावाद साहित्य का विश्लेषण करते हुए सृजनात्मक कार्य करता है। यह प्रमुख रूप में भाषा विज्ञान के सिद्धांतों को साहित्य विश्लेषण के लिए प्रयुक्त करता है। इसके अंतर्गत

किसी भी कृति की भाषिक व्यवस्था या बनावट पर विचार अथवा अध्ययन किया जाता है। संरचनावाद का सारतत्व रूपवाद में निहित है जिसमें भाषा के बाहर कुछ भी अग्राह्य है। रूपवाद के अनुसार भाषा एक संघटन साकल्य है जिसके अनेक घटक या अवयव हैं। यह अवयव एक ओर अपने अगले अवयव से जुड़ा रहता है और साथ ही अवयवी से भी। 'संरचनावाद' किसी वस्तु, कृति, घटना और समाज का अध्ययन इसी अवयवी पद्धति से करता है। संरचनावाद आज की एक अत्यन्त महत्वपूर्ण और व्यापक बौद्धिक व्यवस्था पद्धति या प्रणाली है जिसकी व्याप्ति में जीवविज्ञान, अर्थशास्त्र, नृतत्वशास्त्र, साहित्य आदि को लिया जा सकता है।

मानविकी पारिभाषिक कोश के अनुसार - "संरचनावाद वह दार्शनिक प्रवृत्ति है जिसके प्रभाव से मन की व्याख्या, बनावट या गठन की धारणा के अनुसार की जाती है।"

डिक्शनरी ऑफ फिलॉसपी एंड रिलीजन के अनुसार - "संरचनावाद किसी एक अनुशासन से ही संबंध रखने वाला 'वाद' नहीं है। यह एक अंतर-अनुशासनिक दृष्टिकोण है, जो आज का दर्शन या दार्शनिक आंदोलन है, जिसकी केन्द्रित प्रवृत्ति यह है कि सब समाज तथा संस्कृतियाँ एक सांझी तथा अनिश्चित संरचना रखती हैं।''

ग्रेट सोवियत इन्साइक्लोपीडिया में संरचनावाद को पारिभाषित करते हुए कहा गया है- ''संरचनावाद, संस्कृति की जांच करता, एक चिन्ह-प्रणाली के समुच्चय की भांति उभरता है, जिसमें भाषा सबसे अधिक महत्वपूर्ण है। परन्तु इसमें विज्ञान, कला धर्म, मिथ, पुराण, कथाशास्त्र, रीति-रिवाज तथा विज्ञान को सम्मिलित किया जाता है।''

मार्क्सवादी विचारक संरचनावाद के अर्थ को स्पष्ट करते हुए कहते हैं- ''संरचनावाद अन्वेषण का एक ढंग है या किसी विज्ञान के सामान्य दर्शन की बुनावट, जिसका अनुबंधन यथार्थ के साथ है। यह घनात्मकवाद एवं अनुभववाद की स्थितियों से अधिक विशद् है। इसने अपना पथ भाषा विज्ञान से साहित्य तक बनाया है।''

रोजर फॉउलर के अनुसार - ''संरचनावाद सामयिक बौद्धिक झुकावों में से एक महत्वपूर्ण तथा प्रभावशाली झुकाव धारा है जो साहित्य विश्लेष्ण से लेकर जीवन विज्ञान जैसे ज्ञानानुशासनों का अध्ययन करने का सिद्धांत प्रदान करती है।''

जोनॉथन कल्लर - ''संरचनावाद मानवीय क्रिया-कलाप तथा उत्पादनों की वास्तविकता जानने पर आधृत है। उनमें विशिष्टताओं और रीतियों की व्यवस्था को रेखांकित किया जाना चाहिए जिनका कोई अर्थ होता है।''

डॉ॰ बच्चन सिंह के अनुसार - ''संरचनावाद एक अमूर्त एवं जटिल प्रत्यय है। भाषिकी इसका मूल आधार है। इस आधार को लेकर यह गणित, भौतिकी, रसायन, विज्ञान, जीव विज्ञान, मनोविज्ञान, नृतत्वशास्त्र, अर्थशास्त्र आदि के क्षेत्रों में पूरी तरह

प्रविष्ट हो चुका है। साहित्य की वैज्ञानिक आलोचना के लिए इसका उपयोग किया जा रहा है।''

मैनेजर पांडेय के अनुसार - ''संरचनावाद साहित्यिक कृतियों की संरचनाओं की समकालिकता की खोज करता हुआ रचना वर्तमानता पर विचार करता है।''

अतः संरचनावाद एक महत्वपूर्ण कार्य प्रणाली है जो साहित्यिक कृतियों की संरचना की खोज करती है। यह साहित्य अध्ययन की एक नवीन दृष्टि है। इसमें साहित्य की संरचना को एक व्यवस्था के रूप में ग्रहण किया जाता है तथा साहित्यिक पाठ के विश्लेष्ण-क्रम में 'संरचना' शब्द पाठ के 'रूप' एवं 'कथ्य' दोनों को अपने अर्थ में समेटने का प्रयास करता है। यह अन्यान्य ज्ञानानुशासनों में जुड़ा हुआ वाद है। इसका विश्लेषण क्षेत्र विस्तृत तथा समृद्ध है। इसके द्वारा प्रस्तुत विश्लेषण बहुआयामी होता है। यह किसी कृति में निहित अन्य ज्ञानानुशासनों के तत्वों को भी उन्मीलित करता है। साहित्य को यह भाषिक संकेतों की व्यवस्था के रूप में ग्रहण करता है। भाषिक संकेतों की व्यवस्था की अर्थवत्ता और गहराई को व्यवस्थित ढंग से प्रस्तुत करना इसका लक्ष्य है। इसके अंतर्गत साहित्य की स्वायत्तता, साकल्य और रूपांतरण के पक्षों का आंगिक और समग्र अध्ययन प्रस्तुत किया जाता है। पूर्णता, स्वायत्तता एवं स्वनिष्ठता, सार्वभौमिकता तथा गतिशीलता आदि इसकी स्वरूपगत विशिष्टताएं हैं।

- **स्व-मूल्यांकन (क)**

बहुविकल्पीय प्रश्न

प्रिय विद्यार्थियों। इस पाठ से आपको संरचनावाद अर्थ, परिभाषा एवं स्वरुप का जो ज्ञान प्राप्त हुआ है उसका रुप मूल्यांकन आप निम्नलिखित प्रश्नों द्वारा करे।

प्रश्न- संरचनावाद दो शब्दो के सुमेल से बना है।

(क) संरचना (ख) वाद

(ग) दोनो (घ) दोनों में से कोई नही

प्रश्न- संरचनावाद क्या है।

(क) आंदोलन (ख) अनुशासन

(ग) अन्वेषण पद्धति (घ) उपयुक्त सभी

प्रश्न- संरचनावाद किसका अध्ययन अतयवी पद्धति से करता है।

(क) किसी वस्तु (ख) कृति, घटना

(ग) समाज (घ) उपर्युक्त तभी

प्रश्न- किस आलोचक के अनुसार संरचनावाद सामयिक बौद्धिक झुकावों में से एक महत्वपूर्ण तथा प्रभावशाली झुकाव धारा है जो साहित्य विश्लेषण से लेकर जीवन विज्ञान जैसे ज्ञानानुशासनों का अध्ययन करने का सिद्धांत प्रदान करती है।

(क) जोनॉथन कल्लर (ख) रोजट फॉउलर

(ग) डॉ. बच्चन सिंह (घ) मैनेजर पांडेय

प्रश्न- किस आलोचक के अनुसार संरचानावाद "साहित्यिक कृतियों की संरचनाओं की समकालिकता की खोज करता हुआ रचना वर्तमानता पर विचार करता है।"

(क) मैनेजर पांडेय (ख) रोजर फॉउलर

(ग) डॉ. बच्चन सिंह (घ) जोनॉथन कल्लर

18.4 संरचनावाद: उद्भव तथा विकास

संरचनावाद केवल एक पद्धति ही नहीं है, इसमें दार्शनिकता का भी पर्याप्त अंश है। यदि इसकी पृष्ठभूमि पर विचार किया जाए तो कहा जा सकता है कि अरस्तू के युग से लेकर आज तक साहित्य में किसी न किसी रूप में संरचना का बोध होता रहा है। जॉ पियाजे का कहना है कि गणित, तर्क शास्त्र, भौतिकी, प्राणि-विज्ञान एवं सामाजिक-विज्ञान में संरचना की अवधारणा वर्षों से प्रक्रियाचलित रही है। पर फिर भी फ्रांसीसी संरचनावाद ने सबका ध्यान अपनी ओर आकृष्ट किया और संरचनावाद के नाम से बौद्धिक विचारणा के नव्य आंदोलन का सूत्रपात हुआ।

वैसे तो इसकी मूल प्रेरणा विको की रचना 'नया विज्ञान' है जो 1725 में प्रकाशित हुई पर इसका पता सर्वप्रथम 1945 में 'वर्ड' (पत्रिका) में लेविस्ट्रॉस के प्रकाशित होने वाले आलेख से हुआ जिसमें उन्होंने लिखा कि संरचनावादी भाषिकी के विशेषज्ञ जिस ध्वनि शास्त्रीय क्रांति का शुभ समाचार दे चुके हैं, उसकी कार्य पद्धति संकल्पनाओं से नृतत्वशास्त्र में भी लाभान्वित हुआ जा सकता है। तत्पश्चात् उन्होंने अपने सुप्रसिद्ध ग्रंथ 'ऐन्थ्रॉपॉलिजी स्ट्रकचरल' जो 1958 में पेरिस से प्रकाशित हुआ में लेविस्ट्रॉस ने अत्यन्त अंतर्दृष्टिपूर्ण एवं विचारोंद्दीपक अध्ययन प्रस्तुत किए यहीं से संरचनावाद संबंधी चिंतन मनन का एक नूतन पथ प्रशस्त हुआ और मानव चिंतन का मॉडल स्पष्ट होने पर संरचनावादी विचार पद्धति सातवें दशक के मध्य में आरंभ हुई।

संरचनावाद के बीज तत्व रूसी रूपवाद में हैं। रूपवाद में भाषागत साहित्याध्ययन पर जो बल दिया गया वही भाषा विज्ञान के संरचनावादी सूत्र के रूप में विकसित हुआ और संदेश के उद्देश्य के लिए भाषा के संरचना प्रकार्य को समझने के प्रयास शुरू हुए। साहित्यिक संरचनावाद के मुख्य प्रेरक रोलॉबार्थ थे किन्तु इसका सीधा संबंध भाषा

विज्ञान में विकसित मॉडलों से माना जा सकता है। इन मॉडलों का विकास इसी सदी के प्रारंभ में प्राग स्कूल आफ लिंग्विस्टिक्स के अंतर्गत सॉस्यूर के भाषा संबंधी चिंतन से हुआ। फर्डीनांड सॉस्यूर ने भाषा में संरचनावाद की नींव डाली।

प्राग स्कूल ने सम्प्रदाय की अवधारणाओं के परिणामस्वरूप सॉस्यूर के शब्दार्थ-सिद्धान्त और रूपवाद संयुक्त हुए और यहीं से सर्वप्रथम संरचना और प्रकार्य संबंधी विवेचन आरम्भ हुआ। प्राग स्कूल के प्रमुख मुकारोवस्की ने साहित्य के अध्ययन के लिए संरचना और संरचनात्मक शब्दों की व्याख्या की। प्राग स्कूल से ही संरचनावाद आगे विकसित हुआ और उसने नये रूप धारण किए। सातवें-आठवें दशक में फ्रांसीसी संरचनावाद का मडल आया जिससे इस मॉडल में साकल्यवादी (टोटलिस्ट) दृष्टि विकसित हुई। प्राग स्कूल हर पाठ को एक चिह्न व्यवस्था के रूप में देखता था जबकि फ्रांसीसी मॉडल साकल्यता (टोटलिटी) पर बल देता है।

- **स्व-मूल्यांकन (ख)**

रिक्त स्थान

प्रिय विद्यार्थियों। इस पाठ से आपको संरचनावाद उदभव तथा विकास का जो ज्ञान प्राप्त हुआ है। उसका स्व-मूल्यांकन आप निम्नलिखित रिक्त स्थान भरकर करे।

1. संरचनावाद केवल एक पद्धति ही नहीं है, इसमें .... का भी पर्याप्त अंश है।
2. विको की रचना 'नया ज्ञान' .... में प्रकाशित हुई।
3. ऐन्थ्रॉपॉलिजी स्ट्रकचरल 1958 में .... से प्रकाशित है।
4. संरचनावाद के बीच तत्व .... रुपवाद में है।
5. साहित्यिक संरचनावाद के मुख्य प्रेरक .... थे किंतु उसका सीधा सम्बंध भाषा विज्ञान में विकसित मॉडलों में माना जा सकता है।

18.5 संरचनावाद: प्रयोग क्षेत्र

संरचनावाद का प्रयोग क्षेत्र विस्तृत एवं वैविध्यपूर्ण है। यह विज्ञान, समाजशास्त्र, भाषा, साहित्य, मनोविज्ञान, जीव-विज्ञान, रसायन विज्ञान, नृतत्व शास्त्र, अर्थशास्त्र आदि में पूरी तरह समा चुका है। इसने प्रतीक विज्ञान और संप्रेषण सिद्धांत से अपने को जोड़ कर एक ओर कला के अर्थपरक दर्शन को अपने भीतर समेट लिया है तो दूसरी ओर रचनात्मकता को भी अपनी सीमा में लाकर खड़ा कर दिया है।

संरचनावाद का मूल क्षेत्र भाषा-विज्ञान है। इसके अंतर्गत भाषा की ध्वनियाँ, भाषा के शब्द, रूप, वाक्य, उपभाषाओं की अस्मिता तथा भाषा की परिवर्तनशीलता आदि के

विश्लेष्ण आते हैं। संरचनावाद में भाषा की अलग-अलग इकाइयों की संरचना की अपेक्षा भाषा की संपूर्ण संरचना का विश्लेष्ण किया जाता है। डॉ॰ रवीन्द्रनाथ श्रीवास्तव लिखते हैं कि "संरचनावादी धारा ने सिद्धांत और प्रणाली दोनों के लिए ही अपने को भाषा-दर्शन और भाषा-वैज्ञानिक प्रणाली के साथ बांधा है। संरचना का अविर्भाव भाषा से हुआ है बाद में इसका प्रसार अन्य ज्ञानानुशासनों में हुआ। अतः संरचनावाद के अविर्भाव की कहानी आधुनिक भाषा-विज्ञान के जन्म और विकास के साथ जुड़ी हुई है।"

- **स्व-मूल्यांकन (ग)**

सही या गलत

प्रिय विद्यार्थियों। निम्नलिखित प्रश्नों के उत्तर सही या गलत चिन्ह देकर आप अभी तक प्राप्त ज्ञान का मुल्यांकन करे।

1. संरचनावाद का प्रयोग क्षेत्र विस्तृत एवं वैविध्यपूर्ण है (   )
2. संरचनावाद विज्ञान, समाजशास्त्र, भाषा, साहित्य, मनोविज्ञान, जीव-विज्ञान, रसायन विज्ञान, नृतत्व शास्त्र, अर्थशास्त्र आदि में पूरी तरह समा चुका है। (   )
3. संरचनावाद का मूल क्षेत्र भाषा-विज्ञान है, इसके अंतर्गत भाषा की ध्वनियां, भाषा के शब्द, रुप, वाक्य, उपभाषाओं की अस्मिता तथा भाषा की परिवर्तनशीलता आदि के विश्लेषण आते है। (   )
4. संरचनावाद में भाषा की अलग-अलग इकाइयों की संरचना की अपेक्षा भाषा की सम्पूर्ण संरचना का विश्लेषण नहीं किया जाता है। (   )
5. संरचना का अविर्भाव भाषा से हुआ है, बाद में इसका प्रसार अन्य ज्ञानानुशासनों में हुआ। (   )

18.6 संरचनावाद के प्रमुख निकाय

संरचनावाद एक ऐसी विचारधारा है जिसका विकास विभिन्न सम्प्रदायों के विचारकों के परिणामस्वरूप होता चला गया। संरचनावाद के विभिन्न निकायों में रूसी संरचनावादी निकाय प्रमुख है। इसके प्रमुख साहित्य चिंतकों में विक्टर श्कलोवस्की, रोमन याकोब्सन, बोरिस आइखनबाम् एवं तोदोरोव के नाम आते हैं। 1965 में तोदोरोव ने एक पुस्तक प्रकाशित की जिसमें साहित्य संरचना को समझने के लिए इन चिंतकों के विचारों को प्रस्तुत किया गया।

फ्रांसीसी संरचनावादी निकाय द्वितीय विश्वयुद्ध के बाद अस्तित्व में आया। इनमें प्रमुख फ्रांसीसी प्राणी वैज्ञानिक थे - लेवी स्त्रास। लेवी स्त्रास ने सरचंनावाद को समाज

शास्त्र के साथ जोड़ा है। उन्होंने सांस्कृतिक व्यवहार, रीति-रिवाजों, सम्बन्धों, वैवाहिक नियमों, खाना पकाने एवं गोत्र-प्रणाली जैसी व्यवस्था के अध्ययन को संरचनावाद के अंतर्गत विश्लेषित किया है।

नव्य फ्रांसीसी निकाय पांचवें दशक में रोला बार्थ द्वारा विकसित किया गया यह भाषाविदों की सक्रिय प्रति भागिता का वाद है जिसमें रोलॉ बार्थ, टी तोदोरोव, बी यौरिन, रोमन याकोब्सन तथा मिखाइल रिफेतेअर प्रमुख हैं। इन्होंने संरचनावाद संबंधी नई धारणाओं को विकसित कर साहित्य को नई दिशा दी। रोला बार्थ ने साहित्य विश्लेषण को भाषा विज्ञान के आधार पर विश्लेषित करके एक नये विज्ञान की सर्जना की। तोदोरोव ने साहित्य विश्लेषण करते हुए कृति में विशिष्ट स्थितियों तथा उसके 'संभाव्य कार्यान्वयन' का सिद्धांत दिया। इन्हीं संरचनावादियों ने साहित्य को संकेतार्थ-विज्ञान के साथ जोड़ा।

इतालवी निकाय की नींव 1725 इटली के विधिवेता गिम्ब्राटिस्ट विको की प्रकाशित पुस्तक 'द न्यू सांइस' से पड़ी। इसमें ज्याँ प्याजे का महत्वपूर्ण स्थान है। संरचना के विषय में प्याजे ने तीन मूल विचारों को प्रस्तुत किया - साकल्य, गतिशीलता और आत्मानुशासन। विको की धारणा को मूल मानते हुए उन्होंने कहा कि वस्तु की सारी प्रकृति उसके अंदर ही नहीं होती, अपितु उन संबंधों में है जो उनके बीच के हैं इसे ही 'संरचनावाद' कहा गया है।

अमरीकी संरचनावादी निकाय का अस्तित्व 1941 का है। इसके प्रमुख विचारक हैं - बोआज़, एडवर्ड स्पीन, ब्लूमफील्ड। अमरीकी संरचनावाद के अनुसार कोई भी संस्कृति भाषा के संकेतों के माध्यम से ही मुखरित होती है। सामाजिक व्यवहार से निर्मित संस्कृति ही भाषा के प्रारूप कार्य को प्रस्तुत करती है।

अतः संरचनावाद एक ऐसा वाद है जिसमें साहित्य विश्लेष्ण की विधि के साथ-साथ जीवन को समझने की दृष्टि भी है।

- **स्व-मूल्यांकन (घ)**

रिक्त-स्थान

प्रिय विद्यार्थियों। इस पाठ से आपको संरचनावाद के प्रमुख निकायों का जो ज्ञान प्राप्त हुआ है, उसका स्व-मूल्यांकन आप निम्नलिखित रिक्त-स्थान भरकर करे।

1. संरचनावाद के विभिन्न निकायो में ....निकाय प्रमुख है।
2. इसके प्रमुख चिंतकों में विक्टर रकलोवस्क, रोमन योकोब्सन, बोरिस आइखनवाद एवं .... के नाम आते है।
3. .... में तोदोरोव ने एक पुस्तक प्रकाशित की जिसमें साहित्य संरचना को समझने के लिए चिंतकों के विचारों को प्रस्तुत किया गया।

4. .... निकाय द्‌वितीय विश्वयुद्‌ध के बाद अस्तित्व में आया।
5. लेवी स्त्रास ने संरचनावाद को ....के साथ जोड़ा है।
6. .... पांचवें दशक में रोला बार्थ द्‌वारा विकसित किया गया यह भाषाविदों की सक्रिय प्रति भागिता का वाद है।
7. .... की नींव 1725 के विधिवेता गिम्ब्राटिस्ट विको की प्रकाशित पुस्तक "द न्यू सांईस" से पड़ी।
8. संरचना के विषय में प्याणे ने तीन मूल विचारों को प्रस्तुत किया-साकल्य, गतिशीलता और ....।
9. अमरीकी संरचनावादी निकाय का अस्तित्व .... का है।
10. अमरीकी संरचनावाद के अनुसार कोई बी संस्कृति .... के संकेतों के माध्यम से ही मुखरित होती है।

18.7 सारांश-

अत: संरचनावाद एक ऐसा वाद है जिसमें साहित्य विश्लेषण की विधि के साथ-साथ जीवन को समझने की दृष्टि भी है।

18.8 कठिन शब्द

1. अन्वेषण - खोज, अनुसंधान
2. उदबुद्‌ध - जागृत बुद्‌धि वाला
3. अनुबंधन - संबंध, अनुक्रम
4. स्वायत्तता - स्वशासन
5. प्रकार्य - मान्य, समाज में स्वीकृत
6. यादृच्छिक - स्वतंत्र, ऐच्छिक
7. उदभूत - उत्पन्न, उत्पत्ति
8. अभिहित - कहा हुआ उल्लिखित
9. निरावृत्त - अनाच्छादित, खुला हुआ
10. सगुंफित - दही, योगर्ट, योगहर्ट

18.9 अभ्यासार्थ प्रश्न

प्रश्न- संरचनावाद का अर्थ एवं परिभाषा देते हुए उसके स्वरुप पर प्रकाश डालिए।

उत्तर- ....

....

....

प्रश्न- संरचनावाद के उदभव एवं विकास पर संक्षिप्त लेख लिखे।

उत्तर- ....

....

....

प्रश्न- संरचनावाद के प्रमुख निकायों पर रोशनी डालें।

उत्तर- ....

....

....

18.10 उत्तर कुंजी

स्व-मूल्यांकन (क)

(1) दोनों (2) अन्वेषण पद्धति (3) उपर्युक्त सभी

(4) रोजट फॉउलर (5) मैनेजर पाण्डेय

स्व-मूल्यांकन (ख)

(1) दार्शनिकता (2) 1725 (3) पेरिस

(4) रुसी (5) रोलॉवार्थ

स्व-मूल्यांकन (ग)

(1) सही (2) सही (3) सही

(4) गलत (5) सही

स्व-मूल्यांकन (घ)

(1) रुसी संरचनावादी (2) तोदोरोव

(3) 1965 (4) फ्रांसीसी संरचनावादी

(5) समाजशास्त्र (6) नव्य फ्रांसीसी निकाय

(7) इतालवी निकाय (8) आत्मानुशासन

(9) 1941 (10) भाषा

18.11 पठनीय पुस्तकें

1. पाश्चात्य काव्य शास्त्र- देवेन्द्रनाथ शर्मा, नेशनल पेपरबैक्स, 2023
2. पाश्चात्य साहित्य चिंतन- प्रो. निर्मला जैन, राधाकृष्ण प्रकाशन, 2017
3. उदात्त के विषय में-प्रो. निर्मला जैन, वाणी प्रकाशन, दिल्ली, 2004
4. पाश्चात्य काव्य शास्त्र की परम्परा- सं. डॉ. नगेन्द्र और सावित्री सिन्हा
5. काव्य में उदात्त तत्व- डॉ. नगेन्द्र और नेमिचन्द्र जैन, राजपाल एवं संस, दिल्ली

संरचनावाद: सॉस्यूर एवं रोलॉ बार्थ की प्रमुख स्थापनाएँ

रुपरेखा

19.1 उद्देश्य एवं अपेक्षित परिणाम
19.2 प्रस्तावना
19.3 संरचनावाद: सॉस्यूर एवं रोलॉ बार्थ की प्रमुख स्थापनाएँ
19.4 फर्निनाद: डी सॉस्यूर- संरचनावादी विश्लेषण
स्व-मूल्यांकन (क)
स्व-मूल्यांकन (ख)
19.5 रोलॉ बार्थ:- संरचनावादी विश्लेषण
स्व-मूल्यांकन (ग)
19.6 सारांश
19.7 कठिन शब्द
19.8 अभ्यासार्थ प्रश्न
19.9 उत्तर कुंजी
19.10 पठनीय पुस्तकें

19.1 उद्देश्य एवं अपेक्षित परिणाम

प्रिय विद्यार्थियों। प्रस्तुत आलेख का उद्देश्य आपको फर्निनाद डी सॉस्यूर के जीवन परिचय से परिचित करवाते हुए, सॉस्यूर के संरचनावादी विश्लेषण तथा रोलॉ वार्थ के परिचय से अवगत करवाना है।

अपेक्षित परिणाम- प्रस्तुत पाठ का विस्तृत विश्लेषण करने के उपरांत आप फर्निनाद डी सॉस्यूर को समझने के साथ ही सॉस्यूर के संरचनावादी विश्लेषण तथा रोलॉ बार्थ को पूर्ण रुप से समझने में सक्षम होंगे।

19.2 प्रस्तावना

प्रिय विद्यार्थियों इससे पूर्व अध्याय में आपने संरचनावाद के उदभाव के अर्थ, परिभाषा एव स्वरुप तथा संरचनावाद के उदभव तथा विकास व संरचनावाद के प्रयोग क्षेत्र एवं संरचनावाद के प्रमुख निकायों की जानकारी प्राप्त की। प्रस्तुत अध्याय में आप फर्निवाद डी सॉस्यूर से परिचित होते हुए उनके संरचनावादी विश्लेषण तथा रोलॉ बार्थ को पूर्ण रुप से समझने में सक्षम होगें।

19.3 सॉस्यूर एवं रोलॉ बार्थ की प्रमुख स्थापनाएँ

संरचनावाद पद्धति साहित्येत्तर तत्वों पर नहीं बल्कि स्वयं साहित्यिक कृति पर ही केन्द्रित होती है। संरचनावाद के अनुसार साहित्य संकेतों की व्यवस्था है जो कुछ अलिखित नियमों या परंपराओं से शासित होता है। संरचनावादी पद्धति उन्हीं सामान्य साहिताओं, उन अलिखित नियमों तथा परंपराओं का अन्वेषण करती है जो रचनाकार में साहित्य रचने और पाठक में साहित्य समझने की क्षमता जगाए। संरचनावाद के प्रमुख समीक्षक सॉस्यूर तथा रोलॉबार्थ का परिचय एवं योगदान निम्नलिखित है-

फर्निनाद डी सॉस्यूर (1857-1913)

सॉस्यूर स्विस भाषा विज्ञानी था। जेनेवा विश्वविद्यालय में भाषाविज्ञान में प्राध्यापक के रूप कार्य करते हुए सन् 1906-1911 तक उसने जो व्याख्यान दिए उन्हें उनके शिष्यों ने नोटस के रूप में सुरक्षित कर लिया। सन् 1913 में उनकी मृत्यु के पश्चात् उनके विचारों को पुस्तकाकार रूप में प्रकाशित करने हेतु उनके साथियों ने शिष्यों के नोट्स की सहायता से 1916 में Course De Linguistique Generale नाम की पुस्तक फ्रांसीसी में प्रकाशित की। 1959 में इस पुस्तक का अंग्रेजी अनुवाद हुआ और उनके भाषा संबंधी विचार ही (भाषिक-चिंतन) संरचनावाद और उत्तरसंरचनावाद का आधार सिद्ध हुए। सॉस्यूर ने ही भाषा में संरचनावाद की नींव डाली। उसी ने सर्वप्रथम भाषा को व्यापक रूप से मनोविज्ञान और समाजविज्ञान के परिप्रेक्ष्य में देखने की स्वस्थ परंपरा रखी।

सॉस्यूर के समय तक 'भाषा' तथा 'वाक्' का अंतर सामने नहीं आया था। सॉस्यूर ने सबसे पहले इन दोनों में अंतर स्पष्ट किया और कहा - भाषा एक व्यवस्था है, जबकि वाक् उसका उच्चरित या लिखित व्यक्त रूप है। भाषा उसके बोलने वाले समाज के मस्तिष्क में होती है, जबकि वाक् व्यक्ति द्वारा प्रक्रियायुक्त होता है। इस प्रकार भाषा सामाजिक है तो वाक् वैयक्तिक।

उस समय यह भी अवधारणा थी कि भाषा ऐसे शब्दों का संग्रह है, जो अलग-अलग अर्थ रखते हैं और जिनकी स्वतंत्र परिभाषा संभव है। सॉस्यूर ने इस अवधारणा का खंडन करते हुए कहा कि भाषा कोई 'द्रव्यवाचक' या 'तात्विक' वस्तु नहीं है उन्होंने भाषा की संबंधात्मक संकल्पना को प्रस्तुत किया। उनके अनुसार भाषा नाम देने वाला तंत्र नहीं है, अपितु भाषा विभेदों का तंत्र है, जिसमें कोई सकारात्मक तत्व सिरे से नहीं है। सॉस्यूर ने यह सिद्ध किया कि भाषा का अध्ययन केवल उसके अवयवों को लेकर या मात्र ऐतिहासिक दृष्टि से नहीं करना चाहिए बल्कि उन संबंधों को सम्मुख रखकर करना चाहिए जिनके कारण भाषा के अवयव परस्पर संबंध रखते हैं और क्रियान्वित होते हैं अर्थात् भाषा का अध्ययन एक विन्यस्त 'ऐकिक तंत्र' के रूप में 'उपस्थित समय' के स्तर

पर करना चाहिए। उपस्थित समय के अध्ययन को सॉस्यूर ने 'समकालिक अध्ययन' कहा है। सॉस्यूर के इसी समकालिक अध्ययन ने भाषा की ऐतिहासिक दिशा के अतिरिक्त भाषा के संरचनात्मक तंत्र को स्वीकार करने का मार्ग प्रशस्त किया। फ्रेडरिक जेमिसन का कथन है - ''सॉस्यूर की अप्रतिम मेधा का अनुमान उसके इस आग्रह से होता है कि भाषा का समस्त तंत्र प्रत्येक क्षण में संपूर्ण है, जिसके अनुसार वह हर समय बोली और समझी जाती है और फिर इस तथ्य से भी निरपेक्ष कि भाषा बोलने वाले भाषा के पूर्व इतिहास का या ऐतिहासिक परिवर्तनों का ज्ञान रखते हों या न रखते हों।''

संरचनावाद में भाषा संरचना पर बल दिया जाता है और संरचनावदी विश्लेषण की मूल-धारणा का संकल्प सॉस्यूर में ही प्राप्त होता है। सॉस्यूर का भाषा-संरचना का विश्लेषण निम्नलिखित अवधारणाओं पर आधारित हैः-

19.4 फर्निनाद डी सॉस्यूर- संरचनावादी विश्लेषण

भाषा-पक्ष

लांग | **पैरोल**

भाषा के संकेत-तत्व

संकेतक अथवा वाचक | **संकेतिक अथवा वाच्य**

भाषा संरचना की इकाइयाँ

विन्यासक्रमी | **सहचारक्रमी**

भाषिक अध्ययन के रूप

एककालिक | **बहुकालिक**

1. **लांग(Langue):-** विशेष भाषा-भाषी समुदाय के मस्तिष्क में रहती है। लांग कुछ आवश्यक नियमों का वह समूह है, जो विशेष भाषा-भाषी समुदाय के भीतर सहज रूप में है। यह अमूर्त तथा मानसिक व्यवस्था है।
2. **वाक् (Parole):-** भाषा की एक छोटी इकाई है जो मूर्त है।

3. **संकेत(Sign):-** सॉस्यूर के अनुसार संकेत भाषा के 'संकेतक और संकेतित की व्यवस्था का नाम है। उसके अनुसार संकेत यादृच्छिक तथा एकरेखीय होते हैं।

4. **संकेतक (Signifire):-:-**भाषा की अभिव्यक्ति हेतु 'संकेतक' की आवश्यकता होती है। संकेतक वे ध्वनि-बिम्ब हैं जिन्हें वक्ता कूटबद्ध करता है और जिसे श्रोता का मस्तिष्क ग्रहण करता है।

5. **संकेतित (Signified):-:-**वक्ता ध्वनि संकेतों द्वारा जिसे व्यक्त करता है वही संकेतत है अर्थात् संकेतक या वाचक भाषा के अभिव्यक्ति पक्ष से सम्बन्धित है जबकि संकेतित या वाच्य भाषा का कथ्य या अर्थ पक्ष होता है।

6. **भाषा-**संरचना की इकाइयांः- सॉस्यूर ने भाषा की संरचना पर विचार करते हुए भाषिक इकाइयों के बीच संबंधों को रेखांकित किया है यह दो प्रकार के हैं-

   (i) **विन्यासक्रमी:-** इस संबंध के अंर्तगत शब्द, पद, पदबध, उपवाक्य तथा वाक्यों में प्रक्रियायुक्त होने वाली भाषिक इकाइयों के आगे या पीछे आने वाली दोनों प्रकार की इकाइयों (प्रत्यय एवं उपसर्ग) को विन्यासक्रमी कहा जाता है। परस्पर उपस्थिति के कारण यह संबंध क्षैतिजीय होता है।

   (ii) **सहचारक्रमी:-** भाषा का यह संबंध भाषा-भाषी के मस्तिष्क में ऐसी भाषिक इकाइयों के अंतर्गत होता है जो अर्थीय, रूपीय समानता या विरोधिता पर आधारित होती है जैसे 'सोना' भाषिक इकाई के याद आते ही चारपाई, बिस्तर, सिरहाना आदि सहचरी इकाइयाँ भी याद आ जाए तो सहचारक्रमी संबंध बनता है। सॉस्यूर ने विन्यास क्रमी को उच्चरित या लिखित भाषा तथा सहचारक्रमी को प्रयोग करने वाले मस्तिष्क की भाषा माना है।

7. **भाषिक अध्ययनः-** सॉस्यूर के अनुसार भाषिक अध्ययन दो प्रकार का हो सकता है-

   एककालिक:- विशिष्ट काल की भाषा के अध्ययन को एककालिक कहा जाता है।

   बहुकालिक:- एकाधिक कालक्रमों में भाषा में आने वाले परिवर्तनों (ध्वनि, शब्द, रूप, अर्थ) को रेखांकित किया जाए उसे बहुकालिक माना है।

सॉस्यूर ने भाषा को पारिभाषित करते हुए कहा कि लोग समझते हैं कि वस्तुओं को नाम देना भाषा है, किन्तु ऐसा मानना भ्रामक है। भाषा के दो पक्ष होते हैं - विचार और ध्वनि। दोनों की सत्ता मानसिक है। ये वास्तविक वस्तु और उच्चरित ध्वनि नहीं है। वास्तविक वस्तु विचार का मानसिक बिंब भाषा का अर्थ या भाव पक्ष है तो उच्चरित ध्वनि का मानसिक बिंब भाषा का अभिव्यक्ति पक्ष है। दोनों के संबंधों की व्यवस्था ही भाषा है।

सॉस्यूर भाषा प्रकार्य की संकल्पना दो प्रकार से करता है। एक को वह 'लांग' कहता है दूसरे को 'पैरोल'। इन दोनों में सॉस्यूर ने जो द्वंद्वात्मक संबंध स्थापित किए हैं, वही सम्बन्ध आधुनिक भाषिकी के विकास में सामान्य रूप से तथा संरचनावाद की उन्नति में विशेष रूप से सहायक सिद्ध हुए। लांग और पैरोल में मुख्य अन्तर यह है कि भाषा का सम्पूर्ण तंत्र 'लांग' है और वाक् यानी बोली जाने वाली कोई भी घटना 'पैरोल' है, जो भाषा के सम्पूर्ण तंत्र के बिना अस्तित्व में नहीं आ सकती और उसके अंदर रचित होती है। 'लांग' की अवधारणा समाज में रची बसी हुई है। उससे किसी भी समाज में भाषा के सारे बोलने वाले काम लेते हैं और उसके बगैर कोई भी भाषा नहीं बोल सकता। जबकि पैरोल भाषा के संपूर्ण तंत्र का मात्र वैयक्तिक दृष्टांत है, जो किसी भी व्यक्ति के भाषा-व्यवहार अर्थात् बोलचाल में घटित होता है। दूसरे शब्दों में 'लांग' एक समग्र अमूर्त अवधारणा है, एक सम्पूर्ण मानसिक तंत्र, जो कोई भी भाषा रखती है और 'पैरोल' उसका मात्र वह हिस्सा है जो कोई व्यक्ति किसी समय, व्यवहार हेतु प्रयोग करता है। इस धारणा को समझाते हुए सॉस्यूर शतरंज के खेल का उदाहरण देते हैं। वे कहते हैं शतरंज के खेल का सारा तंत्र 'लांग' के समरूप है तथा उसकी प्रत्येक चाल 'पैरोल' है। एक अमूर्तन है तो दूसरी घटना। दूसरे शब्दों में 'पैरोल' वस्तुतः हिमशैल (ICEBERA) का ऊपरी सिरा है, जो समुद्र की सतह पर तैरता है जिसको हम देख सकते हैं पर 'लांग' समग्रता में हिम का वह विशाल खण्ड है, जो उपरी सिरे को तो संभाले रहता है लेकिन स्वयं अदृश्य है।

सॉस्यूर के इस चिंतन के परिणाम अत्यन्त महत्वपूर्ण सिद्ध हुए। इस विषय में चार्ल्स फ्रीज का कहना है कि "सॉस्यूर ने शब्दों के माध्यम से समझे जाने वाले शब्द-केन्द्रित चिंतन की भाषागत अवधारणा को सदा के लिए बदलकर रख दिया और उसका स्थान 'संबंधात्मक' एवं 'संरचनात्मक' अवधारणा ने ले लिया।"

सॉस्यूर का कहना है कि भाषा केवल शब्दों के माध्यम से क्रियान्वित नहीं होती। भाषा 'संकेत-तंत्र'; (SYSTEM OF SCIENCE) के प्रकाश में कार्य करती है जो अवधारणाओं को व्यक्त करते हैं। शब्द उस संकेत तंत्र का दृष्टिगत रहने वाला सिरा है। यह संकेत तंत्र अमूर्त है तथा भाषिकी का प्रकार्य भाषा की संपूर्ण संरचना का पता लगाना है, सॉस्यूर ने इस बात पर भी बल दिया कि संकेत तंत्र का गहन अध्ययन मानवीय जीवन के तंत्र या उसके समस्त सामाजिक और सांस्कृतिक अभिव्यंजनाओं के तंत्र को समझने में सहायक हो सकता है।

भाषा में हर चीज संबंधों पर आधारित है। इन संबंधों की दो विशेष दिशाओं को समझना भी आवश्यक है। सॉस्यूर इनको दो पदों की सहायता से समझाते हैं। एक को

वह 'विन्यासक्रमी' संबंध कहता है और दूसरे को 'अविन्यास क्रमी'। सॉस्यूर ने भाषा के समकालिक अध्ययन पर बल दिया है। इन बिंदुओं के कारण ही सॉस्यूर इस वास्तविकता का आग्रह करता है कि भाषाई संरचनाएँ बद्ध 'आत्मनिर्भर' और अपने नियमों को स्वयं निर्धारित करने वाली होती हैं। उनकी दृष्टि अंतर्मुखी होती है। ये बाहर से निर्देश नहीं लेती। सॉस्यूर का कथन है कि किसी भाषा के पास न ऐसी ध्वनियाँ हैं, न ऐसे तत्व जो उसके भाषिक तंत्र के पूर्वगामी हों। भाषा में मात्र ध्वन्यात्मक विरोध और अवधारणाएँ हैं जो उसके अपने तंत्र के अनुसार प्रक्रियाभावी हैं। सॉस्यूर के इन्हीं भाषा सूत्रों के आधार पर संरचनावाद की नींव पड़ी तथा उत्तर-संरचनावाद का पथ भी प्रक्रियाशस्त हुआ और आगे उनके यही विचार देरीदा के क्रांतिकारी विरचनावाद की भी आधारशिला सिद्ध हुए।

- **स्व-मूल्यांकन (क)**

प्रिय विद्यार्थियों। इस पाठ से आपको फर्निनाद डी सॉस्यूर के जीवन परिचय तथा उनकी संरक्षचना वादी विश्लेषण का जो ज्ञान प्राप्त हुआ है उसका स्व-मूल्यांकन आप निम्नलिखित बहुविकल्पीय प्रश्नों द्वारा करे।

बहुविकल्पीय प्रश्न

प्रश्न- फर्निनाद डी सॉस्यूर की समय सीमा है।

(क) 1857-1913 (ख) 1859-1914

(ग) 1860-1916 (घ) 1862-1917

प्रश्न- सॉस्यूर किस भाषा के विज्ञानी थे?

(क) फ्रैंच भाषा (ख) स्विस भाषा

(ग) रुसी भाषा (घ) अमरीकी भाषा

प्रश्न- सॉस्यूर ने किस विश्वविद्यालय में भाषा विज्ञान में प्राध्यापक के रुप कार्य किया?

(क) ऑक्सफोर्ड विश्वविद्यालय (ख) हार्वर्ड विश्वविद्यालय

(ग) जेनेवा विश्वविद्यालय (घ) क्रैम्ब्रिज विश्वविद्यालय

प्रश्न- सॉस्यूर के सार्थियों ने शिष्यों के नोटस की सहायता से "Cours De "Linguistique Generale" नाम की पुस्तक का प्रकाशन कब किया?

(क) 1916 (ख) 1920

(ग) 1918 (घ) 1924

प्रश्न- "Cours De "Linguistique नाम की पुस्तक का अंग्रेजी अनुवाद कब हुआ?

(क) 1956 (ख) 1959

(ग) 1957 (घ) 1960

प्रश्न- लांग विशेष भाषा- भाषी समुदाय में कहां रहती है?

(क) विचारों (ख) मस्तिष्क

(ग) दोनों (घ) दोनों में से नहीं

प्रश्न- सॉस्यूर के अनुसार भाषिक अध्ययन कितने प्रकार का होता है?

(क) दो (ख) तीन

(ग) चार (घ) पांच

प्रश्न- सॉस्यूर के अनुसार भाषा के दो पक्षों के नाम है।

(क) विचार (ख) ध्वनि

(ग) दोनों (घ) दोनों में से कोई नहीं

प्रश्न- भाषा का सम्पूर्ण तंत्र क्या कहलाता है?

(क) पैरोल (ख) संकेत

(ग) संकेतित (घ) लांग

प्रश्न- वाक यानी बोली जाने वाली घटना क्या कहलाती है?

(क) लांग (ख) पैरोल

(ग) संकेत (घ) संकेतित

प्रश्न- सॉस्यूर ने शब्दों के माध्यम से समझे जाने वाले शब्द-केन्द्रित चिंतन की भाषागत अवधारणा को सदा के लिए बदलकर रख दिया औ उसका स्थान "संबंधात्मक" एवं "संरचनात्मक" अवधारणा ने ले लिया। सॉस्यूर के विषय में किसकी विचारधारा है।

(क) चार्लस फ्रीज (ख) रोजर फॉउलर

(ग) जोनॉधन कल्लर (घ) उपयुक्त सभी

स्व-मूल्यांकन (ख)

प्रिय विद्यार्थियों। अभी तक प्राप्त ज्ञान का मूल्यांकन आप निम्नलिखित रिक्त स्थान भरकर करे।

(1) सॉस्यूर का कहना है कि भाषा केवल शब्दों के माध्यम से .... नहीं होती।

(2) भाषा ....(System of Sign) के प्रकाश में कार्य करती है जो अवधारणाओं को व्यक्त करते हैं।

(3) .... संकेत तंत्र का दृष्टिगत रहने वाला सिरा है।

(4) सॉस्यूर ने इस बात पर भी बल दिया कि संकेत तंत्र का गहन अध्ययन मानवीय जीवन के तंत्र या उसके समस्त सामाजिक और .... अभिव्यंजनाओं के तंत्र को समझने में सहायक हो सकता है।

(5) भाषा में हर चीज सम्बधों पर आधारित है, इन सम्बंधों की दो विशेष ....को समझना भी आवश्यक है।

(6) सॉस्यूर भाषा को दो पदों की सहायता से समझाते हैं। एक को वह .... सम्बंध कहता है और दूसरे को “अविन्यास कमी”।

(7) सॉस्यूर ने भाषा के ....अध्ययन पर बल दिया है।

(8) सॉस्यूर इस वास्तविकता का आग्रह करता है कि भाषाई संरचनाएं बद्ध .... और अपने नियमों को स्वयं निर्धारित करने वाली होती है।

(9) सॉस्यूर का कथन है कि किसी भाषा के पास न ऐसी ध्वनियां है, न ऐसे तत्व जो उसके .... तंत्र के पूर्वगामी हो।

(10) भाषा में मात्र ....विरोध और अवधारणाएं हैं जो उसके अपने तंत्र के अनुसार प्रक्रियाभावी है।

(11) सॉस्यूर के भाषा सूत्रों के आधार पर .... की नीव पड़ी तथा उत्तर-संरचनावाद का पथ भी प्रशस्त हुआ।

(12) सॉस्यूर sके यही विचार आगे देरीदा के .... विरचनावाद क भी आधारशिला सिद्ध हुए।

19.5 रोलाँ बार्थ (1915-1980)

फ्रांस के संरचनावादी विचारकों और साहित्यिक आलोचकों में रोलाँ बार्थ सर्वाधिक वाग्विदग्ध एवं निर्भीक सिद्धांतकार था। वह एक कुशाग्रबुद्धि, विद्रोही स्वभाव का समीक्षक था। उसके चिंतन के मुख्य बिंदु भाषा, साहित्य और संस्कृति पर आधारित हैं। इनकी चिंतन सम्बन्धी प्रमुख कृतियाँ-

राइटिंग डिग्री ज़ीरो (1953), माइथॉलॉजिज (1957), एम/जेड (1970) दि लेज़र ऑफ दि टेक्स्ट (1973) एलिमेण्टस ऑफ सिमियॉलॉजी (1965) हैं इसके अतिरिक्त उन्होंने अपनी एक रोचक आत्मकथा - 'रोलाँ बार्थ बाई रोलाँ बार्थ' (1957) भी लिखी।

रोलाँ बार्थ आरंभ में ज्या पॉल सात्र से प्रभावित था। सात्र की तरह वह भी पाश्चात्य दर्शन का प्रक्रियाबल विरोधी था, जिसके प्रति वाद में अस्तित्ववाद सामने आया था। सात्र के समान ही वह भी 'अनिवार्यता' को बुर्जुवाजी का चिह्न समझता था और पूरी शक्ति से उसका खंडन करता था फिर धीरे-धीरे उसकी यह विरोधात्मक धुन सात्र से भी आगे निकल गई।

साहित्य को परिभाषित करते हुए बार्थ लिखता है - "साहित्य वस्तुओं की अर्थोत्पत्ति का संदेश है, मात्र अर्थ नहीं - सिग्निफिकेशन से बार्थ का तात्पर्य वह प्रक्रिया है, जो नानाविध अर्थ उत्पन्न करती है, मात्र निर्धारित अर्थ नहीं।

पाँचवें दशक में रोलाँ बार्थ द्वारा नव्य फ्रांसीसी स्कूल की स्थापना की गई। उसने साहित्य विश्लेष्ण को भाषा-विज्ञान के आधार पर विश्लेषित करके एक नये विज्ञान की सर्जना की। इसके साथ ही उन्होंने साहित्य, विज्ञान एवं भाषा-विज्ञान के अंतर को स्पष्ट किया। रोलाँ बार्थ का लेखन के आरंभिक दौर में 'संकेत-विज्ञान' (SEMIOLOGY) पर आग्रह था। दूसरे काल में उनका झुकाव संकेत-विज्ञान से क्रमशः साहित्य की ओर आ गया। इसी दूसरे काल को अधिकांश समीक्षकों ने बार्थ का उत्तर-संरचनावादी काल घोषित किया जिसमें बार्थ की अपेक्षाएँ एवं प्रेरक तत्व वैज्ञानिक से अधिक सृजनात्मक हैं। 'एलिमेण्ट्स ऑफ सिमियाँलॉजी' (1945) में बार्थ का विश्वास था कि संरचनावादी पद्धति से मानवीय संस्कृति के समस्त संकेत तंत्रों को समझा जा सकता है।

रोलॉ बार्थ ने सॉस्यूर द्वारा स्थापित भाषा वैज्ञानिक साहित्यिक विश्लेष्ण के सिद्धातों को ग्रहण किया और उन्हें संकेत-विज्ञान से जोड़कर ग्रहणीय बनाया। रोलाँ बार्थ ने साहित्यिक अध्ययन के लिए पाँच प्रमुख संकेतों (कोडज़) को साहित्यिक पाठ में ढूँढने का सफल प्रयास किया। ये कोड क्या है ? ये संरचनावादी अर्थगत तंत्र के कोड नहीं। बार्थ का कथन है कि जो भी सैद्धान्तिक तंत्र हम प्रयोग में लाए-उदाहरणत: रूपवादी, मनोवैज्ञानिक मार्क्सवादी, संरचनावादी, वह पाठ अपने असंख्य स्वर उत्पन्न करेगा। बार्थ का मत है कि पाठक जब भिन्न दृष्टिकोण से अध्ययन करता है तो भिन्न अर्थ उत्पन्न होते हैं और अर्थ की तथाकथित श्रेष्ठता विलीन हो जाती है। रेलाँ बार्थ ने साहित्य को संकेतों की व्यवस्था माना है। उनके अनुसार साहित्यिक पाठ में मुख्यतः दो प्रकार के संकेत (कोडज़) उपलब्ध होते है- विन्यासक्रमी और पाठपरक। रोलाँ बार्थ ने संस्कृति में उन सभी पक्षों के संकेत पर बल दिया, जो एक गद्यात्मक संरचना की बौद्धिक संरचना को उत्पन्न करते हैं। वे संकेत जिनके आधार पर गद्य पाठ का अध्ययन किया जाता है। वे पाँच प्रकार के हैंः-

1. व्याख्यात्मक (निर्वचनात्मक) संकेत (HERMENUTIC CODE)
2. अर्थगत संकेत (SEMIC CODE)
3. प्रतीकात्मक संकेत (SYMBOLIC CODE)
4. क्रियात्मक (प्रक्रियात्मक) संकेत (PROAIRETIC CODE)
5. सांस्कृतिक संकेत (CULTURAL CODE)

1. **व्याख्यात्मक:-** यह कोड उस मूलभूत जिज्ञासा से सम्बन्धित है। लेखन के आरंभ में प्रश्न उठता है कि यह क्या है ? यह कौन है ? क्या हो रहा है ? यह कोड विवरणात्मक वाक्यों को खोलते हैं। इसके माध्यम से कई प्रश्नों और उलझनों का समाधान होता है। ऐसे कोड व्याख्यात्मक उत्तरों की भूमिका निभाते हैं।
2. **अर्थगत कोड:-** ये कोड कृति, चरित्र अथवा आख्यान के निहित अर्थों से सम्बन्धित है जो विशिष्ट संकतों से उद्‌भूत होते हैं। पाठ की अर्थपरक संरचना से जुड़े ये कोड किसी विशिष्ट अथवा उपयुक्त नाम के गिर्द स्वयं को व्यवस्थित करते हैं, किसी चरित्र का निर्माण भी इन्हीं से होता है।
3. **प्रतीकात्मक कोड:-** ये कोड अर्थ के दो ध्रुवों के 'अंतर' एवं 'ऐंटिथिसिस' को सामने लाता है। इनसे अर्थ बाहुल्यपरक वातावरण निर्मित होता है और वस्तुएं विपर्यस्त हो जाती हैं। कथ्य के क्षेत्र में सम्बन्धित ये कोड यौन एवं मनोवैज्ञानिक संबंधों की उन स्थितियों को सामने लाते हैं जिनमें चरित्र प्रविष्ट होते हैं।
4. **क्रियात्मक कोड:-** ये कोड कर्म (क्रिया) कोड हैं। ये किसी भी प्रकार (छोटे-बड़े अथवा दोनों प्रकार के) के हो सकते हैं जो रचना में पाए जाते हैं। इनके माध्यम से बार्थ कर्म एवं अभिवृत्तियों के तर्क को प्रकट करता है। ये कोड विन्यासक्रमी होते हैं। एक बिंदु से आरंभ होकर दूसरे पर समाप्त होते हैं। ये कथा में गुंफित तथा परस्पर व्याप्त होते हैं। एक उत्कृष्ट कृति क्रियात्मक संकेतों से परिपूर्ण होती है।
5. **सांस्कृतिक कोड**:- ये कोड उन सारे संदर्भों को समेट लेते है, जो ज्ञान में वृद्‌धि करते हैं। इनमें बार्थ ने किसी पाठ में अन्तर्निहित मूल्यों और पूर्ण ज्ञान की व्यवस्था को समाहित किया है। इनमें मानवीय वास्तविकता का ज्ञान करवाने वाले लोकोत्तर ज्ञान समूह, वैज्ञानिक या विभिन्न परम्परागत ज्ञान को सम्मिलित किया जा सकता है।

रोलॉ बार्थ ने पाठ की संरचना प्रक्रिया में 'व्यवस्थीकरण' पर बल दिया है। पहले इन कोडों की सहायता से पाठ के अवयवों को सफलता के साथ खंड-खंड करने, उनके अर्थ के तितर-बितर करने और फिर कोड के माध्यम से ही क्रमवार दर्शाने से बार्थ ने रचना विन्यास की व्यवस्था पर तो बल दिया ही है इसके अतिरिक्त उसका उद्‌देश्य यथार्थपरक पाठ के शास्त्रीय एकत्व को छिन्न-भिन्न करना था, ताकि यथार्थवाद की सीमाओं को निरावृत्त किया जा सके। इससे वृतांत साहित्य के रूढ़िबद्‌ध विभाजनों, कथानक के चरित्र विन्यास और कथ्य को विखंडित किया जा सकता है। संरचनावादी विचारक रोलाँ बार्थ कलाकृति की समस्त व्याख्याओं को जो चाहे जिस भी कलाकृति के संदर्भ से उद्‌भूत होती हों, स्वीकार करते हैं। उनके अनुसार कलाकृति वस्तुपरकता अथवा ठोस यथार्थता

के नाममात्र के सीमांकन से कहीं आगे जाती है। कलाकृति का अस्तित्व कदापि वह नहीं, जो दृष्टिगत होता है। बार्थ की इस वैचारिक अभिवृत्ति का एक महत्वपूर्ण पक्ष यह है कि संरचनावाद आलोचक को विशेष महत्व और नव्य भूमिका प्रदान करता है। संरचनावाद में आलोचक कलाकृति को अपनी पढ़त से अर्थ देता है। अतः आलोचक के लिए आवश्यक नहीं कि वह रचना के आदेशों के सम्मुख सिर झुका दे। इसके विपरीत आलोचक सक्रिय रूप से अर्थ निर्माण करता है। वह रचना को उपस्थित बनाता है।

रोलॉ बार्थ की उत्तर-संरचनावादी विचारणा की श्रेष्ठतम् अभिव्यक्ति उसके संक्षिप्त आलेख 'दि डेथ ऑफ दि ऑथर'' में हुई है। वह इस परंपरागत अवधारणा को खंडित करता है कि कृतिकार पाठ का उत्स है अथवा अर्थ का उद्‌गम है। वह रचना की व्याख्या और टीका का एकमात्र अधिकार कृतिकार को ही है। बार्थ का आग्रह था कि पाठक पाठ की अर्थोत्पत्ति की प्रक्रिया में बराबर की भागीदारी के लिए स्वतंत्र है। वह बिना किसी कोड के अर्थ के किसी भी तंत्र से पाठ को संबंद्‌ध करने और कृतिकार के अभिप्राय की उपेक्षा करने में पूर्णतः स्वतंत्र है। बार्थ का कहना है कि पाठ का 'अर्थ-बाहुल्य' अलघुकरणीय है और इसका कारण उसकी संदर्भपरकता, लाक्षणिक प्रयोग एवं पदमैत्रियाँ हैं, जो एक पाठ में दूसरे पाठों के साथ पाई जाती हैं। बार्थ इस संबंध को 'अंतर्पाठ' (INTERTEXTS) कहता है, जिसमें कोई भी पाठ स्थित होता है। यह संदर्भों से गुँथा हुआ होता है बिना उदाहरण चिह्नों के जिसकी प्रति ध्वनि पंक्तियों के मध्य गूँजती रहती है। यही कारण है कि पाठ की कोई दो परते एक जैसी नहीं होती, क्योंकि पाठ कई दूसरे पाठों के साथ घुला-मिला रहता है। बार्थ यह भी कहता है कि कृतिकार अथवा उसके अभिप्राय का अर्थोत्पत्ति की प्रक्रिया में कोई हस्ताक्षेप नहीं। इस विषय में बार्थ की प्रसिद्‌ध सूक्ति है कि 'पाठ अपने पिता के हस्ताक्षर के बिना पढ़ा जाता है।'

- **स्व-मूल्यांकन (ग)**

प्रिय विद्‌यार्थियों। निम्नलिखित प्रश्नों के उत्तर सही या गलत चिन्ह देकर आप अभी तक प्राप्त ज्ञान का मूल्यांकन करे।

(1) रोलॉ बार्थ की समय सीमा 1915-1980 है। ( )

(2) रोलॉ बार्थ एक कुशाग्रबुद्‌धि, विद्रोही स्वभाव का समीक्षक था। ( )

(3) रोलॉ बार्थ ने अपनी आत्मकथा-रोलैंड बार्थेस 1958 में लिखी। ( )

(4) पांचवे दशक में रोलॉ बार्थ द्‌वारा नव्य फ्रांसीसी स्कूल की स्थापना की गेई।( )

(5) रोल़ॉ बार्थ ने साहित्य को संकेतों की व्यवस्था माना है। ( )

(6) व्याख्यात्कम (निर्वचनात्मक) संकेत मूलभूत जिज्ञासा से सम्बंधित नहीं है। ( )

(7) अर्थगत कोड कृति, चरित्र अथवा आख्यान के निहीत अर्थों से सम्बंधित है जो विशिष्ट संकेतों से अदभूत होतें है। ( )

(8) प्रतीकात्मक कोड अर्थ के दो ध्रवों के अंतर एवं ऐंटिथिसिस को सामने लाता है। ( )

(9) क्रियात्मक कोड कर्म कोड है, ये किसी भी प्रकार छोटे-बड़े अथवा दोनों प्रकार के हो सकते हैं जो रचना में पाए जाते है। ( )

(10) सांस्कृतिक कोड उन सारे संदर्भों को समेत लेते है जो ज्ञान में वृद्धि करते है। ( )

(11) रोलॉ बार्थ ने पाठ की संरचना प्रक्रिया में व्यवस्थीकरण पर बल नहीं दिया है। ( )

(12) संरचनावाद में आलोक कलाकृति को अपनी पढ़त से अर्थ देता है। ( )

(13) रोलॉ बार्थ की उत्तर-संरचनावादी विचारणा की श्रेष्ठता उसके संक्षिप्त आलेख डेथ ऑफ ऑथर में हुई है। ( )

(14) बार्थ का आग्रह था कि पाठक पाठ को अर्थोत्पति की प्रक्रिया में बराबर की भागीदारी के लिए स्वतंत्र है। ( )

(15) बार्थ यह भी कहता है कि कृतिकार अथवा उसके अभिप्राय का अर्थोत्पति की प्रक्रिया में कोई हस्तक्षेप नहीं है। ( )

19.6 सारांश :

इस प्रकार कहा जा सकता है कि अधुनातन संरचनावादियों में समाजशास्त्री नेतृत्व विज्ञानी रोलॉ बार्थ का स्थान प्रमुख है क्योंकि इन्होंने सॉस्यूर की अवधारणा को विस्तार तो दिया ही इसके अतिरिक्त संस्कृति को भी भाषा माना तथा संस्कृति धर्मी साहित्य की व्याख्याएँ संभव की। उनके अनुसार आधुनिक 'संस्कृति' की संरचना भी भाषा की तरह है। भाषा के संस्कृतिमूलक चिह्नों को चुनकर संरचना की दृष्टि से विश्लेषित-विवेचित किये जा सकते हैं। संरचनावाद के सूत्रों को समझाने के लिए उन्होंने 'दि फैशन सिस्टम' नामक पुस्तक लिखी। उनके अनुसार - 'संरचना के बाहर बोध नहीं। अर्थ लेखक के पास नहीं होता पाठ में, पाठ की संरचना में निहित रहता है। बार्थ पाठ को फैलाने के पक्षधर हैं। शब्द, पद, वाक्य, मुहावरा आदि से पाठ की संरचना होती है। साहित्य निर्माण में जो पाँच नियम काम करते हैं - व्याख्या, चिह्न संहिता, प्रतीकात्मकता, क्रिया व्यापार, सांस्कृतिकता - ये पांचों नियम ही एक ऐसा जाल बनाते हैं जिसमें होकर सारा पाठ गुज़रता है। उस प्रक्रिया की पकड़ ही संरचनावाद है। इसी के आधार पर बार्थ ने

'अंतर्पाठीयता' को जन्म दिया। जो उत्तर संरचनावाद का एक महत्वपूर्ण तत्व है। अतः रोलाँ बार्थ की स्थिति संरचनावादी एवं उत्तर संरचनावादी विचारकों के मध्य एक ऐसी कड़ी जैसी है जिसने शास्त्रीय संरचनावाद की वैज्ञानिक वस्तुपरकता पर कई प्रश्न उठाए, उसके अधिनायकत्व को ललकारा और वैचारिक स्फूर्ति का नव्य मार्ग प्रशस्त किया। उसकी इस नवअर्थमूलक अभिवृत्तियों को ही उत्तर संरचनावाद से अभिहित किया गया।

19.7 कठिन शब्द:

कठिन शब्द

(1) व्याख्यान - किसी विषय पर अपने विचार प्रस्तुत करना।
(2) व्यापक - विस्तृत।
(3) वाक - शब्द, वाणी।
(4) सम्मुख - सामने, समक्ष।
(5) उपस्थित - विद्यमान, मौजूद।
(6) सम्बंध - जुड़ना या मिलना।
(7) अवधारणा - धारणा या विचार।
(8) मानसिक - मन सम्बधी।
(9) सहायक - सहायता करने वाला।
(10) विश्लेषण - परीक्षण, छानबीन।
(11) निहित - स्थापति।
(12) निर्मित - रचा हुआ, बनाया हुआ।
(13) वास्तविकता - यथार्थ, ठीक।
(14) सक्रिय - क्रियाशील।
(15) प्रशस्ति - प्रशंसा, तारीफ।

19.8 अभ्यासार्थ प्रश्न

प्रश्न- फर्निनाद+ डी सॉस्यूर का जीवन परिचय देते हुए उनके संरचनावादी विश्लेषण को स्पष्ट करें।

उत्तर- ....

....

....

प्रश्न- रोलॉ बार्थ द्वारा साहित्यिक अध्ययन के लिए पाँच प्रमुख संकेतों को साहित्य पाठ में ढूँढने का प्रयास किया गेया। ये कोड कौन से है स्पष्ट करे।

उत्तर- ....

....

....

19.9 उत्तर कुंजी

- **स्व-मूल्यांकन (क)**

1) (क) 1857-1913	2) (ख) स्विस भाषा
3) (ग) जेनेवा विश्वविद्‌यालय	4) (क) 1916
5) (ख) 1959	6) (ख) मस्तिष्क
7) (घ) संकेतित	8) (क) दो
9) (ग) दोनो	10) (घ) लांग
11) (ख) पैरोल	12) (क) चालर्स फ्रीज

- **स्व-मूल्यांकन (ख)**

1) क्रियान्वित	2) संकेत-तंत्र	3) शब्द
4) सांस्कृतिक	5) दिशाओं	6) विन्यासक्रमी
7) समकालिक	8) आत्मनिर्भर	9) भाषिक
10) ध्वन्यात्मक	11) संरचनावाद	12) क्रांतिकारी

- **स्व-मूल्यांकन (ग)**

1) सही	2) सही	3) गलत
4) सही	5) सही	6) गलत
7) सही	8) सही	9) सही
10) सही	11) गलत	12) सही
13) सही	14) सही	15) सही

19.10 पठनीय पुस्तकें

1. पाश्चात्य काव्य शास्त्र- देवेन्द्रनाथ शर्मा, नेशनल पेपरबैक्स, 2023
2. पाश्चात्य साहित्य चिंतन, प्रो. निर्मला जैन, राधाकृष्ण प्रकाशन, 2017
3. उदात्त के विषय में, डॉ. निर्मला जैन, वाणी प्रकाशन, दिल्ली, 2004
4. पाश्चात्य काव्य शास्त्र की परम्परा, सं. डॉ. नागेन्द्र और सावित्री सिन्हा
5. काव्य में उदात्त तत्व, डॉ. नगेन्द्र और नमिजन्द्र जैन, राजपाल एवं संस, दिल्ली

पाश्चात्य काव्यशास्त्र के सम्पूर्ण पाठ्यक्रम पर आधारित प्रश्न

रूपरेखा

20.1 उद्देश्य एवं अपेक्षित परिणाम

20.2 प्रस्तावना

20.3 स्व-मूल्यांकन (क)

20.4 स्व-मूल्यांकन (ख)

20.5 स्व-मूल्यांकन (ग)

20.6 लघु उत्तरापेक्षी प्रश्न

20.7 अति उत्तरापेक्षी प्रश्न

20.8 उत्तर कुंजी

20.1 उद्देश्य एवं अपेक्षित परिणाम

प्रस्तुत पाठ का उद्देश्य आपको सम्पूर्ण पाठ्यक्रम पर आधारित प्रश्नों से अवगत करवाना है।

अपेक्षित परिणाम:- प्रस्तुत पाठ में आप अपनी परीक्षा से संबंधित प्रश्नों के उत्तर दें सकेंगे ।

20.2 प्रस्तावना

प्रस्तुत अध्याय में सम्पूर्ण पाठ्यक्रम पर आधारित बहुविकल्पीय प्रश्न, रिक्त स्थान, सही या गलत, लघु उत्तरपेक्षी प्रश्न तथा अति लघु उत्तरापेक्षी प्रश्नों द्वारा विद्यार्थी के ज्ञान का निरीक्षण होगा।

20.3 स्व-मूल्यांकन (क)

प्रिय विद्यार्थियो! निम्नलिखित बहुविकल्पीय प्रश्नों के उत्तर करें।

1. प्लेटो का समय क्या माना जाता है?

   क) 427 ई. पू. - 347 ई. पू. ख) 420 ई. पू. - 340 ई. पू.

   ग) 400 ई. पू. - 300 ई. पू. घ) इनमें से कोई नहीं

2. 'द रिपब्लिक' (The Republic) नामक ग्रंथ के लेखक हैं।

क) ड्राइडन   ख) प्लेटो

ग) अरस्तू   घ) क्रोचे

3. 'द स्टेटसमैन' (The Statesman) नामक ग्रंथ किसने लिखा है?

क) एम.के. गांधी   ख) अरस्तू

ग) टी.एस. इलियट   घ) प्लेटो

4. "भारतीय साहित्यशास्त्र में विभिन्न काव्य-सिद्धान्तों का उद्भव, विकास व प्रचलन हुआ, उसी तरह पाश्चात्य काव्य-सिद्धान्तों की धारणाएँ निर्धारित हुई"। पाश्चात्य काव्य सिद्धान्त की धारणा किस शताब्दी में हुई?

क) दूसरी-तीसरी ईसा पूर्व शताब्दी

ख) तीसरी-चौथी ईसा पूर्व शताब्दी

ग) पांचवी-छठी ईसा पूर्व शताब्दी

घ) छठी-सातवीं ईसा पूर्व शताब्दी

5. प्लेटो प्राचीन यूनान के प्रसिद्ध दार्शनिक थे। वे साहित्य, दर्शन, विज्ञान और गणित के प्रकाण्ड विद्वान थे। उन्होंने अपने किस ग्रंथ में यूनानी जीवन, आचार-विचार आदि के विषय में सूक्षम वर्णन किया है?

क) द लाज   ख) प्रोटागोरस

ग) द रिपब्लिक   घ) क्रैटिलस

6. अरस्तू के गुरु का क्या नाम था?

क) अरिस्टोरल   ख) प्लेटो

ग) क्रोचे   घ) दांडायन

7. अरस्तू का समय है-

क) 374 ई. पू. - 322 ई. पू.   ख) 370 ई. पू. - 320 ई. पू.

ग) 380 ई. पू. - 322 ई. पू.   घ) इनमें से कोई नहीं

8. कौन-सी रचना अरस्तू की है?

क) Poetics   ख) The Republic

ग) The Statesman   घ) ये सभी

9. विरेचन सिद्धान्त के जन्मदाता हैं?

क) क्रोचे   ख) प्लेटो

ग) अरस्तू   घ) रिचर्डस

10. अरस्तू प्रसिद्ध यूनानी दार्शनिक प्लेटो के शिष्य थे। उनका समय काल रहा है।

क) 364 ई.पू. से 321 ई. पू. ख) 384 ई.पू. से 322 ई. पू.

ग) 370 ई.पू. से 340 ई. पू. घ) 360 ई.पू. से 310 ई. पू.

11) विरेचन सिद्धान्त का जन्मदाता है

क) क्रोचे ख) प्लेटो

ग) अरस्तू घ) रिचर्डस

12) लोंजाइनस के अनुसार उदात्त का प्रमुख स्रोत क्या है?

क) विचार ख) प्रकृति

ग) भावप्रवणता घ) अलंकार योजना

13) काव्य में उदात्त तत्व की अवधारणा का सूत्रपात करने का श्रेय है?

क) रिचर्डस को ख) लोंजाइनस को

ग) टी.एस. ईलियट को घ) क्रोचे को

14) 'On the sublime' नाम पुस्तक का सम्बन्ध है-

क) लोंजाइनस से ख) अरस्तू से

ग) क्रोचे से घ) प्लेटो से

15) आधुनिक अंग्रेजी आलोचना के जनक जॉन ड्राइडन का समय कब से कब तक माना जाता है?

क) 1631 से 1700 तक ख) 1633 से 1704 तक

ग) 1635 से 1705 तक घ) 1638 से 1706 तक

16) पाश्चात्य काव्यशास्त्र के अन्तर्गत किस आलोचक को नवशास्त्रवादी आलोचक के रूप में जाना जाता है?

क) प्लेटो ख) अरस्तू

ग) जॉन ड्राइडन घ) उपर्युक्त सभी

17) 'चरित्रवान व्यक्ति ही उदात्त रचनाएं दे सकता हैं'' यह विचार है-

क) क्रोचे का ख) शुक्ल जी का

ग) लांजाइनस का घ) आई.ए.रिचर्डस का

18) किस आलोचक ने काव्य को जीवन की आलोचना और व्याख्या के रूप में देखा?

क) मैथ्यू अर्नाल्ड ख) अरस्तू

ग) लोंजाइनस घ) प्लेटो

19) विरेचन मूलतः किस शास्त्र से सम्बन्धित है?

क) दर्शनशास्त्र से ख) चिकित्साशास्त्र से

ग) साहित्यशास्त्र से घ) काव्यशास्त्र से

20) लोंजाइनस ने औदात्य का मूल आधार माना है?

क) प्रति भा को ख) स्वयं प्रकाश ज्ञान को

ग) विषय को घ) कवि चमत्कार को

20.4 स्व-मूल्यांकन (ख)

प्रिय विद्यार्थियो! अभी तक प्राप्त ज्ञान का मूल्यांकन आप निम्नलिखित रिक्त स्थान भरकर करें। यह स्व-मूल्यांकन आपके अध्ययन को सार्थक करेगा।

1. कल्पना-तत्व, बुद्धि तत्व तथा ------ तत्व भाषा के भाव-पक्ष या विषय-वस्तु से संबंधित है।
2. शैली तत्व का संबंध अभिव्यक्ति-पक्ष या ------ पक्ष से है।
3. ------ के अनुसार काव्यभाषा जनसाधारण की भाषा हो तथा छ्दोबद्ध रचना तथा गद्य की भाषा से न हो कोई तात्विक अंतर होता है न ही हो सकता है।
4. 'Preface to Lyrical Ballads'------ की कृति है।
5. ''ग्रामीण भाषा में काव्य की गहन अनुभूतियों को व्यक्त करने की क्षमता नहीं होती।'' यह कथन है ------।
6. सैमुअल टेलर कॉलेरिज एक प्रतिभा सम्पन्न कवि एवं ------ के रूप में विख्यात है।
7. सम्प्रेषणीयता का सिद्धान्त ------ ने पाश्चात्य काव्यशास्त्र में दिया।
8. क्रोचे ने 'सौन्दर्यवाद' की परिकल्पना करते हुए उनके ------ स्तर बताए हैं।
9. निर्वैयक्तिकता का सिद्धान्त ------ ने दिया है।
10. कला को सहजानुभूति ------ ने माना है।
11. आदिम आवेगों (इम्प्रेस) की सत्ता से ------ ने स्वीकार किया है।
12. रिचर्डस का सम्प्रेषण सिद्धान्त भारतीय काव्य शास्त्र के ------ सिद्धान्त से मेल खाता है।
13. क्रोचे का समय (जीवन काल) ------ है।
14. 'कला का मूल्य सिद्धांत' के जन्मदाता ------ हैं।
15. रिचर्डस ने भाषा का ------ भेद नहीं माना है।

16. लोंजाइनस ने रचना में औदात्य का संचार करने वाले ------ तत्व माने हैं।
17. स्वयं प्रकाश ज्ञान का सम्बन्ध ------ से है।
18. सम्प्रेषणीयता का सिद्धान्त पाश्चात्य काव्यशास्त्र में ------ ने दिया है।
19. वस्तुनिष्ठ सहसम्बन्ध का उल्लेख ------ ने दिया है।
20. औदात्य के ------ स्त्रोतों का उल्लेख लोंजाइनस ने किया है।

20.5 स्व-मूल्यांकन (ग)

प्रिय विद्यार्थियो! आगे बढ़ने से पहले थोड़ा और अधिक ज्ञान अर्जित करें उसके बाद सॉस्यूर निम्नलिखित प्रश्नों के उत्तर सही या गलत चिन्ह द्वारा देकर अभी तक प्राप्त ज्ञान का स्व-मूल्यांकन करें।

1. अस्तित्वाद सोरेन कीर्के गार्ड का है। ( )
2. 'अस्तित्व' का सामान्य कोशगत अर्थ है- जीवन, मौजूदगी, वजूद, विद्यमानता, सत्ता, हस्ती। ( )
3. कॉलरिज के द्वारा प्रतिस्थापित गौण कल्पना को काव्यात्मक कल्पना नहीं कहते हैं। ( )
4. फ्रायड के मनोविश्लेषणात्मक सिद्धान्तों के अनुसार प्रवृत्तियों पर अंकुश रखने से व्यक्तित्व में अनेक अस्वाभाविक प्रवृतियाँ विकसित हो जाती हैं। ( )
5. यथार्थ एक ऐसा तत्व है जिसका अर्थ सत्य तथा वास्तविकता से जोड़ा जा सकता है। ( )
6. उत्तर आधुनिकता का प्रथमतः प्रयोग 1926 में बर्नाड इडिंम्सबेल की पुस्तक 'पोस्टमार्डनिस्म एण्ड अदर एसेस' में हुआ है। ( )
7. संरचना शब्द मूल्तः फ्रेंच के 'स्त्रेकतर' और लातीनी शब्द 'स्त्राऐर' से विकसित अंग्रेजी भाषा के 'स्ट्रक्चर' का हिन्दी अनुवाद नहीं है। ( )
8. संरचनावाद केवल एक पद्धति ही नहीं है, इसमें दार्शनिकता का भी पर्याप्त अंश है।( )
9. यथार्थवाद संसार में व्याप्त कलुष और मलिनता पर पर्दा नहीं डालता, अपितु उसका यथार्थ चित्रण करता है। ( )
10. फ्रायड के मनोविश्लेषणात्मक सिद्धान्तों के अनुसार सभी आदर्श खोखले हैं, चेतन की अपेक्षा अवचेतन और अचेतन कहीं अधिक महत्वपूर्ण है। ( )

11. उत्तर आधुनिकता शब्द 1948 ई. के बाद से नृत्य, शैली चित्रकला, भवन निर्माण, फिल्म निर्माण, राजनीति, समाजशास्त्र, कविता, कहानी संगीत आदि सब विधाओं में तरह तरह से प्रयुक्त हुआ है। ( )
12. संरचनावाद के बीज तत्व फांस रूपवाद में है। ( )
13. संरचनावाद में भाषा संरचना पर बल दिया जाता है और संरचना वाले विश्लेषण की मूल-धारणा का संकल्प सॉस्यूर में ही प्राप्त होता है।
14. वाक भाषा की बड़ी इकाई है जो मूर्त है। ( )
15. रोला बार्थ ने सॉस्यूर द्वारा स्थापित भाषा वैज्ञानिक साहित्यिक विश्लेषण के सिद्धांतों को ग्रहण किया और उन्हें संकेत-विज्ञान से जोड़कर ग्रहणीय बनाया। ( )
16. यथार्थ के बारे में शिव कुमार कहते हैं- "कला के अन्तर्गत स्थान पाने वाला यथार्थ, बाह्य यथार्थ से विशिष्ट होते हुए भी अंततः उसीक का अविछिन्न अंग है। ( )
17. अभिव्यंजना का मूल उद्देश्य प्रकाशन ही नहीं, संप्रेषण भी है। ( )
18. टी.एस. इलियट का जन्म 26 सितम्बर 1889 ई. को हुआ।( )
19. कॉलेरिज जिन सिद्धान्तों का प्रति पादय करता है, उनके अनुसार कलाकृति का मूल्य वही है जो उसकी कला में निहित है। ( )
20. मैथ्यू अर्नाल्ड उस यथार्थ के चित्रण को महत्व नहीं देता जो कुरुप है और जिसका मानव-मन पर श्रेष्ठ प्रभाव नहीं होता।( )

20.6 लघु उत्तरापेक्षी प्रश्न

1. प्लेटो कौन थे? उनके विषय में संक्षिप्त विवरण दें।

उत्तर) --

----

2. प्लेटो की कृतियों के नाम लिखें।

उत्तर) --

----

3. अरस्तू के अनुसार, मानव जीवन का उद्देश्य क्या है?

उत्तर) --

----

4. अरस्तू के अनुकरण सिद्धांत का क्या अर्थ है?

उत्तर) --

----

5. अरस्तू के काव्य प्रयोजन पर संक्षिप्त नोट लिखें।

उत्तर) --

----

6. प्लेटो की त्रासदी संबंधी अवधारणा पर विचार प्रस्तुत करें।

उत्तर) --

----

7. जॉन ड्राइडन के जीवन परिचय पर संक्षिप्त प्रकाश डालें।

उत्तर) --

----

8. मैथ्यू अर्नाल्ड के काव्य प्रयोजन का संक्षिप्त विवरण दें।

उत्तर) --

----

9. उत्तर आधुनिकता के संदर्भ में विचार की मृत्यु पर अपने विचार व्यक्त करें।

उत्तर) --

----

10. फर्निनाद डी सॉस्यूर का जीवन परिचय लिखें।

अति लघु उत्तरापेक्षी प्रश्न

1. पाश्चात्य काव्यशास्त्र का आरंभ कहाँ से हुआ?

उत्तर) --

----

2. अरस्तू ने काव्य के किस सिद्धांत पर जोर दिया?

उत्तर) --

----

3. प्लेटो ने काव्य के लिए महत्वपूर्ण माना?

उत्तर) --

----

4. 'उदात्त' का सिद्धांत किसने प्रतिपादित किया?

उत्तर) --

----

5. सैमुअल टेलर कॉलेरिज का जन्म कब हुआ?

उत्तर) --

----

6. सिग्मंड फ्रायड के सिद्धांत का नाम लिखें।

उत्तर) --

----

7. स्वच्छदतावाद के प्रमुख आलोचकों में से एक कौन था?

उत्तर) --

----

8. फर्निनाद डी. सॉस्यूर का जन्म कब हुआ?

उत्तर) --

----

9. वड्स्वर्थ के मित्र कौन थे?

उत्तर) --

----

10. 'बायोग्राफिया लिटरेरिया' किसकी रचना है?

उत्तर) --

20.8 उत्तर कुंजी

स्व-मूल्यांकन (क)

1.	427 ई. पू. - 347 ई.पू.	2.	प्लेटो
3.	प्लेटो	4.	तीसरी-चैथी ईसा पूर्व शताब्दी
5.	द रिपब्लिक	6.	प्लेटो
7.	374 ई. पू. 322 ई. पू.	8.	Poetics
9.	अरस्तू	10.	384 ई. पू. से 322 ई. पू. तक
11.	अरस्तू	12.	विचार
13.	लोंजाइनस	14.	लोंजाइनस
15.	1631 से 1700 तक	16.	जॉन ड्राइडन
17.	लोंजाइनस	18.	मैथ्यू अर्नाल्ड
19.	चिकित्साशास्त्र	20.	प्रति भा

स्व-मूल्यांकन (ख)

1.	भाव	2.	कला
3.	वडर्सवर्थ	4.	वडर्सवर्थ
5.	कालेरिज	6.	समालोचक
7.	आई.ए. रिचर्डस	8.	चार
9.	ईलियट	10.	क्रोचे
11.	रिचर्डस	12.	साधारणीकरण
13.	1866-1952	14.	आई.ए.रिचर्डस
15.	लक्षणा	16.	पाँच
17.	अभिव्यंजनावाद	18.	आई.ए. रिचर्डस
19.	टी.एस. इलियट	20.	पांच

स्व-मूल्यांकन (ग)

1.	सही	2.	सही
3.	गलत	4.	सही
5.	सही	6.	सही
7.	गलत	8.	सही
9.	सही	10.	सही
11.	सही	12.	गलत

13.	सही	14.	गलत
15.	सही	16.	सही
17.	सही	18.	गलत
19.	सही	20.	सही